जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

द्वितीय सत्र का निर्धारित पाठ्यक्रम

लेखन एवं सङ्कलन :
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून
एवं
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

ॐ

॥ परमात्मने नमः ॥

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन ग्रन्थमाला, पुष्प-9

जैन-सिद्धान्त प्रवेशरत्नमाला

द्वितीय सत्र का निर्धारित पाठ्यक्रम

लेखन एवं सङ्कलन :
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन
'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उ०प्र०)

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर-जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून
एवं
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

पाँचवाँ संस्करण : 1100 प्रतियाँ (सम्पादित)
(दशलक्षण महापर्व के पावन अवसर पर प्रकाशित, मंगलवार, 03 सितम्बर 2019)

मूल्य -

— मुमुक्षुता की प्रगटता अथवा भावना/संकल्प ही
इस पुस्तक का उचित मूल्य है।

Available At -

— **TEERTHDHAM MANGALAYATAN**
Aligarh-Agra Road, Sasni-204216, Hathras (U.P.)
www.mangalayatan.com; info@mangalayatan.com

— **TEERTHDHAM CHIDAYATAN**
Dusari Nasiyan se Aage, Hastinapur, Distt. Meerut-250404 (U.P.)
Shri Mukeshchand Jain, Mob, 9837079003

— **SHRI KUNDKUND KAHAN DIG. JAIN SWADHYAY MANDIR**
29, Gandhi Road, Dehradun-248001 (Uttarakhand)
Ph. : 0135 - 2654661 / 2623131

— **AZAD TRADING COMPANY**
Jain Mandir ke Neeche, Lal Kauyan, Bulandshahar-203001 (U.P.)
Ph. : 9897096781

— **SHREE KUNDKUND-KAHAN PARMARTHIK TRUST**
302, Krishna-Kunj, Plot No. 30,
Navyug CHS Ltd., V.L. Mehta Marg,
Vile Parle (W), Mumbai - 400056
e-mail : vitragva@vsnl.com / shethhiten@rediffmail.com

टाइप सेटिंग :
मङ्गलायतन ग्राफिक्स, अलीगढ़

मुद्रक :
मङ्गलायतन मुद्रणालय, अलीगढ़

प्रकाशकीय

जगत के सब जीव, सुख चाहते हैं और दु:ख से भयभीत हैं। सुखी होने के लिये, जिनवचनों को समझना अत्यन्त आवश्यक है, इसी प्रयोजन हेतु जिनधर्म में प्रवेश पाने के इच्छुक छात्रों/मङ्गलार्थियों को आगमानुसार, जिनधर्म की शिक्षा प्रदान कर, भविष्य को शाश्वत सुख की ओर अग्रसर करने का प्रयास किया जा रहा है। जिनधर्म के रहस्यों के उद्घोषक अध्यात्म युगपुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की शरण में रहकर, पूज्य पण्डितश्री कैलाशचन्द्रजी जैन ने समग्र जिनशासन के जिन मूलभूत सिद्धान्तों को सीखा, उन्हें 'जैन-सिद्धान्त प्रवेशरत्नमाला' के आठ भागों में गुंथित किया, जो जिनधर्म में प्रवेश पाने के लिये, अत्यन्त प्रयोजनभूत है। जैनधर्म के प्राणभूत जानकर, विद्यार्थियों की प्रारम्भ से लेकर बारहवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों के लिये यह पाठ्यक्रम में शामिल करने का निर्णय, विद्वानों की एक बैठक में लिया गया। ***मङ्गलायतन*** में प्रायोजित इस बैठक में, बालब्रह्मचारिणी बहिन कल्पना जैन, सागर/जयपुर; श्रीमती बीना जैन, देहरादून; पण्डित अशोक लुहाड़िया, भूतपूर्व निदेशक; पण्डित सचिन जैन, पण्डित सुधीर जैन, निदेशक; डॉ. सचिन्द्र जैन, प्राचार्य, भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, ***तीर्थधाम मङ्गलायतन,*** शामिल थे।

इस पाठ्यक्रम की सरलता, आत्मकल्याण हेतु महत्तानुसार सभी आध्यात्मिक विद्यालयों में प्रारम्भ कराने की ओर भी, हमारी भावना है।

सभी विद्यार्थी इन भागों में समाहित जिनधर्म की नींवरूप सिद्धान्तों को गम्भीरता से ग्रहणकर, अपने दृष्टि दोष दूरकर, आत्मानुभवता करें-यही मंगल भावना है।

निवेदक

प्रकाशक मण्डल

भूमिका

वीतरागी जिनेन्द्र परमात्मा का अनेकान्त-स्याद्वादमयी जिनशासन, चार अनुयोगमय है एवं जिनवाणी में अनेकान्तमय वस्तु का स्याद्वादशैली में प्रतिपादन किया गया है। आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने अनेकान्त को जिनेन्द्रभगवान का अलंघ्य शासन कहा है। इसलिए अनेकान्तमय वस्तु को जानकर, उसमें से सम्यक् एकान्तस्वरूप निज शुद्धात्मद्रव्य का अवलम्बन ही परम हितकारी है, इसलिए इस चौथे भाग में सर्व प्रथम अनेकान्त स्याद्वाद सम्बन्धी प्रश्नोत्तर दिये गये हैं।

आत्मा का हित मोक्ष ही है क्योंकि मोक्ष में आकुलता नहीं है; अत: निज चैतन्यस्वभावी भगवान आत्मा के आश्रय से मोक्षमार्ग प्रगट करना, प्रत्येक पात्र जीव का कर्तव्य है। अनादि काल से ही अज्ञानी जीव, शुभभावरूप पराश्रितभावों में मोक्षमार्ग की कल्पना करके अथवा शरीराश्रित क्रियाकाण्ड में मोक्षमार्ग मानकर, संसार परिभ्रमण का पात्र बना हुआ है; इसलिए दूसरे और तीसरे अध्याय में मोक्षमार्ग तथा मोक्षमार्ग सम्बन्धी प्रश्नोत्तरों का समावेश किया गया है; जिससे बन्धमार्ग में मोक्षमार्ग माननेरूप मिथ्याभ्रान्ति का अभाव होकर आत्मकल्याण का पथ प्रशस्त हो।

तत्त्वार्थसूत्र में जीवों के निज भावों का वर्णन करते हुए, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक एवं पारिणामिकभाव को जीव का स्वतत्त्व कहा गया है। इन भावों का स्वरूप पहचानकर, उपादेयभूत निज परमपारिणामिकभाव के अवलम्बन से, सर्व प्रथम औपशमिक, धर्म का क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव प्रगट करना पात्र जीवों का कर्तव्य है। यद्यपि औदयिकभाव भी जीव की पर्याय में होता है, तथापि आकुलतामय होने से उसे हेय कहा गया है। इन सभी पंच भावों पर उपयोगी प्रश्नोत्तरों का समावेश भी इस पुस्तक में किया गया है।

पण्डित राजमलजी द्वारा रचित पंचाध्यायी ग्रन्थ अध्यात्म के सूक्ष्म एवं गम्भीर रहस्यों से भरपूर है। इसमें द्रव्य-गुण-पर्याय; निश्चय-व्यवहार आदि

नय; जीवों के पाँच भाव; सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का स्वरूप अत्यन्त सूक्ष्मता से प्रतिपादित किया गया है। अत: पात्र जीवों के लिये उपयोगी जानकर, इस ग्रन्थ के आधार पर प्रश्नोत्तरों का संकलन अन्त में परिशिष्टरूप से दिया गया है।

यहाँ यह विशेष उल्लेखनीय है कि वर्तमान दिगम्बर जैन समाज में उक्त समस्त विषयों की चर्चा का उदय पूज्य गुरुदेवश्री की अध्यात्म क्रान्ति से ही हुआ है। पूज्य गुरुदेवश्री ने अपने प्रवचनों में जैन सिद्धान्तों का आत्महितकारी स्वरूप स्पष्ट करते हुए, निरन्तर आत्मकल्याण की पावन प्रेरणा भी प्रदान की है। इस उपकार के लिये पूज्य गुरुदेवश्री के चरणों में सादर वन्दन समर्पित करता हूँ।

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन एवं समादरणीय श्री रामजीभाई दोशी, श्री खीमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं के समय ही मैं इन विषयों को प्रश्नोत्तररूप से आत्महितार्थ लिखता रहा हूँ, जिसे देहरादून मुमुक्षु मण्डल ने अब तक तीन बार प्रकाशित किया है। अब यह चौथा संस्करण मेरी भावना के अनुरूप सम्पादित होकर प्रकाशित किया जा रहा है, जिसकी मुझे प्रसन्नता है।

हे जीवों! यदि आत्महित करना चाहते हो तो समस्त प्रकार से परिपूर्ण निज आत्मस्वभाव की रुचि और विश्वास करो। देहादि से सर्वथा भिन्न ज्ञानस्वरूप निज आत्मा का निर्णय करना ही सम्पूर्ण जिनशासन का सार है क्योंकि जो जीव, देहादि से भिन्न ज्ञान-दर्शनस्वभावी आत्मा का आश्रय लेते हैं, वे मोक्षमार्ग प्राप्त कर मोक्ष को चले जाते हैं और जो देहादि में ही अपनेपने का श्रद्धान-ज्ञान-आचरण करते हैं, वे चारों गतियों में घूमकर निगोद में चले जाते हैं।

सभी जीव इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किये गये प्रश्नोत्तरों का बारम्बार अभ्यास करके, आत्महित के मार्ग में प्रवर्तमान हों - इसी भावना के साथ-

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

अलीगढ़

अध्यात्मयुगसृष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी
(संक्षिप्त जीवनवृत्त)

भारत की वसुन्धरा, अनादि से ही तीर्थङ्कर भगवन्तों, वीतरागी सन्तों, ज्ञानी-धर्मात्माओं एवं दार्शनिक / आध्यात्मिक चिन्तकों जन्मदात्री रही है। इसी देश में वर्तमान काल में भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर तक चौबीस तीर्थङ्कर हुए हैं। वर्तमान में भगवान महावीर के शासनकाल में धरसेन आदि महान दिगम्बर सन्त, श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य आदि महान आध्यात्मिक सन्त, इस पवित्र जिनशासन की पताका को दिगदिगन्त में फहराते रहे हैं।

वर्तमान शताब्दी में जिनेन्द्रभगवन्तों, वीतरागी सन्तों एवं ज्ञानी धर्मात्माओं द्वारा उद्घाटित इस शाश्वत् सत्य को, जिन्होंने अपने प्रचण्ड पुरुषार्थ से स्वयं आत्मसात करते हुए पैंतालीस वर्षों तक अविरल प्रवाहित अपनी दिव्यवाणी से, इस विश्व में आध्यात्मिक क्रान्ति का शंखनाद किया – ऐसे परमोपकारी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी से आज कौन अपरिचित है! पूज्य गुरुदेवश्री ने क्रियाकाण्ड की काली कारा में कैद, इस विशुद्ध जिनशासन को अपने आध्यात्मिक आभामण्डल के द्वारा न मुक्त ही किया, अपितु उसका ऐसा प्रचार-प्रसार जिसने मानों इस विषम पञ्चम काल में तीर्थङ्करों का विरह भुलाकर, भरतक्षेत्र को विदेहक्षेत्र और पञ्चम काल को चौथा काल ही बना दिया।

भारतदेश के गुजरात राज्य में भावनगर जनपद के 'उमराला' गाँव में स्थानकवासी सम्प्रदाय के दशाश्रीमाली वणिक परिवार के श्रेष्ठीवर्य श्री मोतीचन्दभाई के घर, माता उजमबा की कूख से विक्रम संवत् 1946 के वैशाख शुक्ल दूज, रविवार (दिनाङ्क 21 अप्रैल, सन् 1890 ईस्वी) प्रातःकाल इन बाल महात्मा का जन्म हुआ।

सात वर्ष की वय में लौकिक शिक्षा लेना प्रारम्भ किया। प्रत्येक वस्तु के हृदय तक पहुँचने की तेजस्वी बुद्धिप्रतिभा, मधुरभाषीपना, शान्तस्वभाव, सौम्य व गम्भीर मुखमुद्रा, तथा निस्पृह स्वभाववाले होने से बाल 'कानजी' शिक्षकों तथा विद्यार्थियों में प्रिय हो गये। विद्यालय और जैन पाठशाला के अभ्यास में

प्राय: प्रथम नम्बर आता था, किन्तु विद्यालय की लौकिक शिक्षा से उन्हें सन्तोष नहीं होता था। अन्दर ही अन्दर ऐसा लगता था कि मैं जिसकी खोज में हूँ, वह यह नहीं है।

तेरह वर्ष की उम्र में माता के अवसान से, पिताजी के साथ पालेज जाना हुआ। चार वर्ष बाद पिताजी के स्वर्गवास के कारण, सत्रह वर्ष की उम्र में भागीदार के साथ व्यवसायिक प्रवृत्ति में जुड़ना हुआ। दुकान पर भी धार्मिक पुस्तकें पढ़ते थे। वैरागी चित्तवाले कहानकुँवर रात्रि के समय रामलीला या नाटक देखने जाते, तो उसमें से वैराग्यरस का घोलन करते थे। जिसके फलस्वरूप पहली बार सत्रह वर्ष की उम्र में उज्ज्वल भविष्य की अभिव्यक्ति करता हुआ, बारह लाईन के काव्य की रचना करते हैं — **शिवरमणी रमनार तूं, तूं ही देवनो देव।**

सत्य की शोध के लिए दीक्षा लेने के भाव से 22 वर्ष की युवा अवस्था में दुकान का परित्याग करते हैं, और गुरु के समक्ष आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार करते हैं, फिर 24 वर्ष की उम्र में (विक्रम संवत् 1970) में जन्मनगरी उमराला में 2000 साधर्मियों के विशाल जनसमुदाय की उपस्थिति में स्थानकवासी सम्प्रदाय की दीक्षा अंगीकार करते हैं। दीक्षा के समय हाथी पर चढ़ते हुए धोती फट जाती है, तीक्ष्ण बुद्धि के धारक कानजी को शङ्का होती है कि कुछ गलत हो रहा है।

विक्रम संवत् 1978 में महावीरप्रभु के शासन-उद्धार का और हजारों मुमुक्षुओं के महान पुण्योदय का सूचक एक मङ्गलकारी पवित्र प्रसङ्ग बनता है :

विधि के किसी धन्य क्षण में श्रीमद्भगवत् कुन्दकन्दाचार्यदेव रचित 'समयसार' नामक महान परमागम, गुरुदेवश्री के हस्तकमल में आता है और इन पवित्र पुरुष के अन्तर में से सहज ही उद्गार निकलते है — **'यह तो अशरीरी होने का शास्त्र है।'** समयसार का अध्ययन और चिन्तन करते हुए अन्तर में आनन्द और उल्लास प्रस्फुटित होता है एवं अन्तरंग जीवन में भी परम पवित्र परिवर्तन होता है। भूली पड़ी परिणति निज घर देखती है। तत्पश्चात् श्री प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, मोक्षमार्गप्रकाशक, द्रव्यसंग्रह, सम्यग्ज्ञानदीपिका

इत्यादि दिगम्बर शास्त्रों के अभ्यास से आपको नि:शंक निर्णय हो जाता है कि दिगम्बर जैनधर्म ही मूलमार्ग है और वही सच्चा धर्म है। इस कारण अन्तरंग श्रद्धा कुछ और तथा बाहर में वेष कुछ और — यह स्थिति आपको असह्य लगने लगती है। अत: अन्तरंग में अत्यन्त मनोमन्थन के पश्चात् सम्प्रदाय के परित्याग का निर्णय करते हैं।

परिवर्तन के लिये योग्य स्थल की शोध करते हुए सोनगढ़ आकर 'स्टार ऑफ इण्डिया' नामक एकान्त मकान में महावीर जन्मकल्याणक के दिवस, (चैत्र शुक्ल 13, संवत् 1991) दोपहर सवा बजे सम्प्रदाय का चिह्न, मुँहपट्टी का त्याग करते हैं और स्वयं घोषित करते हैं कि '**अब मैं स्थानकवासी साधु नहीं; मैं सनातन दिगम्बर जैनधर्म का श्रावक हूँ।**' सिंहवृत्ति के धारक इन महापुरुष ने 45 वर्ष की उम्र में महावीर्य उछाल कर यह अद्‌भुत पराक्रमी कार्य किया।

'स्टार ऑफ इण्डिया' में निवास करते हुए मात्र तीन वर्ष के दौरान ही जिज्ञासु भक्तजनों का प्रवाह दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया, जिसके कारण यह मकान एकदम छोटा पड़ने लगा। अत: भक्तों ने इन परम प्रतापी सत् पुरुष के निवास और प्रवचन का स्थल '**श्री जैन स्वाध्याय-मन्दिर**' का निर्माण किया। गुरुदेवश्री ने ज्येष्ठ कृष्णा 8, संवत् 1994 के दिन इस निवासस्थान में मंगल पदार्पण किया। यह 'स्वाध्यायमन्दिर' जीवनपर्यन्त इन महापुरुष की आत्मसाधना और वीरशासन की प्रभावना का केन्द्र बन गया।

यहाँ दिगम्बरधर्म के चारों अनुयोगों के छोटे बड़े 183 ग्रन्थों का गहनता से अध्ययन किया। उनमें से 38 ग्रन्थों पर सभा में प्रवचन किये। जिनमें श्री समयसार ग्रन्थ पर तो 19 बार अध्यात्म वर्षा की। प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, परमात्मप्रकाश, नियमसार, पंचास्तिकायसंग्रह, समयसार कलश-टीका इत्यादि ग्रन्थों पर भी बहुत बार प्रवचन किये हैं।

दिव्यध्वनि का रहस्य समझानेवाले और कुन्दकुन्दादि आचार्यों के गहन शास्त्रों के रहस्योद्‌घाटक इन महापुरुष की भवताप विनाशक अमृतवाणी को ईस्वी सन् 1961 से नियमितरूप से टेप में उत्कीर्ण किया गया, जिसके प्रताप से आज अपने पास नौ हजार से अधिक प्रवचन सुरक्षित उपलब्ध हैं। यह

मङ्गल गुरुवाणी, देश-विदेश के समस्त मुमुक्षु मण्डलों में तथा लाखों जिज्ञासु मुमुक्षुओं के घर-घर में गुंजायमान हो रही है। इससे इतना तो निश्चित है कि भरतक्षेत्र के भव्यजीवों को पञ्चम काल के अन्त तक यह दिव्यवाणी ही भव के अभाव में प्रबल निमित्त होगी।

इन महापुरुष का धर्म सन्देश, देश-विदेश के समस्त मुमुक्षुओं को नियमित उपलब्ध होता रहे, इस हेतु से विक्रम संवत् 2000 के मार्गशीष माह से (दिसम्बर 1943 से) **'आत्मधर्म'** नामक मासिक आध्यात्मिक पत्रिका का प्रकाशन सोनगढ़ से मुरब्बी श्री रामजीभाई माणिकचन्द दोशी के सम्पादकत्व में प्रारम्भ हुआ, जो वर्तमान में भी गुजराती एवं हिन्दी भाषा में नियमित प्रकाशित हो रहा है।

सोनगढ़ में विक्रम संवत् 1997 - फाल्गुन शुक्ल दूज के दिन नूतन दिगम्बर जिनमन्दिर में कहानगुरु के मङ्गल हस्त से श्री सीमन्धर आदि भगवन्तों की पञ्च कल्याणक विधिपूर्वक प्रतिष्ठा हुई। ईस्वी सन् 1941 से ईस्वीं सन् 1980 तक सौराष्ट्र-गुजरात के उपरान्त समग्र भारतदेश के अनेक शहरों में तथा अफ्रीका के नैरोबी में कुल 66 पञ्च कल्याणक तथा वेदी प्रतिष्ठा इन वीतरागमार्ग प्रवर्तक सत्पुरुष के पावन कर-कमलों से हुई।

श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा के निमित्त समग्र उत्तर और पूर्व भारत में मङ्गल विहार ईस्वी सन् 1957 और ईस्वी सन् 1967 में ऐसे दो बार हुआ। इसी प्रकार समग्र दक्षिण और मध्यभारत में ईस्वी सन् 1959 और ईस्वी सन् 1964 में ऐसे दो बार विहार हुआ।

दिनांक 28 नवम्बर 1980 शुक्रवार (मार्गशीष कृष्णा 7, संवत् 2037) के दिन ये प्रबल पुरुषार्थी आत्मज्ञ सन्त पुरुष देहादि का लक्ष्य छोड़कर, अपने ज्ञायक भगवान के अन्तरध्यान में एकाग्र हुए, अतीन्द्रिय आनन्दकन्द निज परमात्मतत्त्व में लीन हुए। सायंकाल आकाश का सूर्य अस्त हुआ, तब सर्वज्ञपद के साधक सन्त ने भरतक्षेत्र से स्वर्गपुरी में प्रयाण किया। वीरशासन को प्राणवन्त करके यहाँ से अध्यात्म युग सृजन कर गये।

अनुक्रमणिका

1.	छह कारक	3
2.	उपादान-उपादेय	57
3.	योग्यता - स्वरूप एवं लाभ	97
4.	निमित्तकारण - स्वरूप एवं प्रयोजन	105
5.	निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध :स्वरूप एवं प्रयोजन	122
6.	व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध :स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ	140
7.	आत्मा, निमित्त - नैमित्तिकभाव से भी.....	146
8.	मोक्षमार्ग	153
9.	मोक्षमार्ग सम्बन्धी प्रश्नोत्तर	198
10.	जीव के असाधारण पाँच भाव	225

ॐ

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

भाग - 2

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं।
णमो उव्ज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥1 ॥

मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैन धर्मोस्तु मंगलम् ॥2 ॥

आत्मा ज्ञान स्वयं ज्ञान, ज्ञानादन्यत्करोति किम्।
परभावस्य कर्तात्मा, मोहोऽयं व्यवहारिणाम् ॥3 ॥

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥4 ॥

उपादान निज शक्ति है जिय को मूल स्वभाव।
है निमित्त पर योग तें बन्यो अनादि बनाव ॥5 ॥

उपादान अरु निमित्त ये, सब जीवन पै वीर।
जो निज शक्ति सम्भाल ही सो पहुँचे भवतीर ॥6 ॥

देव गुरु दोनों खड़े किसके लागू पाँव।
बलिहारी गुरुदेव की भगवान दियो बताय ॥7 ॥

करुणानिधि गुरुदेव श्री दिया सत्य उपदेश।
ज्ञानी माने परख कर, करे मूढ़ संक्लेश ॥8 ॥

कविवर पण्डित बनारसीदास कृत

उपादान-निमित्त दोहा

शिष्य का प्रश्न :

गुरु उपदेश निमित्त बिन, उपादान बलहीन।
ज्यों नर दूजे पाँव बिन, चलवे को आधीन॥ 1॥

हो जाने था एक ही, उपादान सों काज।
थकै सहाई पौन बिन, पानी मांहि जहाज॥ 2॥

उपादान की ओर से उत्तर :

ज्ञान नैन किरिया चरण, दोऊ शिवमग धार।
उपादान निश्चय जहाँ, तहाँ निमित्त व्यवहार॥ 3॥

प्रथम प्रश्न का समाधान :

उपादान निजगुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय।
भेदज्ञान परमाण विधि, विरला बूझे कोय॥ 4॥

उपादान ही सर्वत्र बलवान है :

उपादान बल जहँ तहाँ, नहिं निमित्त को दाव।
एक चक्र सों रथ चले, रवि को यहै स्वभाव॥ 5॥

दूसरे प्रश्न का समाधान -

सधै वस्तु असहाय जहाँ, तहाँ निमित्त है कौन?
ज्यों जहाज परवाह में, तिरै सहज बिन पौन॥ 6॥

उपादान विधि निरवचन, है निमित्त उपदेश।
वसे जु जैसे देश में, धरे सु तैसे भेष॥ 7॥

1

छह कारक

प्रश्न 1- कारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो क्रिया का जनक हो, अर्थात् क्रिया को उत्पन्न करनेवाला हो, उसे कारक कहते हैं।

प्रश्न 2- छह कारक अधिकार में 'अधिकार' शब्द क्या बताता है ?

उत्तर - अपने त्रिकाली स्वभाव पर अधिकार माने तो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है और परवस्तुओं में या विकारीभावों में अपना अधिकार माने तो निगोद की प्राप्ति होती है। जो जीव, परवस्तुओं में या विकारीभावों में अपना अधिकार मानता है, उसे हजार बार धिक्कार, यह 'अधिकार' शब्द बताता है।

प्रश्न 3- कारक कौन कहला सकता है ?

उत्तर - जो किसी-न-किसी रूप में क्रिया - व्यापार के प्रति प्रायोजक होता है, कारक वही हो सकता है; अन्य नहीं।

प्रश्न 4- क्रिया शब्द के पर्यायवाची नाम क्या-क्या हैं ?

उत्तर - क्रिया को कर्म, अवस्था, पर्याय, हालत, दशा, परिणाम, परिणति भी कहते हैं।

प्रश्न 5- संसार में क्या देखा जाता है ?

उत्तर - कार्य देखा जाता है।

प्रश्न 6- कार्य से कितने प्रश्न उठते हैं ?

उत्तर - छह प्रश्न उठते हैं —

(1) किसने किया ? कर्ता। (2) क्या किया ? कर्म (3) किस साधन द्वारा किया ? करण। (4) किसके लिए किया ? सम्प्रदान। (5) किसमें से किया ? अपादान। (6) किसके आधार से किया ? अधिकरण।

प्रश्न 7- कारक कितने हैं और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - कारक छह हैं— (1) कर्ता, (2) कर्म, (3) कारण, (4) सम्प्रदान, (5) अपादान, और (6) अधिकरण।

प्रश्न 8- विभक्ति कितनी हैं ?

उत्तर - सम्बोधनसहित आठ हैं।

प्रश्न 9- कारकों में से कौन-कौन सी विभक्ति निकाल दी ?

उत्तर - सम्बन्ध और सम्बोधन विभक्ति को निकाल दिया है।

प्रश्न 10- कारक में से सम्बन्ध और सम्बोधन विभक्ति को क्यों निकाल दिया है ?

उत्तर - (1) छठवीं विभक्ति सम्बन्ध को बताती है— जैसे:— मेरा मकान, मेरा भगवान। कारक की परिभाषा में, 'जो क्रिया का जनक हो, उसे कारक कहते हैं'। छठवीं विभक्ति में कार्यपना नहीं पाया जाता और ज्ञानी किसी के साथ सम्बन्ध नहीं मानते; इसलिए छठवीं विभक्ति को निकाल दिया है। (2) सम्बोधन में — हे राम, हे लक्ष्मण! हे पना पाया जाता है; क्रियापना नहीं पाया जाता और ज्ञानी किसी को सम्बोधते नहीं, क्योंकि प्रत्येक आत्मा, ज्ञान का कन्द है; इसलिए सम्बोधन को भी निकाल दिया है।

प्रश्न 11 – विभक्ति के कितने अर्थ हैं ?

उत्तर – दो हैं (1) वि=विशेषरूप से। भक्ति=लीनता करना, अर्थात् आत्मा में विशेष प्रकार लीनता करना, यह निश्चयभक्ति, अर्थात् विभक्ति का पहला अर्थ है। (2) वि, अर्थात् विशेष प्रकार से, भक्त, अर्थात् पृथक् होना, यह विभक्ति का दूसरा अर्थ है।

प्रश्न 12– विभक्ति का अर्थ, जो 'विशेष प्रकार से पृथक् होना' किया है, यह किस-किस से पृथक् होना है ?

उत्तर – (1) अत्यन्त भिन्न परपदार्थों से पृथक् होना, (2) आँख नाक–कानरूप औदारिकशरीर से पृथक होना, (3) तैजस –कार्माणशरीर से पृथक होना, (4) शब्द (भाषा) और मन से पृथक् होना, (5) शुभाशुभ विकारीभावों से पृथक होना, (6) अपूर्ण–पूर्ण शुद्धपर्यायों के पक्ष से पृथक् होना, (7) भेदनय के पक्ष से पृथक् होना, (8) अभेदनय के पक्ष से पृथक् होना, (9) भेदाभेदनय के पक्ष से पृथक् होना।

प्रश्न 13– विभक्ति का प्रथम अर्थ है 'आत्मा में विशेष प्रकार से लीनता' – उसकी प्राप्ति कैसे हो ?

उत्तर – नौ प्रकार के पक्षों से मेरी आत्मा का कोई सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अपनी आत्मा, जो अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड है, उसकी ओर दृष्टि करे तो 'आत्मा में विशेष प्रकार से लीनता की प्राप्ति होती है।'

प्रश्न 14– अपने में विशेष प्रकार से भक्ति करने से क्या होता है ?

उत्तर – अनादि काल से नौ प्रकार के पक्षों में जो कर्ता–कर्मादि की बुद्धि है, उसका अभाव हो जाता है और अपने भगवान का पता

चल जाता है। तत्पश्चात् क्रम से शुद्धि में वृद्धि करते-करते पूर्ण परमात्मापना पर्याय में प्रगट हो जाता है।

प्रश्न 15- छह कारकों के ज्ञान से क्या लाभ होगा ?

उत्तर - अनादि काल से यह जीव अपने को भूलकर पर में, विकार में या किसी पक्ष में पड़कर पागल हो रहा है। यदि यह छह कारकों का ज्ञान करले तो पागलपने का अभाव हो जाएगा।

प्रश्न 16- छह कारकों का ज्ञान करके, हम ज्ञानी माने जावें और लोग हमारा आदर करें, ऐसा मानकर छह कारकों का ज्ञान करे, तो क्या होता है ?

उत्तर - ऐसा जीव अनन्त संसार का पात्र होता है क्योंकि छह कारकों के ज्ञान से तो अनन्त काल की पर में कर्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव होता है; उसके बदले उससे सांसारिक प्रयोजन साधे, तो परम्परा से निगोद का कारण है।

प्रश्न 17- कारक का निरूपण कितने प्रकार से है ?

उत्तर - दो प्रकार से है — निश्चयकारक, और व्यवहारकारक।

प्रश्न 18- निश्चय और व्यवहारकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जहाँ पर के साथ कारकता का सम्बन्ध बताया जाये, वह व्यवहारकारक है और जहाँ अपने में ही (एक ही वस्तु में) कारकता का सम्बन्ध बताया जाये, वह निश्चयकारक है। व्यवहार -कारक औपचारकि एवं निश्चयकारक वास्तविक कारक हैं।

प्रश्न 19- जो व्यवहारकारक हैं, उन्हीं को सर्वथा सच्चा माने तो उसे शास्त्रों में क्या-क्या कहा है ?

उत्तर - (1) श्रीपुरुषार्थसिद्ध्युपाय में 'तस्य देशना नास्ति'

कहा है। (2) श्रीसमयसार, कलश 55 में 'यह अहंकाररूप मोह -अज्ञान अन्धकार है, उसका सुलटना दुर्निवार है' - ऐसा कहा है। (3) श्रीप्रवचनसार में 'पद पद पर धोखा खाता है' - ऐसा कहा है। (4) श्री आत्मावलोकन में 'हरामजादीपना' कहा है। (5) श्री समयसार में 'मिथ्यादृष्टि तथा उसका फल, संसार है' - ऐसा कहा है। (6) श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक में उसके सब धर्म के अङ्ग मिथ्यात्वभाव को प्राप्त होते हैं, तथा 'मिथ्यादर्शन' व अकार्यकारी तथा 'अनीति' आदि शब्दों से सम्बोधन किया है। इसलिए जो व्यवहार के कथन को सच्चा मानता है, उससे मिथ्यात्व होता है; उसे कभी भी धर्म की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 20- व्यवहारकारक के विषय में क्या समझना चाहिए?

उत्तर - 'परमार्थत: कोई द्रव्य किसी का कर्ता-हर्त्ता नहीं हो सकता'; इसलिए यह व्यवहारकारक असत्य हैं। वे मात्र उपचरित-असद्भूतव्यवहारनय से कहे जाते हैं। निश्चय से किसी द्रव्य के साथ कारकपने का सम्बन्ध है ही नहीं।

प्रश्न 21- जहाँ शास्त्रों में व्यवहारकारक और निश्चय -कारक का कथन किया हो, वहाँ क्या जानना चाहिए?

उत्तर - जहाँ व्यवाहारकारक का निरुपण किया हो, उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना और जहाँ निश्चयकारक का तिरुपण किया हो, उसे सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अङ्गीकार करना, क्योंकि श्री समयसार, कलश 173 में कहा है कि व्यवहारकारक में जो अध्यवसाय है, सो समस्त ही छोड़ना— ऐसा जिनदेवों ने कहा है; इसलिए समस्त व्यवहारकारक का श्रद्धान छोड़कर, निश्चयकारक को जानकर अपने ज्ञानघनरूप में प्रवर्तना युक्त है।

प्रश्न 22- निश्चयकारक और व्यवहारकारक के विषय में कुन्दकुन्द भगवान ने श्री मोक्षपाहुड़, गाथा 31 में क्या कहा है ?

उत्तर - जो व्यवहारकारक की श्रद्धा छोड़ता है, वह योगी अपने आत्मकार्य में जागता है तथा जो व्यवहारकारकों से लाभ मानता है, वह अपने आत्मकार्य में सोता है; इसलिए व्यवहारकारक का श्रद्धान छोड़कर, निश्चयकारक का श्रद्धान करना योग्य है।

प्रश्न 23- व्यवहारकारक का श्रद्धान छोड़कर, निश्चय -कारक का श्रद्धान करना क्यों योग्य है ?

उत्तर - व्यवहारनय=निश्चयकारक और व्यवहारकारक को किसी को किसी में मिलाकर निरुपण करता है, सो ऐसे ही श्रद्धान से मिथ्यात्व है; इसलिए उसका त्याग करना तथा निश्चयनय = निश्चयकारक और व्यवहारकारक को यथावत् निरूपण करता है; किसी को किसी में नहीं मिलाता है, सो ऐसे ही श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है; इसलिए उसका श्रद्धान करना।

प्रश्न 24- आप कहते हो — व्यवहारकारक के श्रद्धान से मिथ्यात्व होता है, इसलिए उसका श्रद्धान छोड़ो और निश्चयकारक के श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है, इसलिए उसका श्रद्धान करो, परन्तु जिनमार्ग में दोनों कारकों का ग्रहण करना कहा है, सो कैसे है ?

उत्तर - जिनमार्ग में, जहाँ निश्चयकारक की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे तो 'सत्यार्थ ऐसे ही है' — ऐसा जानना तथा जहाँ व्यवहारकारक की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे 'ऐसे है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा उपचार किया है' - ऐसा जानना — इस प्रकार जानने का नाम ही निश्चयकारक और व्यवहारकारक का ग्रहण है।

प्रश्न 25- कोई-कोई विद्वान, दोनों कारकों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर 'ऐसे भी है, ऐसे भी हैं' — इस प्रकार कहते हैं - क्या उनका कहना गलत है ?

उत्तर - गलत है, क्योंकि निश्चयकारक-व्यवहारकारक, इन दोनों कारकों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर 'ऐसे भी हैं, ऐसे भी हैं' — इस प्रकार भ्रमरूप प्रवर्तन से तो दोनों कारकों का ग्रहण करना नहीं कहा है।

प्रश्न 26- यदि व्यवहारकारक असत्यार्थ हैं तो उसका उपदेश जिनमार्ग में किसलिए दिया ? एक निश्चयकारक का ही निरूपण करना था।

उत्तर - व्यवहारकारक के बिना, निश्चयकारक का उपदेश अशक्य है; इसलिए व्यवहारकारक का उपदेश है। निश्चयकारक का ज्ञान कराने के लिये व्यवहारकारक द्वारा उपदेश देते हैं। व्यवहारकारक है, व्यवहारकारक का विषय है, जाननेयोग्य है परन्तु अङ्गीकार करनेयोग्य नहीं है।

प्रश्न 27- कार्य के कारक कितने कहे जाते हैं ?

उत्तर - चार कहे जाते हैं — (1) उस समय की पर्याय की योग्यता; (2) अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय; (3) त्रिकाली; (4) निमित्त; इस प्रकार कार्य के कारक चार कहे जाते हैं।

प्रश्न 28- शास्त्रों में कहीं कार्य का कारण उस समय पर्याय की योग्यता को; कहीं अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय को; कहीं त्रिकाली को और कहीं निमित्त को क्यों कहा है ?

उत्तर - (1) जहाँ शास्त्रों में कार्य का कारक **उस समय पर्याय की योग्यता** को कहा हो, वहाँ 'यह ही सच्चा कारक है और अनन्तर

पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कार्य का सच्चा कारक नहीं है' — ऐसा जानना।

(2) जहाँ कहीं कार्य का कारक **अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय** को कहा हो, वहाँ 'भूत-भविष्य की पर्यायों से पृथक् कराने की अपेक्षा कहा है' — ऐसा जानना।

(3) जहाँ कहीं कार्य का कारक **त्रिकाली** को कहा हो, वहाँ 'निमित्तकारक की दृष्टि छुड़ाने के लिए कहा है' — ऐसा जानना।

प्रश्न 29- स्वाश्रितो निश्चयकारक और पराश्रितो व्यवहारकारक की अपेक्षा किस-किस प्रकार हैं ?

उत्तर - (1) कार्य का कारक उस समय पर्याय की योग्यता स्वाश्रित निश्चयकारक कहा हो; उसकी अपेक्षा अनन्तर पूर्वक्षणवर्ती-पर्याय को पराश्रित व्यवहारकारक कहा जाता है।

(2) कार्य का कारक, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय को स्वाश्रित निश्चयकारक कहा हो; उसकी अपेक्षा त्रिकाली को पराश्रित व्यवहारकारक कहा जाता है।

(3) कार्य का कारक त्रिकाली को स्वाश्रित निश्चयकारक कहा हो; उसकी अपेक्षा निमित्त को पराश्रित व्यवहारकारक कहा जाता है।

प्रश्न 30- जिन-जिनवर और जिनवरवृषभों ने चार प्रकार के कारकों के विषय में क्या बतलाया है ?

उत्तर - कार्य का कारक उस समय पर्याय की योग्यता ही है परन्तु जब-जब कार्य होता है, तब बाकी के तीन कारक भी होते हैं क्योंकि 'जिसने पूर्व अवस्था प्राप्त की है - ऐसा द्रव्य भी, जो कि उचित बहिरङ्ग साधनों के सान्निध्य के सद्भाव में अनेक प्रकार की बहुत सी अवस्थाएँ करता है'— ऐसा जानना।

[श्री प्रवचनसार, गाथा 95 की टीका से]

प्रश्न 31- कोई कार्य का कारक, मात्र उस समय पर्याय की योग्यता को ही माने, अन्य कारकों को सर्वथा निषेध करे — तो क्या वह ठीक है ?

उत्तर - ठीक नहीं है क्योंकि जब कार्य होता है, तब अन्य तीन कारक भी होते हैं - ऐसा वस्तुस्वभाव है। उसको न मानने के कारण वह झूठा है।

प्रश्न 32- कार्य के इन चार प्रकार के कारकों में क्या रहस्य है ?

उत्तर - (1) कोई अकेले उस समय पर्याय की योग्यता कार्य के कारक को माने, किन्तु अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक को; त्रिकालीकारक को और निमित्तकारक को न माने, वह झूठा है।

(2) कोई अकेले अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक को ही माने, किन्तु त्रिकालीकारक, निमित्तकारक और उस समय पर्याय की योग्यता कारक को न माने, वह झूठा है।

(3) कोई मात्र त्रिकालीकारक को ही माने, किन्तु उस समय पर्याय की योग्यता कारक को, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक को और निमित्तकारक को न माने वह झूठा है।

(4) कोई अकेले कार्य का कारक निमित्त को ही माने, किन्तु त्रिकालीकारक, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक और उस समय पर्याय की योग्यतारूप कारक को न माने, वह भी झूठा है; क्योंकि जब -जब कार्य होता है, वहाँ चारों प्रकार के कारक एक साथ होते हैं।

प्रश्न 33- छह कारक-द्रव्य हैं, गुण हैं, या पर्याय हैं ?

उत्तर - छह कारक, गुण हैं।

प्रश्न 34- यदि छह कारक, गुण हैं तो सामान्य हैं या विशेष ?

उत्तर – छह कारक प्रत्येक द्रव्य में पाये जानेवाले सामान्य और अनुजीवी गुण हैं।

प्रश्न 35– छह कारक, गुण हैं, यह जिनवाणी में कहाँ आया है ?

उत्तर – श्री समयसार की 47 शक्तियों में आया है।

प्रश्न 36– छह कारकों का ज्ञान, विद्या बढ़ाने के लिए, लोगों को बताने के लिए कि हम विद्वान हैं या और किसी कार्य के लिए है ?

उत्तर – (1) जो जीव, छह कारकों का ज्ञान, मान–बड़प्पन के लिए करता है, वह अनन्त संसार का कारण है। (2) छह कारकों के ज्ञान से पर में करूँ–करूँ की कर्ताबुद्धि और भोक्ता–भोग्य की बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर क्रमशः निर्वाण की ओर गमन हो जाता है। (3) संसार के पाँच कारणों का अभाव हो जाता है। (4) पञ्च परावर्तन का अभाव हो जाता है। (5) चार गति के अभावरूप पञ्चम गति की प्राप्ति होती है। (6) पञ्चम पारिणामिकभाव का महत्त्व आ जाता है। (7) पञ्च परमेष्ठियों में उसकी गिनती होने लगती है।

प्रश्न 37– पर्याय (कार्य) से किसका माप निकालना चाहिए ?

उत्तर – पर्याय से सच्चे कारक का माप निकालना चाहिए?

प्रश्न 38– पर्याय से सच्चे कारक का माप क्यों निकालना चाहिए ?

उत्तर – कार्य हुआ — इसमें तो सब एक मत हैं परन्तु करनेवाला कौन है? इसमें भूल है। कारक का सही ज्ञान न होने से जीव,

संसार का पात्र बना हुआ है। कारक का सही ज्ञान हो जाए तो संसार का अभाव हो जावे; इसलिए पर्याय से सच्चे कारक का माप निकालना चाहिए।

कर्ताकारक

प्रश्न 39- कर्ता किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो स्वतन्त्रता से (स्वाधीनतापूर्वक) अपने परिणाम को करे, वह कर्ता है।

प्रश्न 40- प्रत्येक द्रव्य किसका कर्ता है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य अपने में स्वतन्त्र व्यापक होने से, अपने ही परिणाम का स्वतन्त्रता से कर्ता है।

प्रश्न 41- प्रत्येक द्रव्य अपने ही परिणाम का कर्ता है; दूसरे का नहीं, यह जिनवाणी में कहाँ-कहाँ आता है ?

उत्तर - (1) अनादि-निधिन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी का परिणमाया परिणमता नाहीं और किसी को परिणमाने का भाव, अनन्त संसार का कारण मिथ्यात्व है। *[श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52]*

(2) सब पदार्थ अपने-अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहनेवाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं, स्पर्श करते हैं, तथापि वे (सब द्रव्य) परस्पर एक-दूसरे को स्पर्श नहीं करते। *[श्री समयसार, गाथा 3 की टीका से]*

(3) जो कुछ क्रिया है, वह सब द्रव्य से भिन्न नहीं है। इससे विरुद्ध माननेवाला मिथ्यादृष्टिपने के कारण, सर्वज्ञमत से बाहर हैं। *[श्री समयसार, गाथा 85 की टीका से]*

(4) सर्व द्रव्यों की प्रत्येक पर्याय में छह कारक एक साथ वर्तते हैं; इसलिए आत्मा और पुद्गल, शुद्धदशा में या अशुद्धदशा में स्वयं छहों कारकरूप परिणमन करते हैं और दूसरे कारकों की (निमित्त कारकों की) अपेक्षा नहीं रखते। *[श्री पंचास्तिकाय, गाथा 62 से]*

(5) निश्चय से पर के साथ आत्मा का कारकपने का सम्बन्ध नहीं है कि जिससे शुद्धात्मस्वभाव की प्राप्ति के लिए सामग्री (वाह्य साधन) खोजने की व्यग्रता से जीव (व्यर्थ ही) परतन्त्र होते हैं।

[श्री प्रवचनसार, गाथा 16 की टीका में]

(6) देखो, श्री समससार गाथा 103, 372, 406।

(7) श्री समयसार, कलश 51, 52, 53, 54 तथा कलश 200।

प्रश्न 42- जो मानते हैं कि हम शरीर-स्त्री-पुत्रादि के कर्ता हैं, उसका क्या फल होगा ?

उत्तर - (1) जैसे-सीता को रावण चुराकर ले गया और रावण ने बहुत प्रयत्न किया कि जैसे सीता, राम को प्रेम करती है, वैसा ही प्रेम मुझे करे - उसका फल उसे तीसरे नरक जाना पड़ा; उसी प्रकार जो संसार के पदार्थों को अपने अनुसार परिणमाना चाहता है, उसका फल उसे नरक में जाना पड़ेगा। (2) एक बार मुम्बई में हंगामा हो गया। लोगों ने पुकारा 'मुम्बई हमारा, मुम्बई हमारा' तो सरकार परेशानी में आ गयी। तब बड़े जनरल को छोटे जनरल ने टेलीफोन किया, कि इसका एकमात्र उपाय यह है सुबह समाचारपत्र में दे दो, जो अपने घर से बाहर निकलेगा, उसे गोली मार दी जावेगी। ऐसा ही सुबह समाचारपत्र में आ गया। जब कोई अपने घर से बाहर निकला, उसे तुरन्त गोली मार दी गयी, जो नहीं निकला, वह ठीक रहा; उसी प्रकार जो अपने द्रव्य-गुण-पर्याय से बाहर निकलता है, उसे चारों

गतिरूप गोली मार दी जाती है; इसलिए जो अपनी मर्यादा से बाहर निकलता है, वह दु:खी होता है। जो अपनी मर्यादा में रहता है, वह सम्यग्दर्शनादि को प्राप्ति कर क्रमश: मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ बन जाता है।

प्रश्न 43- कर्ता की परिभाषा में से 'स्वतन्त्रतापूर्वक' शब्द निकाल दें, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - 'स्वतन्त्रतापूर्वक' शब्द निकालने से दूसरे को भी कर्तापने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, यह दोष आवेगा। (1) जैसे — रोटी, आटे से बनी और बाई से भी बनने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा। (2) घड़ा, मिट्टी से बने और कुम्हार से भी बने, ऐसा प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा। (3) शब्द, भाषावर्गणा करे और जीव भी करे, ऐसा प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; इसलिए 'स्वतन्त्रतापूर्वक' शब्द नहीं निकाला जा सकता।

प्रश्न 44- कर्ता कितने कहलाते हैं ?

उत्तर - चार कहलाते हैं; उस समय पर्याय की योग्यता कर्ता; अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कर्ता; त्रिकालीकर्ता और निमित्तकर्ता।

प्रश्न 45- इन चारों कर्ता में से कार्य का सच्चा कर्ता कौन है ?

उत्तर - वास्तव में 'उस समय पर्याय की योग्या ही' कार्य का सच्चा कर्ता है।

प्रश्न 46- अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, त्रिकालीकर्ता और निमित्त, कार्य के सच्चे कर्ता क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - (1) अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती; इसलिए अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कार्य का सच्चा कर्ता नहीं है।

(2) त्रिकालीकर्ता तो सदैव एकसा रहता है, यदि त्रिकाली कर्ता, कार्य का सच्चा कर्ता हो तो कार्य त्रिकाल रहना चाहिए, परन्तु कार्य का एक समय का है। विचारो — कार्य एक समय का हो और उसका कर्ता त्रिकाली सदैव रहनेवाला बने - ऐसा नहीं है। (3) कार्य का कर्ता निमित्त तो होने का प्रश्न ही नहीं, क्योंकि कार्य से उसका द्रव्य-क्षेत्र काल-भाव पृथक् है।

प्रश्न 47- जहाँ आगम में कार्य के एक कर्ता की बात हो, वहाँ पात्रजीव क्या जानते हैं ?

उत्तर - वह चारों का ग्रहण कर लेता है। जो चारों ग्रहण नहीं करता है, वह झूठा है। यहाँ 'ग्रहण' का अर्थ ज्ञान है।

प्रश्न 48- कुम्हार ने घड़ा बनाया — इसमें कर्ताकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़े की प्राप्त हुई तो कर्ताकारक को माना और कुम्हारे, घड़े को प्राप्त हुआ तो कर्ताकारक को नहीं माना।

प्रश्न 49- मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी, इसमें से 'स्वतन्त्रता' शब्द को निकाल दें तो क्या नुकसान होगा ?

उत्तर - मिट्टी से घड़ा बने और कुम्हार से भी घड़ा बनने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; इसलिए स्वतन्त्रता शब्द को नहीं निकाला जा सकता है।

प्रश्न 50- मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी, ऐसे कर्ताकारक को जानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्यों से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 51- मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी, तो कर्ताकारक को माना, इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - जैसे— मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी; उसी प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य और गुण में स्वतन्त्रता से परिणमन हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में ऐसा ही होता रहेगा— ऐसा उसको ज्ञान हो जाता है; पर में कर्तापने की खोटी बुद्धि समाप्त होकर, ज्ञाताबुद्धि प्रगट हो जाती है। वह केवली के समान ज्ञाता-दृष्टा बन जाता है; मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का ही अन्तर रहता है।

प्रश्न 52- दर्शनमोहनीय के अभाव से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, इसमें कर्ताकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा का श्रद्धागुण स्वतन्त्रता से क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा तो कर्ताकारक को माना और दर्शनमोहनीय के अभाव से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ - ऐसा माननेवाले ने कर्ताकारक को नहीं माना।

प्रश्न 53- श्रद्धागुण स्वतन्त्रता से क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा। इसमें से स्वतन्त्रता शब्द को निकाल दें, तो क्या नुकसान होगा ?

उत्तर - श्रद्धागुण से क्षायिकसम्यक्त्व होवे और दर्शनमोहनीय के अभाव में से भी क्षायिकसम्यक्त्व होने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; इसलिए 'स्वतन्त्रता' शब्द नहीं निकाला जा सकता है।

प्रश्न 54- आत्मा का श्रद्धागुण क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा - ऐसे कर्ताकारक को जानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - दर्शनमोहनीय के अभाव से; सच्चे देव-गुरु-शास्त्र से; सात तत्त्वों की भेदरूप श्रद्धा से और आत्मा के श्रद्धागुण को छोड़कर, बाकी गुणों से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 55- आत्मा का श्रद्धागुण क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा, तो कर्ताकारक को माना - इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - जैसे-श्रद्धागुण में स्वतन्त्रता से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ; उसी प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य और गुण में स्वतन्त्रता से परिणमन हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में ऐसा ही होता रहेगा तो पर में कर्तापने की बुद्धि समाप्त होकर, ज्ञाताबुद्धि प्रगट होना, यह कर्ता कारक को जानने का लाभ है।

प्रश्न 56- क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, इसमें चारों प्रकार के कारकों के नाम बताओ ?

उत्तर - (1) क्षायिकसम्यक्त्व हुआ - उस समय पर्याय की योग्यता, सच्चा कारक; (2) क्षायोपशमिकसम्यक्त्व का अभाव, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, अभावरूप कारक; (3) श्रद्धागुण, त्रिकालीकारक; (4) दर्शनमोहनीय का अभाव, निमित्तकारक।

कर्मकारक

प्रश्न 57- कर्मकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - कर्ता, जिस परिणाम को प्राप्त करता है, वह परिणाम उसका कर्म है। कर्ता का इष्ट, वह कर्म है।

प्रश्न 58- कर्म के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर - कार्य, अवस्था, पर्याय, परिणाम, परिणति आदि कर्म के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 59- कार्य के कर्ता कितने कहलाते हैं ?

उत्तर - चार कहलाते हैं; (1) उस समय पर्याय की योग्यता;

(2) अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय; (3) त्रिकालीकर्ता; (4) निमित्तकर्ता।

प्रश्न 60- कार्य का सच्चा कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता ही प्रत्येक कार्य का सच्चा कर्ता है। अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीयपर्याय; त्रिकाली और निमित्त, कार्य के सच्चे कर्ता नहीं हैं।

प्रश्न 61- अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय; त्रिकाली और निमित्त, कार्य के सच्चे कर्ता क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - (1) पर्याय में से पर्याय नहीं आती; इसलिए अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कार्य का सच्चा कर्ता नहीं है। (2) कार्य एक समय का हो, उसका कर्ता अनादि-अनन्त रहनेवाला हो, यह भी नहीं हो सकता है। (3) निमित्त को कर्ता कहने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि दोनों का स्व-चतुष्टय भिन्न-भिन्न है।

प्रश्न 62- कार्य का कर्ता कहीं त्रिकाली को और कहीं अनन्तर पूर्वक्षणवर्त्तीपर्याय को क्यों कहा जाता है ?

उत्तर - (1) परद्रव्यों से भिन्न करने के लिए कार्य का कर्ता, त्रिकाली को कहा जाता है। (2) पूर्व का पर्याय का ज्ञान कराने के लिये अनन्तर पूर्णक्षणवर्तीपर्याय को कार्य का कर्ता कहा जाता है। (3) इसलिए कार्य के लिए त्रिकालीकर्ता, भूत-भविष्य की पर्यायों और निमित्त से दृष्टि हटकर, मात्र उस समय पर्याय की योग्यता ही कार्य का सच्चा कर्ता है, यह पता चले तो कल्याण हो।

प्रश्न 63- कर्मकारक को समझने के लिए क्या याद रखना चाहिए ?

उत्तर - (1) वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है;

(2) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही है; अन्य का नहीं; (3) कर्म, कर्ता का बिना होता नहीं; (4) वस्तु की एकरूप स्थिति रहती नहीं; यह चार बोल, कर्मकारक समझने के लिए पर्याप्त हैं।

[श्री समयसार, कलश 211]

प्रश्न 64- कर्मकारक को समझने से क्या लाभ है ?

उत्तर - जो-जो कार्य होता है, वह सब अपनी-अपनी पर्याय की योग्यता से ही होता है। जब कार्य अपनी-अपनी पर्याय की योग्यता से होता है तो मैं उस कार्य को करूँ या कराऊँ, - ऐसी बुद्धि का अभाव होकर, दृष्टि अपने त्रिकाली भगवान पर आना और शान्ति का अनुभव होना, यही कर्मकारक को जानने का लाभ है।

प्रश्न 65- कार्य में 'उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है' - यह शास्त्र में कहाँ आया है ?

उत्तर - 'वास्तव में कोई भी कार्य होने में या बिगड़ने में उसकी योग्यता ही साधक होती है।' *[श्री इष्टोपदेश, गाथा 35 की टीका]*

प्रश्न 66- (1) दूध गिर गया, (2) बच्चा भागते-भागते गिर गया, (3) मर गया, (4) शरीर में बीमारी हुई, (5) रोटी जल गयी, (6) माल चोरी हो गया, (7) चलते-चलते गिर गया, (8) भाषा बोली, (9) हाथ ऊँचा उठाया, (10) पुस्तक उठायी, (11) अक्षर लिखे, (12) मकान बना - इन सब कार्यों में कर्मकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) दूध गिर गया-क्यों गिरा ? कर्मकारक को नहीं माना और दूध अपनी पर्याय की योग्यता से गिरा, तो कर्मकारक को माना। (2) बच्चा भागते-भागते गिर गया, - क्यों गिरा ? कर्मकारक को नहीं माना और बच्चा अपनी पर्याय की योग्यता से गिरा - तो

कर्मकारक को माना। (3) मर गया – क्यों मरा ? कर्मकारक को नहीं माना; अपनी योग्यता से मर गया – कर्मकारक को माना। (4) शरीर में बीमारी हुयी – क्यों हुई ? कर्मकारक को नहीं माना और बीमारी अपनी पर्याय की योग्यता से हुयी – तो कर्मकारक को माना। (5) रोटी जल गई, क्यों जल गयी ? कर्मकारक को नहीं माना और रोटी अपनी पर्याय की योग्यता से जल गयी, तो कर्मकारक को माना। (6) माल चोरी हो गया – क्यों हुआ ? तो कर्मकारक को नहीं माना और चोरी अपनी पर्याय की योग्यता से हुयी – तो कर्मकारक को माना। (7) चलते-चलते गिर गया – क्यों गिरा ? तो कर्मकारक को नहीं माना और अपनी योग्यता से गिरा – तो कर्मकारक माना। (8) भाषा, जीव से निकली-कर्मकारक को नहीं माना और भाषा अपनी पर्याय की योग्यता से भाषावर्गणा में से निकली – तो कर्मकारक को माना। (9) हाथ ऊँचा जीव ने उठाया तो कर्मकारक को नहीं माना और हाथ अपनी पर्याय की योग्यता से ऊँचा हुआ – तो कर्मकारक को माना। (10) पुस्तक मैंने उठायी तो कर्मकारक को नहीं माना और पुस्तक अपनी पर्याय की योग्यता से उठी – तो कर्मकारक को माना। (11) अक्षर मैंने लिखे – तो कर्मकारक को नहीं माना और अक्षर अपनी पर्याय की योग्यता से लिखे गये – तो कर्मकारक को माना। (12) मकान मैंने बनाया – तो कर्मकारक को नहीं माना और अपनी पर्याय की योग्यता से बना – तो कर्मकारक को माना।

प्रश्न 67- जब प्रत्येक कार्य अपनी उस समय पर्याय की योग्यता से ही होता है तो जीव क्यों पागल होता है ?

उत्तर – कर्मकारक का रहस्य पता न होने से पागल होता है।

प्रश्न 68- कर्मकारक का ज्ञान क्यों कराया जाता है ?

उत्तर – (1) शान्ति प्राप्त कराने के लिये और शान्ति प्राप्त करने

के लिये। (2) वस्तुस्वरूप समझाने के लिये और समझने के लिये। (3) अनादि काल की खोटी मान्यता नष्ट करने के लिये और कराने के लिये कर्मकारक का ज्ञान कराया जाता है।

प्रश्न 69- किस मान्यतावाले ने कर्मकारक को नहीं माना और उसका फल क्या हुआ ?

उत्तर - जैसे :- रोटी बनी, उसमें (1) बाई, चकला, बेलन, कर्ता है, (2) आटा कर्ता है। (3) लोई उसका कर्ता है, आदि - मान्यतावालों ने कर्मकारक को नहीं माना और उसका फल, मिथ्यादर्शनादि की पुष्टि होकर निगोद की प्राप्ति होना है।

प्रश्न 70- कर्मकारक को किसने माना और उसका फल क्या हुआ ?

उत्तर - कार्य 'उस समय पर्याय की योग्यता से ही होता है, होता रहेगा और होता रहा है।' इससे क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि हो गयी और सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रमशः निर्वाण की ओर गमन होना, इसका फल है।

प्रश्न 71- कर्म कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर - (1) द्रव्यकर्म, (2) नोकर्म, (3) भावकर्म, (4) कर्म, अर्थात् कार्य, और (5) कर्म नाम का कारक।

प्रश्न 72- इन पाँच प्रकार के कर्मों में से सिद्धभगवान में कौन-कौन सा कर्म है ?

उत्तर - सिद्धभगवान में कर्म अर्थात् कार्य और कर्मकारक - ये दो हैं।

प्रश्न 73- कर्म, अर्थात् कार्य होता है, उसमें कितने कारण कहलाते हैं और सच्चा कारण कौन है ?

उत्तर – चार कहलाते हैं — (1) निमित्तकारण; (2) त्रिकाली-कारण; (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण; (4) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकरण। इन चारों कारणों में से कर्म का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 74– आस्रवतत्त्वरूप कर्म / कार्य का कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 75– कर्म के कारण आस्रव माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – अजीवतत्त्व और आस्रवतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 76– जीव के आस्रव होना माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – जीव और आस्रवतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 77– आस्रवतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – आस्रव का कर्ता का उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही है; द्रव्यकर्म और जीव नहीं। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से आस्रवतत्त्वरूप कर्मसम्बन्धी भूल दूर हो जाती है।

प्रश्न 78– बन्धतत्त्व का कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 79– बन्धतत्त्व का कर्ता, द्रव्यकर्म को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – अजीव और बन्धतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 80– जीव से बन्ध होना माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – जीव और बन्धतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 81– बन्धतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – भावबन्ध 'उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही' है; कर्म और जीव से नहीं है। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से बन्धतत्त्वरूप कर्मसम्बन्धी भूल दूर हो जाती है।

प्रश्न 82– संवरतत्त्व का कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 83– संवरतत्त्व का कर्ता, कोई द्रव्यकर्म के रुकने को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – संवरतत्त्व और अजीवतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 84– शुभभाव से संवर माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – आस्रव, बन्ध और संवरतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 85– देव-गुरु-शास्त्र से सम्यग्दर्शन माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – जीव, अजीवतत्त्व और संवरतत्त्व को एक माना; कर्म-कारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 86- अणुव्रतादिरूप बाहरी क्रिया से श्रावकपना माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - अजीव और संवरतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 87- शुभभावरूप अणुव्रतादि से श्रावकपना माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - आस्रव, बन्ध और संवरतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 88- संवरतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर - कर्मकारक का रहस्य जानने से।

प्रश्न 89- संवरतत्त्व सम्बन्धी भूल, कर्मकारक को मानने से कैसे दूर हो जाती है ?

उत्तर - संवरतत्त्व 'उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से' हैं; वह जीव से, आस्रव-बन्ध से नहीं है। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से संवरतत्त्वसम्बन्धी भूल दूर हो जाती है।

प्रश्न 90- भाव निर्जरातत्त्व का सच्चा कर्ता कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, भाव निर्जरातत्त्व का सच्चा कर्ता है।

प्रश्न 91- द्रव्यकर्म से भावनिर्जरा माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - अजीव और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आता है।

प्रश्न 92- जीव से निर्जरा माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – जीवतत्त्व और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आता है।

प्रश्न 93– पुण्य से निर्जरा माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – आस्रवतत्त्व और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 94– भावबन्ध से भावनिर्जरा माने तो क्या दोष आता आयेगा ?

उत्तर – बन्ध और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 95– भावसंवर से भावनिर्जरा माने तो क्या दोष आता आयेगा ?

उत्तर – संवर, निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 96– रोटी न खाने से निर्जरा माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अजीवतत्त्व और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 97– बाहरी तप और शुभभावरूप बारह प्रकार के व्यवहारतप से निर्जरा माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – अजीव, आस्रव, बन्ध और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 98– भाव निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – कर्मकारक को मानने से भाव निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल मिटती है।

प्रश्न 99- कर्मकारक को मानने से भाव निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे दूर हुई ?

उत्तर - भाव निर्जरातत्त्व 'उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से' है; वह जीव से, अजीव से, आस्रव से, बन्ध से नहीं है। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल मिट गयी।

प्रश्न 100- भावमोक्ष का कर्ता कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 101- भावमोक्ष का कर्ता, द्रव्यकर्म के अभाव को माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - भावमोक्ष और अजीव को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 102- भावमोक्ष का कर्ता, वज्रवृषभनाराचसंहनन को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - अजीव और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 103- जीव से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - जीवतत्त्व और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 104- आस्रव से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - आस्रव और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 105- पुण्य-बन्ध से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - बन्धतत्त्व और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 106- संवर से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - संवर और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 107- निर्जरा से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - निर्जरा और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 108- चौदहवें गुणस्थान से मोक्ष माने, तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - आस्रव, संवर, निर्जरा और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 109- मोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर - कर्मकारक को माने तो मोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल मिटे।

प्रश्न 110- कर्मकारक को मानने से मोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर - भावमोक्ष का कर्ता, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण है; जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरातत्त्व उसका कर्ता नहीं है। इस प्रकार, कर्मकारक को मानने से भावमोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल दूर हो गयी।

प्रश्न 111- वह हमारी तारीफ करते थे; आज निन्दा क्यों ? इस वाक्य में कर्मकारक को कब नहीं माना और कब माना ?

उत्तर – वह हमारी तारीफ करते थे, आज निन्दा क्यों ? – ऐसी मान्यतावाले ने कर्मकारक को नहीं माना और निन्दा, उस समय पर्याय को योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुयी – तो कर्मकारक को माना। इसी प्रकार अन्य कार्यों पर भी अभ्यास करना चाहिए।

प्रश्न 112– प्रत्येक समय प्रत्येक द्रव्य में कार्य होता ही रहता है, वह कभी रुकता ही नहीं – यह क्या सिद्ध करता है ?

उत्तर – कार्य (कर्म) को सिद्ध करता है और क्रमबद्धपर्याय को सिद्ध करता है।

प्रश्न 113– कर्मकारक को कब माना ?

उत्तर – दृष्टि अपने त्रिकाली भगवान पर आयी तो कर्मकारक को माना।

करणकारक

प्रश्न 114– करणकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर – उस परिणाम के (कार्य का) साधकतम, अर्थात् उत्कृष्टसाधन को करण कहते हैं।

प्रश्न 115– करणकारक में 'साधकतम' क्या बताता है ?

उत्तर – 'साधकतम' यह बताता है कि उत्कृष्टसाधन, कर्ता से बाहर नहीं है।

प्रश्न 116– कार्य का उत्कृष्टसाधन क्या बताता है ?

उत्तर – कार्य का करण, मध्यमसाधन, जघन्यसाधन नहीं है; मात्र कार्य का उत्कृष्टसाधन ही कारण है; अन्य नहीं है।

प्रश्न 117– कार्य के साधन कितने कह जाते हैं ?

उत्तर – चार कहे जाते हैं — उस समय पर्याय की योग्यता

साधन; अनन्तरपूर्व क्षणवर्तीपर्याय साधन; त्रिकालीसाधन, और निमित्तसाधन।

प्रश्न 118- कार्य का सच्चा साधन कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता ही कार्य का उत्कृष्ट-साधन है। अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय साधन, त्रिकालीसाधन और निमित्तसाधन, कार्य के सच्चे साधन नहीं हैं।

प्रश्न 119- अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, त्रिकाली और निमित्त, कार्य के सच्चे साधन क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती; इसलिए अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, कार्य का साधन नहीं है; कार्य एक समय का हो, उसका साधन ध्रुव हो - यह भी नहीं बनता है। निमित्त को साधन कहने का प्रश्न ही नहीं है क्योंकि दोनों का स्वचतुष्टय पृथक्-पृथक् है।

प्रश्न 120- केवलज्ञान का उत्कृष्ट साधन कौन है, कौन नहीं है ?

उत्तर - केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय को योग्यता ही है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, त्रिकाली ज्ञानगुण और ज्ञानावरणीय का अभाव, उत्कृष्टसाधन नहीं है।

प्रश्न 121- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान; आत्मा का ज्ञानगुण और ज्ञानावरणीय का अभाव कैसे साधन कहे जाते हैं ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान, अभावरूप

साधन; आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकालीसाधन और ज्ञानावरणीय का अभाव, निमित्तसाधन कहे जाते हैं।

प्रश्न 122- क्या केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, वज्रवृषभ-नाराचसंहनन है? इसमें करणकारक को कब माना और कब नहीं।

उत्तर - केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता है, तब तो करणकारक को माना और केवलज्ञान का साधन, वज्रवृषभनाराचसंहनन कहे तो करणकारक को नहीं माना।

प्रश्न 123- केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता केवलज्ञान ही है; अन्य नहीं हैं - तो अन्य साधनों में क्या-क्या आया?

उत्तर - वज्रवृषभनाराचसंहनन; चौथा काल; केवल-ज्ञानावरणीय का क्षय; आत्मा; आत्मा के अनन्त गुण; अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान - आदि अन्य साधनों में आते हैं।

प्रश्न 124- केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता केवलज्ञान ही है - ऐसा जानने से क्या लाभ है?

उत्तर - जैसे, केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है; उसी प्रकार विश्व में अनन्त द्रव्य हैं; प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण में जो-जो कार्य हो चुका है, हो रहा है, भविष्य में होगा; उन सब का साधन, मात्र उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही हैं। - ऐसा मानते ही चारों गतियों के अभावरूप धर्म की प्राप्ति होना —यह करणकारक को जानने का लाभ है।

प्रश्न 125- क्या रोटी का उत्कृष्टसाधन चकला, बेलन हैं? इसमें करण को कब माना और कब नहीं माना।

उत्तर – रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक–उपादानकारण रोटी है, तो करणकारक को माना और रोटी का उत्कृष्टसाधन, चकला–बेलन आदि है, तो करणकारक को नहीं माना।

प्रश्न 126– रोटी का उत्कृष्टसाधन उस समय पर्याय की योग्यता है, तब दूसरे साधनों को किस-किस नाम से कहा जाता है ?

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय लोई को अभावरूप साधन कहा जाता है; आटे को त्रिकालीसाधन कहा जाता है; बाई के राग को, चकला, बेलन, तवा, आग, धर्म, अधर्म–आकाश और कालद्रव्य को निमित्तसाधन कहा जाता है।

प्रश्न 127– रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है – ऐसा मानने से किस-किस साधन से दृष्टि हट जाती है ?

उत्तर – बाई का राग, चकला, बेलन, तवा, धर्म, अधर्म, आकाश, कालद्रव्य आदि निमित्तों से; त्रिकाली आटे से; अनन्तर–पूर्वक्षणवर्तीपर्याय लोई से दृष्टि हट जाती है।

प्रश्न 128– रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है – ऐसा जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – जैसे, रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता रोटी ही है; उसी प्रकार विश्व में जितने भी कार्य हैं, उन सब कार्यों का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है — ऐसा जानते–मानते ही चारों गतियों के अभावरूप धर्म की प्राप्ति होना, यह इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न 129– करण शब्द कितने अर्थों में प्रयुक्त होता है ?

उत्तर – तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है — (1) करण=इन्द्रिय; (2)करण=परिणाम; (3) करण = साधन, अर्थात् करणकारक।

सम्प्रदानकारक

प्रश्न 130– सम्प्रदानकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर – कर्म (परिणाम; कार्य) जिसे दिया जाए अथवा जिसके लिये कर्म किया जाए, उसे सम्प्रदान कहते हैं।

प्रश्न 131– 'सम्प्रदान' शब्द का क्या अर्थ है ?

उत्तर – सम्=सम्यक् प्रकार से; प्र=प्रकृष्टरूप से–विशेषरूप से; दान=शुद्धता का दान दिया जावे; अर्थात् सम्यक् प्रकार से विशेष करके जो दान अपने को दिया जाए, वह सम्प्रदान का अर्थ है।

प्रश्न 132– सम्प्रदान का अर्थ स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर – (1) जैसे–लोभ का त्याग, जो शुद्धि प्रगटी, वह सम्प्रदान है। (2) मिथ्यात्व का अभाव, सम्यग्दर्शन प्रगटा, वह सम्प्रदान है। (3) पाँचवें गुणस्थान में जो शुद्धि प्रगटी, वह सम्प्रदान है। (4) छठवें गुणस्थान में जो शुद्धि प्रगटी, वह सम्प्रदान है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना।

प्रश्न 133– सम्प्रदानकारक को कब माना ?

उत्तर – अपना दान अपने को देवे, तब सम्प्रदानकारक को माना। जिसका कार्य है, वह उसी को दिया जावे, अथवा उसी के लिए किया जाए तो सम्प्रदानकारक को माना।

प्रश्न 134– घड़ा, पानी पीनेवालों के लिए बना है ? इस वाक्य में सम्प्रदानकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता के लिए घड़ा बना तो

सम्प्रदानकारक को माना और पानी पीनेवालों के लिए बना तो सम्प्रदानकारक को नहीं माना।

प्रश्न 135- सम्प्रदानकारक को जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - विश्व में जितने भी कार्य होते हैं, वह सब उसकी उस समय पर्याय की योग्यता के लिए ही होते हैं; दूसरों के लिए नहीं होते हैं; - ऐसा माने तो धर्म को प्राप्ति हो।

अपादानकारक

प्रश्न 136- अपादानकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसमें से कर्म (क्रिया) किया जाए, उस ध्रुववस्तु को अपादानकारक कहते हैं।

प्रश्न 137- अपादानकारक क्या बताता है ?

उत्तर - जो उत्पाद हुआ, वह अन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादान के अभाव को और ध्रुव को बताता है।

प्रश्न 138- अपादानकारक में कितने उपादानकारण आते हैं ?

उत्तर - तीनों उपादानकारण आ जाते हैं।

प्रश्न 139- 'केवलज्ञान' हुआ - इसमें तीनों उपादानकारक किस प्रकार आये ?

उत्तर - केवलज्ञान का उत्पाद - उस समय पर्याय की योग्यतारूप क्षणिकउपादानकारण; भावश्रुतज्ञान का व्यय, अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण; आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण; इस प्रकार तीनों उपादानकारण आ जाते हैं।

प्रश्न 140- (1) क्षायिकसम्यक्त्व, (2) क्षयोपशम-

सम्यक्त्व, (3) रोटी बनी, (4) केवलदर्शन, (5) अलमारी बनी; इनमें तीनों उपादानकारण किस प्रकार आते हैं ?

उत्तर – (1) क्षायिकसम्यक्त्व का उत्पाद, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण; (2) क्षयोपशमसम्यक्त्व का व्यय, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण; (3) आत्मा का श्रद्धागुण, त्रिकाली उपादानकारण; इस प्रकार तीनों उपादानकारण आ जाते हैं। इसी प्रकार अन्य चार वाक्यों में लगाना चाहिए।

प्रश्न 141– केवलज्ञानावरणीय के अभाव में से केवलज्ञान हुआ – क्या अपादानकारण को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि केवलज्ञान, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण भावश्रुतज्ञान का अभाव करके, आत्मा के ज्ञानगुण में से आया; केवलज्ञानावरणीयकर्म के अभाव में से नहीं आया – ऐसा समझे तो अपादानकारक को माना।

प्रश्न 142– कोई चतुर ऐसा कहे केवलज्ञानवरणीय के अभाव में से केवलज्ञान आया, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – उसके अपादानकारक को उड़ा दिया। अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण, श्रुतज्ञान के अभाव को और आत्मा के ज्ञानगुण को भी उड़ा दिया।

प्रश्न 143– केवलज्ञान में केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव हुआ – क्या अपादानकारक को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि केवलज्ञानावरणीय का अभाव, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम का अभाव करके कार्माणवर्गणा में से आया; केवलज्ञान में से नहीं आया – ऐसा समझे तो अपादानकारक को माना।

प्रश्न 144- कोई चतुर ऐसा कहे - केवलज्ञान में से ही केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव आया - तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - उसने अपादानकारक को उड़ा दिया; अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण ज्ञानावरणीय क्षयोपशम के अभाव को और कार्माणवर्गणा को उड़ा दिया।

प्रश्न 145- तीनों उपादानकारणों में कितना समय लगता है ?

उत्तर - तीनों का एक ही समय है।

प्रश्न 146- बाई ने रोटी बनायी - इस वाक्य में अपादान-कारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - रोटी, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई का अभाव करके, त्रिकाली उपादानकारण आटे में से बनी, तो अपादानकारक को माना और बाई से रोटी बनी - तो अपादानकारक को नहीं माना। इसी प्रकार प्रत्येक कार्य पर घटित करना चाहिए।

प्रश्न 147 - बाई ने रोटी बनाई - क्या अपादानकारक को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि रोटी, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई का अभाव करके, ध्रुव आटे में से बनी है; बाई में से नहीं, तब अपादानकारक को माना।

प्रश्न 148- कोई चतुर कहे कि बाई से ही रोटी बनी - तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - उसने अपादानकारक को उड़ा दिया; अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई के अभाव को; और ध्रौव्य आटे को भी उड़ा दिया।

प्रश्न 149- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का तो अभाव हो जाता है, उसमें से उत्पाद कैसे हो सकता है ?

उत्तर - वास्तव में अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण के अभाव में से उत्पाद नहीं होता है; वह तो उस समय पर्याय की योग्यता में से होता है। यह तो अभावरूप उपादानकरण की अपेक्षा ज्ञान कराया है।

प्रश्न 150- त्रिकाली ध्रुव को अनादि-अनन्त है और कार्य एक समय का है, उसमें से कार्य कैसे हुआ ?

उत्तर - निमित्त, परद्रव्यों से अलग करने की अपेक्षा त्रिकाली उपादान को कार्य का कर्ता कहा है। वास्तव में उत्पाद, उस समय पर्याय की योग्यता से ही होता है।

प्रश्न 151- केवलज्ञानरूप कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ - ऐसा मानने से किस-किस से दृष्टि हट जाती है ?

उत्तर - (1) वज्रवृषभनाराचसंहनन से, (2) चौथे काल से, (3) ज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से, (4) आत्मा से, (5) ज्ञानगुण से, (6) श्रुतज्ञान से दृष्टि हट जाती है।

प्रश्न 152- क्षायिकसम्यक्त्वरूप कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से होता है - ऐसा मानने से किस-किस से दृष्टि हट जाती है ?

उत्तर - (1) देव-गुरु से, (2) दर्शनमोहनीय के उपशमादि से, (3) आत्मा (त्रिकाली उपादान) से, (4) श्रद्धागुण से, (5) क्षयोपशम सम्यक्त्व से दृष्टि हट गयी।

नोट - यहाँ आत्मा (त्रिकाली कारण से) दृष्टि हटने का आशय, कार्य के लिए उस की ओर देखना नहीं रहा - यह है / श्रद्धापर्याय का स्वभाव से अपनत्व हटने का आशय नहीं है।

प्रश्न 153- कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से ही कार्य होता है - यह निर्णय कब सच्चा-झूठा है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता से ही कार्य होता है - ऐसा निर्णय होते ही दृष्टि अपने त्रिकाली स्वभाव पर आवे तो निर्णय सच्चा है, अन्यथा झूठा है।

अधिकरणकारक

प्रश्न 154- अधिकरणकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसमें अथवा जिसके आधार से कर्म (कार्य) किया जाए, उसे अधिकरणकारक कहते हैं।

प्रश्न 155- अनादि से अज्ञानी ने कार्य के लिए किसका आधार माना और उसका फल क्या रहा ?

उत्तर - अनादि से अज्ञानी जीव ने कार्य के लिए पर का आधार माना है। उसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद रहा।

प्रश्न 156- धर्म के लिए अज्ञानी ने किस-किस का आधार माना है ?

उत्तर - (1) अपनी आत्मा को छोड़कर, तीर्थङ्करों का, मुनियों का, अत्यन्त भिन्न परपदार्थों का, आधार माना; (2) शरीर-इन्द्रियाँ ठीक रहें तो धर्म हो, उसका आधार माना है; (3) कर्म के क्षय आदि हों तो धर्म हो, उसका आधार माना है; (4) शुभभाव हो तो धर्म हो, उसका आधार माना है; (5) भेदनय के पक्ष का आधार माना है; (6) अभेदनय के पक्ष का आधार माना है; (7) भेदाभेदनय के पक्ष का आधार माना है और उसका फल अनन्त संसार है।

प्रश्न 157- क्या एक वस्तु को दूसरी वस्तु का आधार नहीं है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं है, क्योंकि प्रत्येक वस्तु अपना–अपना कार्य अपने–अपने आधार से करती हैं; पर की अपेक्षा नहीं रखती है।

प्रश्न 158– क्या शरीर को रोटी का आधार है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि शरीर का आधार, आहारवर्गणा है; रोटी और जीव नहीं।

प्रश्न 159– शरीर को रोटी का आधार है, इसमें अधिकरण–कारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – शरीर को आहारवर्गणा का आधार है; रोटी का नहीं, तब अधिकरणकारक को माना, और रोटी ही शरीर का आधार है, ऐसा मानें तो उसने अधिकरणकारक को नहीं माना।

प्रश्न 160– क्या मोक्ष का आधार, कर्म का अभाव है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि मोक्ष का आधार, आत्मा है; कर्म का अभाव नहीं है।

प्रश्न 161– मोक्ष का आधार, कर्म का अभाव ही है, ऐसा कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – उसने अधिकरणकारक नहीं माना।

प्रश्न 162– मोक्ष का आधार, कर्म का अभाव कब माना जा सकता है ?

उत्तर – जब द्रव्यकर्म, जीव हो जावे तो मोक्ष का आधार, द्रव्यकर्म का अभाव माना जा सकता है, लेकिन ऐसा हो ही नहीं सकता।

प्रश्न 163– मोक्ष का आधार कौन रहा ?

उत्तर – मोक्ष का आधार, त्रिकाली आत्मा है और वास्तव में मोक्ष का आधार, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 164- अधिकरणकारक को कब माना कहा जा सकता है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य-गुण-पर्याय का आधार कथञ्चित् निरपेक्ष है - ऐसा माने, तब अधिकरणकारक को माना कहा जा सकता है।

प्रश्न 165- क्या गुरु को शिष्य का आधार है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि गुरु को अपना ही आधार है; शिष्य का नहीं।

प्रश्न 166- क्या गुरु को शिष्य का आधार है - इसमें अधिकरणकारक को कब नहीं माना ?

उत्तर - गुरु को शिष्य का आधार है - ऐसा माने तो अधिकरणकारक को नहीं माना, क्योंकि दोनों का अपना-अपना आधार है; एक को दूसरे नहीं।

प्रश्न 167- गुरु को शिष्य का आधार कब कहा जा सकता है।

उत्तर - गुरु को अपनी आत्मा का आधार है, इसके बदले शिष्य की आत्मा, गुरु की आत्मा बन जाए तो गुरु को शिष्य का आधार कहा जा सकता है लेकिन ऐसा हो सकता नहीं।

प्रश्न 168- इसमें सच्चा आधार कौन रहा ?

उत्तर - गुरु को अपनी आत्मा का आधार है और वास्तव में गुरु को 'उस समय पर्याय की योग्यता का आधार' है। इसी प्रकार सर्वत्र घटित करना चाहिए।

प्रश्न 169- अनादि से लड़की ने किस-किस का आधार माना और उसका क्या फल रहा ?

उत्तर – (1) घर में लड़की उत्पन्न हुई – प्रथम माँ–बाप को आधार माना। (2) फिर पति को आधार माना। (3) पति के बाद लड़के को आधार माना। (4) लड़के ने भी जबाब दे दिया तो रुपये–पैसों का आधार माना। (5) रुपया–पैसा न रहा तो दीवाल को आधार माना। इसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद रहा।

प्रश्न 170– लड़की किसका आधार ले तो शान्ति आवे ?

उत्तर – एकमात्र अपनी आत्मा का आधार माने तो कल्याण हो, फिर परम्परा मोक्ष की प्राप्ति हो।

प्रश्न 171– पर्याय का आधार कौन है ?

उत्तर – वास्तव में 'उस समय की पर्याय की योग्यता ही' पर्याय का आधार है।

प्रश्न 172– जब प्रत्येक द्रव्य की पर्याय का आधार, वह पर्याय ही है; दूसरा नहीं है, तब दृष्टि में मेरा आधार मैं ही हूँ – ऐसा मानने–जानने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर – (1) अनादि काल से पर में अपने आधार की कल्पना का अभाव हो जाता है; (2) 'स्वयंभू' कहलाता है; (3) चारों गतियों का अभाव होकर पंचम गति का मालिक बन जाता है; (4) पञ्च परमेष्ठियों में उसकी गिनती होने लगती है; (5) मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग का अभाव हो जाता है; (6) पञ्च परावर्तन का अभाव हो जाता है; (7) पञ्चम पारिणामिकभाव का महत्व आ जाता है; (8) आठ कर्मों का अभाव हो जाता है; (9) गुणस्थान, मार्गणास्थान, जीवस्थान से दृष्टि हटकर अपने त्रिकाली स्वभाव पर आ जाती है।

आठ कर्मों पर कारक का स्पष्टीकरण

प्रश्न 173- द्रव्यकर्म कितने हैं ?

उत्तर - आठ हैं — ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय।

प्रश्न 174- कर्म आठ ही हैं, कम-ज्यादा क्यों नहीं - इसको सिद्ध कीजिए ?

उत्तर - कर्म आठ हैं, यह बात शास्त्रों में तो है ही परन्तु कार्य से भी कारण का अनुमान लगाया जाता है, जो इस प्रकार है —

वेदनीय कर्म — (1) एक जीव रोगी है, एक निरोगी है। (2) एक के पास लाखों-करोड़ों रुपया है, एक के पास फूटी कोड़ी भी नहीं, इससे वेदनीयकर्म की सिद्धि होती है।

नामकर्म — (1) एक तो जहाँ जाता है, मान मिलता है; एक जहाँ जाता है, अपमान मिलता है। (2) एक रूपवान है, एक कुरूपवान है। इससे नामकर्म की सिद्धि होती है।

आयुकर्म — (1) एक की सौ वर्ष की उम्र है; एक की पचास वर्ष की उम्र है। (2) कोई गर्भ में मर जाता है, कोई तीन वर्ष में ही चल देता है, इससे आयुकर्म की सिद्धि होती है।

गोत्रकर्म — (1) एक जैन है, एक शूद्र है। (2) एक को ऊँचेपने से देखा जाता है, एक को नीचेपने से देखा जाता है। इसस गोत्रकर्म की सिद्धि होती है। देखो, संयोग चार प्रकार का ही बनता है, यदि और कोई संयोग देखने में आता है तो बताओ। इसलिए चार प्रकार के संयोग के अलावा और बनता ही नहीं; इससे चार अघाति-कर्मों की सिद्धि होती है।

ज्ञानावरणीयकर्म — (1) एक के ज्ञान का उघाड़ ऐसा है कि

एक ही बार में सब बातें याद हो जाता हैं, (2) एक के ज्ञान का उघाड़ ऐसा है कि पचास बार सुनने पर भी याद नहीं होता, इससे ज्ञानावरणीयकर्म की सिद्धि होती है।

दर्शनावरणीयकर्म — (1) जहाँ विशेषज्ञान होता है, वहाँ पर सामान्यदर्शन होता ही है, इससे दर्शनावरणीय कर्म की सिद्धि होती है।

मोहनीयकर्म — (1) एक को विशेषराग दिखायी देता है, एक को कम राग दिखायी देता है। (2) एक मिथ्यात्वी है, एक सम्यक्त्वी है, इससे मोहनीयकर्म की सिद्धि होती है।

अन्तरायकर्म — (1) कोई तीव्र पुरुषार्थ करता है और कोई मन्द पुरुषार्थ करता है, इससे अन्तरायकर्म की सिद्धि होती है।

इस प्रकार घातिकर्म चार हैं, वे सब पापरूप हैं। अघाति में पुण्य-पाप का अन्तर पड़ता है; इस प्रकार तर्क से आठ कर्म की सिद्धि होती है और जिनवाणी में भी आठ कर्म बतलाये हैं।

प्रश्न 175- कर्म की कितनी दशाएँ हैं ?

उत्तर - चार हैं — (1) उदय, (2) क्षय, (3) क्षयोपश, और (4) उपशम।

प्रश्न 176- आठ कर्मों में से उदय कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - आठों कर्मों में उदय होता है।

प्रश्न 177- आठों कर्मों में से क्षय कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - आठों कर्मों में क्षय होता है।

प्रश्न 178- आठों कर्मों में से क्षयोपशम कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - चार घातियाकर्मों में होता है।

प्रश्न 179- आठ कर्मों में से उपशम कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - एकमात्र मोहनीयकर्म में ही होता है।

प्रश्न 180- आठ कर्मों में उदय आदि कुल कितने भेद हुए ?

उत्तर - (1) उदय के आठ भेद; (2) क्षय के आठ भेद; (3) क्षयोपशम के चार भेद; (4) उपशम का एक भेद; इस प्रकार कुल इक्कीस भेद हुए।

प्रश्न 181- ज्ञानावरणीयकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन होती हैं — उदय, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 182- दर्शनावरणीयकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन होती हैं — उदय, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 183- अन्तरायकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन होती हैं — उदय, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 184- मोहनीयकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - चार होती हैं — उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 185- अघातिकर्मों में से कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - दो होती हैं — उदय और क्षय।

प्रश्न 186- इस प्रकार उदय आदि कितने भेद हुए ?

उत्तर - (1) ज्ञानावरणीय के तीन भेद; (2) दर्शनावरणीय के तीन भेद; (3) अन्तराय के तीन भेद; (4) मोहनीय के चार भेद; (5) आयु के दो भेद; (6) नाम के दो भेद; (7) गोत्र के दो भेद; (8) वेदनीय के दो भेद; इस प्रकार कुल इक्कीस भेद हुए। यह इक्कीस भेद हैं व कार्य है और प्रत्येक कार्य में छह कारक एक साथ वर्तते हैं। इस प्रकार एक सौ छब्बीस भेद हुए।

प्रश्न 187- ज्ञानावरणीयकर्म के उदय पर छह कारक कैसे लगते हैं ?

उत्तर - ज्ञानावरणीयकर्म का उदय, यह कार्य है। कार्य पर से छह प्रश्न उठते हैं। (1) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किसने किया ? कार्मणवर्गणा ने किया। अत: कार्मणवर्गणा, **कर्ता** हुई; (2) कार्मण-वर्गणा ने क्या किया ? ज्ञानावरणीयकर्म का उदय; अत: ज्ञानावरणीय-कर्म का उदय **कर्म** हुआ; (3) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किस साधन के द्वारा हुआ ? कार्मणवर्गणा के साधन द्वारा; अत: कार्मणवर्गणा **करण** हुई; (4) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किस के लिए किया ? कार्मणवर्गणा के लिए किया; अत: कार्मणवर्गणा **सम्प्रदान** हुई। (5) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किस में से किया ? पहली पर्याय का अभाव करके, कार्मणवर्गणा में से किया; अत: कार्मणवर्गणा **अपादान** हुई। (6) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किसके आधार से हुआ ? कार्मणवर्गणा के आधार से हुआ; अत: कार्मणवर्गणा **अधिकरण** हुई।

प्रश्न 188- इन एक सौ छब्बीस भेदों से क्या सिद्धि हुई।

उत्तर - (1) प्रत्येक कार्य की स्वतन्त्रता की सिद्धि हुई, (2) जीव के कारण, द्रव्यकर्म में उदय, क्षय आदि अवस्थाएँ होती हैं और द्रव्यकर्म के कारण, जीव में औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशमिक, औपशमिकभाव होते हैं - ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो गया।

प्रश्न 189- (1) आपने कर्मों की स्वतन्त्रता की सिद्धि की और समझ में भी आया कि कर्म के उदय आदि का कर्ता कार्मणवर्गणा का कार्य है; जीव का नहीं, परन्तु 'गोम्मट्टसार' आदि शास्त्रों में लिखा है कि (1) कर्म, जीव को चक्कर कटाता है। (2) ज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से केवलज्ञान

होता है। (3) क्षायिकसम्यक्त्व, दर्शनमोहनीय के क्षय से होता है; क्या वह झूठ लिखा है।

उत्तर – (1) अरे भाई! वह सब व्यवहारकथन है और व्यवहारकथन का अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा कथन है' – ऐसा जानना चाहिए। (2) जो व्यवहार के कथन को ही सत्यार्थ मानता है, वह जिनवाणी सुनने के अयोग्य है। (3) व्यवहार के कथन को सत्यार्थ मानने से मिथ्यात्व की पुष्टि होती है।

प्रश्न 190– जीव में औदयिकभाव, क्षयोपशमिकभाव, क्षायिकभाव, औपशमिकभाव भी क्या कर्म की अपेक्षा बिना होते हैं ?

उत्तर – हाँ; जीव में भी औदयिकादि भावरूप से परिणमित होने की क्रिया में वास्तव में जीव स्वयं ही छह कारकरूप से वर्तता है; इसलिए उसे अन्य कारकों की अपेक्षा नहीं है।

प्रश्न 191– क्या शरीर, मन, वाणी के कार्य; द्रव्यकर्म; जीव के विकारी; अविकारी भाव, निरपेक्ष होते हैं ?

उत्तर – (1) हाँ, निरपेक्ष होते हैं। श्री पञ्चास्तिकाय, गाथा 62 की टीका में लिखा है कि 'सर्व द्रव्यों की प्रत्येक पर्याय में यह छह कारक एक साथ बर्तते हैं; इसलिए आत्मा और पुद्गल शुद्धदशा में या अशुद्धदशा में स्वयं छहों कारकरूप परिणमन करते हैं और दूसरे कारकों की अपेक्षा नहीं रखते।' जयधवल पुस्तक न० 7 पृष्ठ 177 में लिखा है – '**बज्झ कारण निरपेक्खो वत्थु परिणामो**' वस्तु का परिणाम बाह्यकारणों से निरपेक्ष होता है। समयसार कलश नं० 51, 52, 53, 54, 61 में भी यही भाव है तथा कलश 200 में '**नास्ति सर्वोऽपि सम्बन्धः**' – ऐसा कहा है। आप्तमीमांसा में कहा है '**धर्मी, धर्म को निरपेक्ष मानों।**'

प्रश्न 192- क्या एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य का कुछ भी नहीं कर सकता है ?

उत्तर - हाँ, भाई! कुछ भी नहीं कर सकता है। विचारिये! केवलीभगवान को अनन्त चतुष्ट्य की प्राप्ति अरहन्तदशा में हुई है वे उसी समय औदारिकशरीर और चार अघातिकर्मों का अभाव नहीं कर सकते और छद्मस्थ को जरासा ज्ञान का उघाड़ हुआ और वह कहे, मैं पर का कर सकता हूँ - आश्चर्य है!

प्रश्न 193- संसार में कितने प्रकार की दृष्टि हैं ?

उत्तर - दो हैं। (1) द्रव्यदृष्टि, और (2) पर्यायदृष्टि।

प्रश्न 194- इन दोनों दृष्टियों का क्या फल है ?

उत्तर - द्रव्यदृष्टि का फल, मोक्ष है और पर्यायदृष्टि का फल, निगोद है।

छह कारक : विभिन्न अपेक्षाएँ एवं प्रयोग

प्रश्न 195- 'बाई ने रोटी बनाई' — इस पर व्यवहारकारक किस प्रकार घटित होते हैं ?

उत्तर - देखो, 'रोटी बनी' यह कार्य है और कार्य से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? बाई ने; अतः बाई कर्ता हुई। (2) बाई ने क्या किया ? रोटी बनाई; अतः रोटी कर्म हुआ। (3) रोटी किस साधन के द्वारा बनी ? चकला, बेलन के द्वारा बनी; अतः चकला, बेलन करण हुआ। (4) रोटी किसके लिए बनी ? खानेवाले के लिए बनी; अतः खानेवाला सम्प्रदान हुआ। (5) रोटी किसमें से बनी ? थाली में से बनी; अतः थाली अपादान हुआ। (6) रोटी किसके आधार से बनी ? चूल्हा, तवे के आधार से बनी; अतः चूल्हा, तवा अधिकरण हुआ।

देखो! इसमें बाई, कर्ता; रोटी, कर्म; चकला-बेलन, करण; खानेवाले, सम्प्रदान; थाली, अपादान और चूल्हा-तवा, अधिकरण - इस प्रकार सभी कारक भिन्न-भिन्न हैं। वास्तव में यह व्यवहारकारक असत्य हैं, मात्र उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से कहे जा सकते हैं।

प्रश्न 196- व्यवहारकारक को ही सत्य माने तो क्या होगा ?

उत्तर - यह महा अहंकाररूप अज्ञान अन्धकार है, उसका सुलटना दुर्निवार है। उसे कभी धर्म की प्राप्ति नहीं होगी।

प्रश्न 197- 'बाई ने रोटी बनाई' इसमें त्रिकाली की अपेक्षा छह निश्चयकारक लगाओ ?

उत्तर - रोटी बनी — यह कार्य है। कार्य से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? आटे ने बनाई; अत: आटा कर्म हुआ; (2) आटे ने क्या किया ? रोटी बनाई; अत: रोटी **कर्म** हुआ; (3) रोटी किस साधन से बनी ? आटे के साधन द्वारा; अत: आटा **करण** हुआ; (4) रोटी किसके लिए बनी ? आटे के लिए; अत: आटा **सम्प्रदान** हुआ; (5) रोटी किस में से बनी ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई का अभाव करके आटे में से बनी; अत: आटा **अपादान** हुआ; (6) रोटी किसके आधार से बनी। आटे के आधार से बनी; अत: आटा **अधिकरण** हुआ।

प्रश्न 198- आपने रोटी का कर्ता आटे को कहा। परन्तु आटा तो कनस्तर में पड़ा है, तब रोटी क्यों नहीं बनती ? तो कहना पड़ेगा - बाई, चकला, बेलन आवे तो रोटी बने - क्या यह बात ठीक नहीं है ?

उत्तर - नहीं भाई! हमने आटे को कर्ता कहा, वह तो मात्र परद्रव्यों से दृष्टि हटाने के लिए कहा। रोटी का कर्ता तो उसकी अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई है।

प्रश्न 199- रोटी का कर्ता अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय लोई क्षणिकउपादानकारण और रोटी कर्म; तो इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - (1) भूत-भूविष्य की पर्यायों से दृष्टि हट गयी, (2) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय की अपेक्षा आटा व्यवहारकारण हो गया। (3) अब रोटी के लिये अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण लोई की ओर देखना रहा।

प्रश्न 200- रोटी बनी — अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई की अपेक्षा छह कारक लगाओ ?

उत्तर - रोटी बनी — यह कार्य है; कार्य पर से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण लोई ने; अतः लोई **कर्ता** हुई; (2) अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादनकारण लोई ने क्या किया ? रोटी बनाई; अतः रोटी **कर्म** हुई; (3) रोटी किस साधन द्वारा बनी ? अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई के साधन द्वारा; अतः लोई **करण** हुई। (4) किसके लिए रोटी बनानी ? अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई के लिए; अतः लोई **सम्प्रदान** हुई; (5) रोटी किसमें से बनी ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण लोई में से; अतः लोई **अपादान** हुई; (6) रोटी किसके आधार से बनी ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादान-कारण लोई के आधार से; अतः लोई **अधिकरण** हुई।

प्रश्न 201- कोई चतुर प्रश्न करता है कि जैनशास्त्रों में आता है कि पर्याय में से पर्याय नहीं आती है; अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है, तब फिर अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय

क्षणिकउपादानकारण लोई, कर्ता और रोटी, कर्म – यह कैसे हो सकता है ?

उत्तर – अरे भाई ! पर्याय में से पर्याय नहीं आती; अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है, तुम्हारी यह बात ठीक है – परन्तु हमने तो, रोटी बनने से पूर्व, कौनसी पर्याय का अभाव करके होती है, उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई को कर्ता कहा है परन्तु वह भी रोटी का सच्चा कर्ता नहीं है।

प्रश्न 202– यदि लोई भी रोटी का सच्चा कर्ता नहीं है तो फिर रोटी का सच्चा कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही रोटी का सच्चा कर्ता है और रोटी बनी, वह कर्म है, क्योंकि जैसा कारण होता है, वैसा ही कार्य होता है।

प्रश्न 203– उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण, रोटी-कर्ता और रोटी बनी, यह कर्म; इस पर छह कारक किस प्रकार लगेंगे ?

उत्तर – 'रोटी बनी' यह कर्म / कार्य है, कार्य से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? रोटी उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारणा, रोटी ने; अत: रोटी **कर्ता** हुई; (2) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण रोटी ने क्या किया ? रोटी बनाई; अत: रोटी **कर्म** हुई। (3) रोटी किस साधन के द्वारा बनाई ? उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, रोटी के साधन द्वारा; अत: रोटी **करण** हुई; (4) रोटी किसके लिए बनाई ? उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण रोटी के लिए; अत: रोटी **सम्प्रदान** हुई; (5) रोटी किसमें से बनी ? उस समय

पर्याय की योग्यता **क्षणिकउपादानकारण** रोटी में से बनी; अत: रोटी **अपादान** हुई; (6) रोटी किसके आधार से बनी ? उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, रोटी के आधार से; अत: रोटी **अधिकरण** हुई। इस प्रकार रोटी बनने का वास्तविक करण-कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 204- उस समय पर्याय की योग्यता से ही रोटी बनी; और से नहीं; इसे जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - संसार में जो-जो कार्य होता है, वह अपनी-अपनी उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ है, हो रहा है और होता रहेगा - ऐसा निर्णय होते ही दृष्टि, अपने स्वभाव पर आ जाती है, तब वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता को माना।

प्रश्न 205- केवलज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से केवलज्ञान की प्राप्ति हुई, इसमें (1) निमित्त कारण - चारों प्रकार के छह कारक लगाओ; (2) त्रिकाली उपादानकारण; (3) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्ती पर्याय क्षणिकउपादानकारण; (4) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण; (5) बढ़ई ने रथ बनाया; (6) मैंने दही में से घी निकाला; (7) क्या औपशमिक-सम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का उपशम हुआ; (8) ज्ञान का क्षयोपशम होने से ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम हुआ; (9) क्या मैंने कपड़े बिछाये; (10) मैं जोर से बोलता हूँ; (11) निमित्त से उपादान में कार्य होता है; (12) क्या मैंने रुपया कमाया; (13) क्या कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया ?

उत्तर - सभी प्रश्नों पर प्रश्न क्रमाँक 197 से 204 तक स्वयं अभ्यास करें ?

प्रश्न 206- जब 'कार्य उस समय पर्याय की योग्यता' से होता है, तब (1) निमित्त; (2) त्रिकालीउपादान; (3) अनन्तर -पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण और तत्समय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण अपेक्षा, कथन क्यों किया है ?

उत्तर - (1) द्रव्य, उचित बहरङ्ग साधनों की सन्निधि के सद्भाव से अनेक प्रकार की अनेक अवस्थाएँ करता है। (श्री प्रवचनसार, गाथा 95 की टीका) (2) प्रति समय प्रत्येक द्रव्य त्रिस्वभावस्पर्शी (उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य-इन तीन स्वभावयुक्त) होता है और कार्य के उत्पादन के समय बहिरङ्ग साधनों (निमित्त) की उपस्थिति होती है। (श्री प्रवचनसार, गाथा 102 की टीका) (3) इससे यह सिद्ध होता है कि उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य और बहिरङ्ग साधनों का समय एक ही होता है - ऐसा स्वाभाविक नियम है; इसलिए कार्य की उत्पत्ति के समय उचित निमित्त होता ही है। (4) जब उत्पाद होता है, वहाँ पूर्व पर्याय का अभाव; त्रिकाली में से होता है और वहाँ अपनी योग्यता से निमित्त भी स्वयं होता ही है - यह ज्ञान कराने की अपेक्षा कथन है।

प्रश्न 207- जब-जब कार्य होता है तब अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके ही त्रिकाली उपादानकारण में से होता है, तब निमित्त होता ही है - ऐसा आप कहना चाहते हैं ?

उत्तर - हाँ, भाई! बात तो ऐसी ही है - परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए - (1) कोई मात्र उत्पाद को माने, व्यय को न माने, त्रिकाली को न माने और निमित्त को न माने तो झूठा है। (2) कोई मात्र व्यय को माने, अन्य को न माने तो झूठा है। (4) मात्र निमित्त को माने, अन्य को न माने तो झूठा है। (5) चारों की सत्ता है, लेकिन अपनी-

अपनी है; एक-दूसरे में से नहीं होते। (6) परन्तु जहाँ उत्पाद होगा, वहाँ व्यय का अभाव और त्रिकाली होगा और निमित्त भी होगा। (7) जहाँ व्यय होगा, वहाँ उत्पाद और त्रिकाली भी होगा। (8) चारों का एक ही समय है। उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य एक ही में होता है; निमित्त पर होता है; क्योंकि कहा है — उपादान निजगुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय। भेदज्ञान परमाण विधि, बिरला बूझे कोय।

प्रश्न 208- क्या विकारीभावों में भी छह कारक घटित होते हैं ?

उत्तर - हाँ घटित होते हैं, क्योंकि विकारीभाव भी निरपेक्ष हैं।

प्रश्न 209- विकारीभावों को शास्त्रों में निरपेक्ष क्यों कहा है ?

उत्तर - (1) विकारीभाव एक समय की पर्याय हैं, वह अपने अपराध से ही, अपने षट् कारक से स्वयं होता है। (2) विकारीभावों के समय, कर्म का निमित्त होता है, परन्तु विकार, कर्म ने नहीं कराया। विकार, कर्म के उदय की अपेक्षा के बिना होता है। (3) विकारीभाव को अपना एक समय का दोष जानकर, त्रिकाली स्वभाव दोषरहित है, उसका आश्रय लेकर अभाव करे; इसलिए शास्त्रों में विकारीभावों को निरपेक्ष कहा है।

प्रश्न 210- विकारीभावों को शास्त्रों में (1) अशुद्ध-निश्चयनय से जीव का कहा है; (2) व्यवहार से जीव का कहा है; (3) पर्यायार्थिकनय से जीव का कहा है; (4) अशुद्ध पारिणामिकभाव कहा है; (5) औदयिकभाव कहा है - वहाँ ऐसा कहने का तात्पर्य क्या है ?

उत्तर - (1) विकारीभाव, जीव की पर्याय में होते हैं; इस अपेक्षा निश्चय कहा और अशुद्ध हैं, इसलिए अशुद्ध कहा; अशुद्ध-

निश्चयनय से विकारीभाव, जीव के कहे, ताकि जीव, शुद्ध निश्चयनय का त्रिकाली स्वभाव का, आश्रय लेकर विकारीभावों का अभाव करे; (2) विकारीभाव, पराश्रित होने से व्यवहार कहा; निश्चय स्वाश्रित होता है; इसलिए निश्चय का आश्रय लेकर विकारीभाव, जो पराश्रित है, उनका अभाव करे; (3) विकारीभाव, पर्याय में हैं; द्रव्य-गुण में नहीं है। द्रव्य-गुण अभेद का आश्रय लेकर, पर्याय में से विकार का अभाव करे; (4) धवला में विकारीभावों को अशुद्धपारिणामिकभाव कहा है, ताकि पात्रजीव शुद्ध पारिणामिकभाव का आश्रय लेकर, विकारीभावों का अभाव करे; (5) विकारीभावों को औदयिकभाव कहा है ताकि पात्र जीव पारिणमिकभाव का आश्रय लेकर, औदयिकभाव का अभाव करे। यह न्यारी-न्यारी अपेक्षा कहने का तात्पर्य है।

प्रश्न 211- 'आत्मा, प्रज्ञा द्वारा-भेदज्ञान करता है'। इस वाक्य में कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - तीन — आत्मा-कर्ता; प्रज्ञा द्वारा-करण; भेदज्ञान करता है-कर्म।

प्रश्न 212- आत्मा ने ज्ञान दिया। इस वाक्य में कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - दो — आत्मा-कर्ता; ज्ञान दिया-कर्म।

प्रश्न 213- आत्मा ने, ज्ञान द्वारा, ज्ञान दिया, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - तीन — आत्मा ने कर्ता; ज्ञान द्वारा-करण; ज्ञान दिया कर्म।

प्रश्न 214- आत्मा ने, ज्ञान द्वारा, ज्ञान के लिए, ज्ञान दिया, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - चार — आत्मा ने, कर्ता; ज्ञान द्वारा-करण; ज्ञान के लिए-सम्प्रदान; ज्ञान दिया-कर्म।

प्रश्न 215- 'अरहन्तभगवान ने केवलज्ञान प्रगट किया।' - इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - अरहन्तभगवान-कर्ता; केवलज्ञान-कर्म।

प्रश्न 216- आत्मा ने, ज्ञान द्वारा, ज्ञान के लिए, ज्ञान में से ज्ञान दिया, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - पाँच — आत्मा-कर्ता; ज्ञान द्वारा-करण; ज्ञान के लिए-सम्प्रदान; ज्ञान में से-अपादान; ज्ञान दिया कर्म।

प्रश्न 217- आत्मा में से, शुद्धता आती है, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - दो — आत्मा में से अपदान; शुद्धता-कर्म।

प्रश्न 218- निश्चयरत्नत्रय का कारण, शुद्ध आत्मा है - इसमें कितने - कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - निश्चयरत्नत्रय-कर्म; कारण-करण; शुद्ध आत्मा-कर्ता।

प्रश्न 219- मैं, अपने हित के लिए, अभ्यास करता हूँ - इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - तीन — मैं कर्ता; अपने हित के लिए-सम्प्रदान; अभ्यास करता हूँ-कर्म।

प्रश्न 220- ऊँचे निमित्तों द्वारा, जीव ऊँचा चढ़ता है, इसमें कितने कारकों के सम्बन्ध में भूल है ?

उत्तर - करण, कर्ता, कर्म - तीन कारकों के सम्बन्ध में भूल है।

प्रश्न 221- महापुरुष अपने में से दूसरों को देते हैं, इसमें कितने कारकों की भूल सिद्ध होती ?

उत्तर - कर्ता, अपादान, कर्म, तीन कारकों की भूल सिद्ध होती है।

प्रश्न 222- छह कारकों को स्वतन्त्रता से क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर - जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं; प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का व्यय, दूसरी का उत्पाद और गुण, ध्रौव्य रहता है। - ऐसा प्रत्येक द्रव्य के, गुण में हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में होता रहेगा - यह वस्तुस्वरूप सिद्ध होता है।

प्रश्न 223- उक्त वस्तुस्वरूप जाननेवालों को क्या-क्या लाभ होता है ?

उत्तर - (1) केवली के समान ज्ञाता-दृष्टाबुद्धि प्रगट हो जाती है। (2) प्रत्येक वस्तु कैसी है और क्या करती है - ऐसा सच्चा ज्ञान हो जाता है। (3) अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है - इस मन्त्र का रहस्य, अपना अनुभव हुए बिना समझ में नहीं आ सकता है; ज्ञानी इस मन्त्र का रहस्य जानते हैं और सदैव सुखी रहते हैं। (4) अज्ञानी, अनादि से व्यवहार षट्कारक के अवलम्बन में पागल था, वह मिटकर शुद्धात्मानुभूति प्रगट हो जाती है। (5) ज्ञानी जानता है कि मेरा आत्मा अनादि-अनन्त किसी में गयी नहीं, मिला नहीं है; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य, कोई किसी में गया नहीं, कभी जावेगा नहीं। (6) यह वस्तुस्वरूप, अर्थात् सुख होने का मन्त्र सारे आगम का सार है, यह वीतरागविज्ञानता और भेदज्ञान है।

जय महावीर-जय महावीर!

2

कारण-कार्य रहस्य

उपादान-उपादेय

प्रश्न 1 - कार्य किस प्रकार होता है ?

उत्तर - कारणानुविधायित्वादेव कार्याणि।

(श्री समयसार, गाथा 130-131 टीका)

'**कारणानुविधायीनि कार्याणि**' अर्थात् कारण का अनुसरण करके ही कार्य होते हैं। कार्य को कर्म, अवस्था, पर्याय, हालत, दशा, परिणाम और परिणमित भी कहते हैं।

(श्री समयसार, गाथा 68 टीका)

(यहाँ कारण को उपादानकारण समझना, क्योंकि उपादानकारण ही सच्चा कारण हैं।)

प्रश्न 2 - कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - कार्य की उत्पादक सामग्री को कारण कहते हैं।

प्रश्न 3 - उत्पादक सामग्री के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं — उपादान और निमित्त।

प्रश्न 4 - उपादान के सामने क्या है ?

उत्तर - उपादान के सामने, निमित्त है।

प्रश्न 5 - निज शक्ति के सामने क्या है ?

उत्तर - निज शक्ति के सामने, परयोग है।

प्रश्न 6 – निश्चय के सामने क्या है ?

उत्तर – निश्चय के सामने, व्यवहार है।

प्रश्न 7 – उपादानकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो पदार्थ कार्यरूप परिणमित हो, उसे उपादानकारण कहते हैं।

प्रश्न 8– उपादानकारण कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर – तीन प्रकार के हैं। (1) त्रिकाली उपादानकारण, (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण, (3) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण।

प्रश्न 9– त्रिकाली उपादानकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो द्रव्य स्वयं कार्यरूप परिणमित हो, उसे त्रिकाली उपादानकारण कहते हैं। जैसे, घड़े की उत्पत्ति में मिट्टी, उसका त्रिकाली उपादानकारण है।

प्रश्न 10 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर – अनादि काल से द्रव्य में जो पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है, उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण और अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय, कार्य है। जैसे, मिट्टी का घड़ा होने में, मिट्टी का पिण्ड वह घड़े की अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण और घड़ारूपकार्य, वह पिण्ड की अनन्तरउत्तरक्षण-वर्तीपर्याय है। अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय का व्यय, वह क्षणिक-उपादानकारण कहा जाता है। (यह पर्यायार्थिकनय से है।)

प्रश्न 11 – (1) 'अनन्तर पूर्व' शब्द क्या बताता है, (2) और 'अनन्तर' शब्द न लगाये तो नुकसान है ?

उत्तर – (1) जो कार्य हुआ, उससे तत्काल पहिले की पर्याय को बताता है। जैसे दस नम्बर पर घड़ा बना तो नौ नम्बर की पर्याय को बताता है। (2) और यदि 'अनन्तर' शब्द न लगाया जाये तो जो कार्य हुआ– उससे पहिले की सब पर्यायों का ग्रहण हो जायेगा, जो ठीक नहीं है।

प्रश्न 12– उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो कार्य हुआ — वह उस समय की पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण और वही पर्याय, कार्य है। यही सच्चा कारण है।

प्रश्न 13– योग्यता किसे कहते हैं ?

उत्तर – योग्यतैव विषयप्रतिनियमकारणामिति

अर्थात्, योग्यता ही विषय का प्रतिनियामित कारण है। *(न्याय दीपिका, पृष्ठ 27)[* यह कथन, ज्ञान की योग्यता (सामर्थ्य) को लेकर है, परन्तु योग्यता का कारणपना सर्व में सर्वत्र समान है। *]*

प्रश्न 14 – उपादान का शाब्दिक अर्थ क्या है ?

उत्तर – उप=समीप। आ=मर्यादापूर्वक। दान=दान देना। द्रव्य के समीप में से कौन-सी, जैसी पर्याय की योग्यता है, उस पर्याय को प्राप्त होना। यह उपादान का शाब्दिक अर्थ है।

प्रश्न 15 – इन तीनों उपादानकारणों में से कार्य का सच्चा कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही वास्तव में कार्य का सच्चा कारण है। त्रिकाली उपादानकारण; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण और निमित्तकारण, सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 16 – त्रिकाली उपादानकारण, कार्य का सच्चा कारण क्यों नहीं है ?

उत्तर – कार्य एक समय का है और यदि कार्य का कारण अनादि-अनन्त त्रिकाली हो तो कार्य भी अनादि-अनन्त होना चाहिए; इसलिए कार्य का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही है; त्रिकाली उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 17 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण कार्य का सच्चा कारण क्यों नहीं है ?

उत्तर – कार्य स्वयं एक समय का सत् है, वह अनन्तरपूर्वपर्याय में से आवे, ऐसा नहीं है क्योंकि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती और पर्याय में से पर्याय नहीं आती; इसलिए कार्य का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही है; अनन्तपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण, सच्चा कारण नहीं है। याद रहे – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण को कार्य का, अभावरूप कारण कहा जाता है।

प्रश्न 18- कार्य को उपादानकारण की अपेक्षा क्या कहते हैं ?

उत्तर – उपादेय कहते हैं।

प्रश्न 19- उपादान-उपादेयसम्बन्ध किसमें होता है ?

उत्तर – उपादान-उपादेयसम्बन्ध एक ही पदार्थ में लागू होता है।

प्रश्न 20 – 'उपादेय' शब्द कहाँ-कहाँ प्रयोग होता है ?

उत्तर – (1) उपादानकारण की अपेक्षा कार्य को उपादेय कहते हैं। (2) त्रिकाली स्वभाव जो अनादि-अनन्त है, उसे आश्रय करनेयोग्य उपादेय कहते हैं। (3) मोक्षमार्ग को एकदेश प्रगट

करनेयोग्य उपादेय कहते हैं। (4) मोक्ष को पूर्ण प्रगट करनेयोग्य उपादेय कहते हैं।

यहाँ उपादान-उपादेय प्रकरण में, जो कार्य होता है, उसे उपादेय कहना है। इसलिए यहाँ पर कार्य को उपादेय कहेंगे। याद रखना— व्यवहारनय को उपादेय कहा, वहाँ उपादेय का अर्थ 'जानना' समझना।

'कुम्हार ने चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि से घड़ा बनाया।' इस वाक्य में 'घड़ा' कार्य पर उपादान-उपादेय का 25 प्रश्नोत्तरों द्वारा स्पष्टीकरण।

प्रश्न 21- कुम्हार,चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और घड़ा, उपादेय। क्या यह उपादान-उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर मिट्टी त्रिकाली उपादानकारण और घड़ा, उपादेय है।

प्रश्न 22 - यदि कोई चतुर-कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और घड़ा, उपादेय — ऐसा ही माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि नष्ट होकर मिट्टी बन जाए तो ऐसा माना जा सकता है कि कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और घड़ा, उपादेय; किन्तु ऐसा नहीं हो सकता क्योंकि उपादन-उपादेय, तत्स्वरुप में ही, अर्थात् अभिन्न सत्तावान पदार्थों में ही होता है; जिनकी सत्ता-सत्त्व भिन्न-भिन्न है, ऐसे दो पदार्थों में नहीं होता है।

प्रश्न 23 - जो कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों को ही घड़े का (कार्य का) सच्चा कारण मानते

हैं, उन्हें जिनवाणी में किन-किन नामों से सम्बोधन किया है।

उत्तर - (1) जो निमित्तकारणों से ही कार्य की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें श्री समयसार, कलश 55 मे कहा है कि 'उनका सुलटना दुर्निवार है।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6 में कहा है कि 'तस्य देशना नास्ति; अर्थात् वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है।' (4) श्री आत्मावलोकन में कहा है कि 'यह उसका हरामजादीपना है।'

प्रश्न 24 - मिट्टी, त्रिकाली उपादानकारण और घड़ा, उपादेय इसे समझने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों से घड़ा बना— ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है। (2) आहारवर्गणारूप स्कन्ध मिट्टी को छोड़कर अन्य वर्गणाओं से दृष्टि हट जाती है। (3) अब यहाँ पर घड़ा बनने के लिए मात्र त्रिकाली उपादानकारण मिट्टी की तरफ देखना रहा - इतना लाभ हुआ।

प्रश्न 25- कोई चतुर प्रश्न करता है कि यदि कुम्हार, चाक आदि से घड़ा नहीं बनता, मिट्टी से बनता है तो मिट्टी तो पड़ी है, घड़ा क्यों नहीं बनता ? अतः मिट्टी, उपादानकारण और घड़ा, उपादेय - यह आपकी बात सिद्ध नहीं होती है।

उत्तर - अरे भाई — हमने मिट्टी को घड़े का उपादानकारण कहा है, वह तो कुम्हार, चाक, कीली डण्डा, हाथ आदि निमित्त-कारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से कहा है। वास्तव में मिट्टी भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 26 - यदि मिट्टी भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है, तो घड़े का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - मिट्टी में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है; मानों दस नम्बर पर घड़ा बना, तो उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती नो (9) नम्बर की पर्यायरूप पिण्ड क्षाणिकउपादानकारण, घड़े का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 27 - मिट्टी में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य-गुण, अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय और एक पर्याय का उत्पाद एक ही समय में स्वयं स्वत: अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, करता है और भविष्य में करता रहेगा - ऐसा वस्तुस्वरूप है। इसी कारण अनादि काल से मिट्टी में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

प्रश्न 28 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादान -कारण और घड़ा, उपादेय -इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) इसके अतिरिक्त भूत-भविष्यत् की पर्यायों से दृष्टि हट गयी। (2) मिट्टी, त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी व्यवहार-कारण हो गया। (3) अब यहाँ पर घड़ा बनने के लिए मात्र अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण पिण्ड की तरफ देखना रहा।

प्रश्न 29 - कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है - ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना कि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण पिण्ड और घड़ा, उपादेय है - यह बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर – अरे भाई! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है – यह जिनवाणी की बात बिल्कुल ठीक है, परन्तु हमने तो कार्य से पहले कौनसी पर्याय होती है – उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड को, घड़े का क्षणिकउपादानकारण कहा है। वस्तुतः अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड भी घड़े का सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 30 – यदि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है, तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है।

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, घड़े का अभावरूप कारण है, वह कालसूचक है परन्तु कार्य का जनक नहीं है।

प्रश्न 31 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण पिण्ड भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है – तो वास्तव में घड़े का सच्चा उपादानकारण कौन है।

उत्तर – वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही घड़े का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 32 – वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण ही घड़े का सच्चा उपादानकारण है – ऐसा जानने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर – (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण पिण्ड की तरफ घड़े के लिए देखना नहीं रहा। (2) अब एकमात्र घड़े के लिए उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण की तरफ ही देखना रहा – यह लाभ हुआ।

प्रश्न 33 – (1) मिट्टी, त्रिकाली उपादानकारण और घड़ा,

उपादेय (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण और घड़ा, उपादेय। (3) उस समय पर्याय की योग्यता घड़ा, क्षणिकउपादानकारण और घड़ा, उपादेय - ऐसा शास्त्रों में बताया परन्तु इतना लम्बा-कथन करने से क्या लाभ था? सीधे कह देते कि कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है।

उत्तर - (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से त्रिकाली उपादानकारण मिट्टी को बताना आवश्यक था। (2) भूत और भविष्यत् पर्यायों से पृथक् करने की अपेक्षा से और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिए अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण पिण्ड को बताना आवश्यक था। (3) अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण से पृथक् करने की अपेक्षा से और कार्य के सच्चे कारण ज्ञान कराने के लिए, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; इसलिए तीनों कारणों का सच्चा ज्ञान कराने के लिए शास्त्रों में इतना लम्बा कथन करके समझाया है।

प्रश्न 34 - घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से बना है; इसे जानने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर - जैसे, घड़ा उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बना है; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे - ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 35 - विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय

पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे - ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान होते ही क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर - (1) अनादि काल की पर में करूँ-करूँ की मिथ्यामान्यता का अभाव होना; (2) दृष्टि अपने ज्ञायकस्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से शुद्धि में वृद्धि होकर, मोक्ष लक्ष्मी का नाथ होना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पंच परावर्तन का अभाव होकर, पंच परमेष्टियों में गिनती होना - ये लाभ होते हैं।

प्रश्न 36 - विश्व में प्रत्येक कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है, तब कौन-कौन सी चार बातें एक साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं।

उत्तर - (1) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण (उत्पाद)

(2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण (व्यय)

(3) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य), और

(4) निमित्तकारण।

ये चार बातें प्रत्येक कार्य में एक ही साथ एक ही काल में नियम से होती हैं। *(श्री प्रवचनसार, गाथा 95)*

प्रश्न 37 - क्या उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से ही उत्पन्न कार्य, निरपेक्ष है।

उत्तर - हाँ, कार्य स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखता है; इसलिए निरपेक्ष है, और अपनी अपेक्षा रखता है; इसलिए सापेक्ष है। पात्र भव्य जीवों को प्रथम, निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए; फिर जो कार्य

हुआ, उसका अभावरूप कारण कौन है, त्रिकालीकारण कौन है और निमित्तकारण कौन है ? इन बातों का ज्ञान करना चाहिए, क्योंकि कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

प्रश्न 38 - घड़ा (कार्य) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है - ऐसा मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जाती है ?

उत्तर - (1) कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारण; (2) मिट्टी; (3) अनन्तरपूर्णक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण आदि पर दृष्टि नहीं जाती है।

प्रश्न 39 - 'कुम्हार, कारण और घड़ा, कार्य' - कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं ?

उत्तर - पुद्गल आहारवर्गणा के स्कन्ध मिट्टी में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय पिण्ड क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से घड़ा बना है; कुम्हार से नहीं बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को माना और कुम्हार से घड़ा बना है - ऐसी मान्यतावाले ने **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को नहीं माना।

प्रश्न 40- मिट्टी, कारण और घड़ा, कार्य - कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से घड़ा (कार्य) हुआ है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को माना; और मिट्टी से घड़ा बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को नहीं माना।

प्रश्न 41 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिक-उपादानकारण और घड़ा, कार्य - कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं ?

उत्तर - घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण से बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को नहीं माना।

नोट : *जिस प्रकार यहाँ मिट्टी को उपादान और घड़े को उपादेय और कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा आदि को निमित्त पर उपादान-उपादेय के प्रश्नोत्तर लगाये गये हैं; इसी प्रकार (1) कुम्हार (2) चाक (3) कीली, डण्डा उपादान एवं इनकी अपनी-अपनी क्रिया उपादेय तथा मिट्टी / घड़ा निमित्त - इस प्रकार प्रत्येक पर अलग-अलग प्रश्नोत्तर लगाये जा सकते हैं।*

कुम्हार ने चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि से घड़ा बनाया। इस वाक्य में से 'अज्ञानी कुम्हार' के 'राग' पर उपादान-उपादेय के 25 प्रश्नोत्तरों के द्वारा स्पष्टीकरण।

प्रश्न 63 - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और राग, उपादेय - क्या यह उपादान-उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय (कार्य) है।

प्रश्न 64 - यदि कोई चतुर घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपदानकारण और राग, उपादेय - ऐसा ही माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि नष्ट होकर, चारित्रगुण बन जावे तो ऐसा माना जा सकता है कि घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और राग, उपादेय किन्तु ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि उपादान-उपादेय, तत्स्वरूप में ही (अभिन्नसत्तावान पदार्थों में ही) होता है। जिनकी सत्ता-सत्व भिन्न-भिन्न है - ऐसे दो पदार्थों में उपादान-उपादेय नहीं होता है।

प्रश्न 65 - जो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्त-कारणों को ही राग का सच्चा कारण मानते हैं, उन्हें जिनवाणी में किन-किन नामों से सम्बोधन किया है?

उत्तर - (1) जो निमित्तकारणों से ही कार्य की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें श्री समयसार, कलश 55 में कहा है कि 'उनका सुलटना दुर्निवार है और यह उनका अज्ञान-मोह अन्धकार।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6 में कहा है कि 'तस्य देशना नास्ति, अर्थात् वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है।' (4) श्री आत्मवलोकन में कहा है कि 'यह उसका हरामजादीपना है।'

प्रश्न 66 - चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय। इसे समझने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर - (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों से राग हुआ - ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है; (2) आत्मा में अनन्त गुण हैं; उनमें से चारित्रगुण को अतिरिक्त दूसरे गुणों से दृष्टि हट जाती है; (3) राग के लिए, मात्र त्रिकाली उपादानकारण चारित्रगुण की तरफ देखना रहा - इतना लाभ हुआ।

प्रश्न 67 - कोई चतुर प्रश्न करता है कि यदि चारित्रगुण,

राग का कारण हो तो सिद्धों को भी राग होना चाहिए किन्तु ऐसा तो होता नहीं है; अतः घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारण हो तो राग हो और आप कहते हो, रागरूप कार्य का निमित्तकारणों से कोई सम्बन्ध नहीं है; इसलिए चारित्रगुण, उपादानकारण और राग, उपादेय -यह बात मिथ्या होती है।

उत्तर - अरे भाई! हमने चारित्रगुण को राग का उपादानकारण कहा है, वह तो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से कहा है; वास्तव में चारित्रगुण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 68 - यदि चारित्रगुण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो राग का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - चारित्रगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है; मानों दस नम्बर पर्याय में राग हुआ तो उसमें अनन्तरपूर्व -क्षणवर्तीपर्याय, नौ नम्बर, क्षणिकउपादानकारण, राग का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 69 - चारित्रगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य व गुण अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का उत्पाद एक ही समय में स्वयं स्वतः अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, कर रहा है और भविष्य में करना रहेगा— ऐसा वस्तुस्वरूप है। इसी कारण अनादि काल से चारित्रगुण में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

प्रश्न 70 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और राग, उपादेय - इसको मानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – (1) भूत-भविष्यत् की पर्यायों से दृष्टि हट गयी; (2) चारित्रगुण जो त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी अब व्यवहारकारण हो गया; (3) अब राग के लिए, मात्र अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण की तरफ देखना रहा – यह लाभ हुआ।

प्रश्न 71– कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है – ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना कि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण और राग, उपादेय – यह आपकी बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर – अरे भाई! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है, यह जिनवाणी को बात बिल्कुल ठीक है – परन्तु हमने तो कार्य से पहिले कौनसी पर्याय होती है – उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय को राग का उपादानकारण कहा है, परन्तु अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 72 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है ?

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, राग का अभावरूप कारण और कालसूचक है, किन्तु कार्य का जनक नहीं है।

प्रश्न 73 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो वास्तव में राग का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही राग का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 74 – वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण ही राग का सच्चा उपादानकारण है – ऐसा मानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती पर्याय, क्षणिकउपादानकारण की तरफ भी देखना नहीं रहा; (2) राग के लिए एक मात्र उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण की तरफ ही देखना रहा, यह लाभ हुआ।

प्रश्न 75 – (1) चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण और राग, उपादेय; (3) उस समय पर्याय की योग्यता राग, क्षणिक -उपादानकारण और राग, उपादेय – ऐसा शास्त्रों में बताया है; परन्तु इतना लम्बा कथन करने से क्या लाभ था ? सीधे कह देते कि कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है ?

उत्तर – (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण को बताना आवश्यक था; (2) भूत-भविष्यत् की पर्यायों से पृथक् करने की अपेक्षा से और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिए, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; (3) अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण से पृथक् करने की अपेक्षा से और कार्य के सच्चे कारण का ज्ञान कराने के लिए उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; इसलिए शास्त्रों में इतना लम्बा कथन करके समझाया है।

प्रश्न 76 – राग, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है, इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – जैसे – राग, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ही हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 77 – विश्व में सभी कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही हो चुके हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे -ऐसा केवली के समान सच्चाज्ञान होते ही क्या-क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर – (1) अनादि काल की पर में करूँ-करूँ की मिथ्या बुद्धि का अभाव; (2) दृष्टि अपने ज्ञायकस्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से शुद्धि में वृद्धि करके, मोक्ष लक्ष्मी का नाथ होना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पञ्च परावर्तन का अभाव होकर, पंच परमेष्टियों में उनकी गिनती होना – ये ये अपूर्व कार्य देखने में आते हैं।

प्रश्न 78 – विश्व में प्रत्येक कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है, तब कौन-कौन सी चार बातें एक साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं ?

उत्तर – (1) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान-कारण (उत्पाद); (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय उपादानकारण (व्यय); (3) त्रिकाली उपादानकरण (ध्रौव्य); और (4) निमित्त-कारण – ये चार बातें प्रत्येक कार्य में एक ही साथ, एक ही काल में नियम से होती हैं। *[श्री प्रवचनसार, गाथा 95]*

प्रश्न 79 - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण से ही कार्य की उत्पत्ति होती है - क्या यह निरपेक्ष है ?

उत्तर - हाँ; कार्य स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखता है; इसलिए निरपेक्ष है और अपनी अपेक्षा रखता है; इसलिए सापेक्ष है। पात्र भव्य जीवों को प्रथम निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए, फिर जो कार्य हुआ—उसका अभावरूप कारण कौन ? त्रिकाली कारण कौन; और निमित्तकारण कौन है - इन बातों का ज्ञान करना चाहिए क्योंकि कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

प्रश्न 80 - राग, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है - ऐसा मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जातीं हैं ?

उत्तर - (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारण; (2) चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण; (3) अनन्तपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिकउपादानकारण पर दृष्टि नहीं जाती है।

प्रश्न 81 - घड़ा, कारण और राग, कार्य - कारणानुविधायीनि -कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के चारित्रगुण में से अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से राग हुआ है; घड़े के कारण नहीं हुआ तो **कारणानुविधीयान -कार्याणि** को माना; और घड़े के कारण राग हुआ है तो **कारणानुविधीयानिकार्याणि** को नहीं माना।

प्रश्न 82 - चारित्रगुण, कारण और राग, कार्य -कारणानु-विधायीनि -कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का

अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से राग हुआ है; चारित्रगुण के कारण नहीं हुआ तो कारणानुविधायीनि -कार्याणि को माना; और चारित्रगुण के कारण राग हुआ तो कारणानुविधायीनिकार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 83 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और राग, कार्य -कारणानुविधायीनिकार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - राग उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण से नहीं तो कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय के कारण राग हुआ, तो करणानुविधायीनिकार्याणि को नहीं माना।

कुम्हार ने चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि से घड़ा बनाया — इस वाक्य में से ज्ञानी कुम्हार के 'ज्ञान' पर उपादान-उपादेय का 25 प्रश्नोंत्तरों के द्वारा स्पष्टीकरण।

प्रश्न 84 - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग, उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय - क्या यह उपादान-उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है क्योंकि यहाँ पर आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय है।

प्रश्न 85 - यदि कोई चतुर - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग, उपादानकरण और ज्ञान, उपादेय - ऐसा ही माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग नष्ट होकर आत्मा

का ज्ञानगुण बन जाये तो ऐसा माना जा सकता है कि घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग; उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय परन्तु ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि उपादान-उपादेय तत्स्वरूप में ही (अभिन्न सत्तावान पदार्थ में ही) होता है; जिनकी सत्ता-सत्त्व भिन्न-भिन्न है - ऐसे दो पदार्थों में उपादान-उपादेय नहीं होता है।

प्रश्न 86 - जो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग आदि निमित्तकारणों को ही ज्ञान का सच्चा कारण मानते हैं, उन्हें जिनवाणी में किन-किन नामों से सम्बोधन किया है ?

उत्तर - (1) जो निमित्तकारणों में से ही कार्य की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें श्री समयसार, कलश 55 में कहा है कि 'उनका सुलटना दर्निवार है और यह उनका अज्ञान-मोह अन्धकार है।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6 में लिखा है कि 'तस्य देशना नास्ति, अर्थात् वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है।' (4) श्री आत्मावलोकन में कहा है कि 'यह उनका हरामजादीपना है।'

प्रश्न 87 - आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय इसे समझने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग आदि निमित्तकारणों से ज्ञान हुआ, ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव; (2) आत्मा में अनन्त गुण हैं, उनमें ज्ञानगुण को छोड़कर, अन्य गुणों से दृष्टि हटना; (3) अब, ज्ञान के लिए मात्र त्रिकाली उपादानकारण, ज्ञानगुण की तरफ देखना रहा - इतना लाभ रहा।

प्रश्न 88 - यदि ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय/ कार्य है, तो ज्ञानगुण तो सदैव विद्यमान है; घड़ा,

चाक, कीली, डण्डा, हाथ, रागसम्बन्धी ज्ञान सदा क्यों नहीं होता ? अतः यह आपकी बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर – अरे भाई, हमने आत्मा के ज्ञानगुण को ज्ञान का उपादान-कारण कहा है, वह तो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से कहा है। वास्तव में आत्मा का ज्ञानगुण भी ज्ञान का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 89 – आत्मा का ज्ञानगुण भी ज्ञान होने का सच्चा उपादानकारण नहीं है –तो ज्ञान का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है। मानो दस नम्बर पर इस सम्बन्धी ज्ञान हुआ तो उससे अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय नौ नम्बर क्षणिकउपादानकारण, यहाँ पर ज्ञान का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 90 – ज्ञानगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य व गुण अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय और एक पर्याय का उत्पाद एक ही समय में स्वयं स्वतः अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, करता है और भविष्य में करता रहेगा – ऐसा वस्तुस्वरूप है। इसी कारण अनादि काल से ज्ञानगुण में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

प्रश्न 91 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और ज्ञान, उपादेय – इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – (1) भूत-भविष्यत् की पर्यायों की दृष्टि हट गयी; (2) ज्ञानगुण जो त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी अब व्यवहार-

कारण हो गया; (3) अब ज्ञान के लिए मात्र अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिकउपादानकारण की ओर देखना रहा।

प्रश्न 92 - कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती हैं और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है - ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना की अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिक उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय है, यह बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर - अरे भाई ! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती और पर्याय में से पर्याय नहीं आती - यह जिनवाणी की बात बिल्कुल ठीक है, परन्तु हमने तो कार्य से पहिले कौन सी पर्याय होती है, उसका ज्ञान कराने की अपेक्षा से अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय को ज्ञान का क्षणिकउपादानकारण कहा है; वास्तव में अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय भी ज्ञान का सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 93 - यदि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय ज्ञान होने का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, ज्ञान होने का अभावरूप कारण है और कालसूचक है, परन्तु कार्य का जनक नहीं है।

प्रश्न 94 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण भी ज्ञान का सच्चा कारण नहीं है तो ज्ञान का वास्तविक उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही ज्ञान का वास्तविक उपादानकारण है।

प्रश्न 95 - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-

कारण ही ज्ञान का वास्तविक उपादानकारण है - ऐसा जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण की ओर ज्ञान के लिए देखना नहीं रहा; (2) अब ज्ञान के लिए एकमात्र उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण की ओर देखना रहा - यह लाभ हुआ।

प्रश्न 96 - (1) आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय; (3) उस समय पर्याय की योग्यता ज्ञान, क्षणिकउपादानकारण और ज्ञान, उपादेय - ऐसा शास्त्रों में बताया है। इतना लम्बा कथन करने से क्या लाभ था ? सीधे कह देते कि कार्य उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ही होता है ?

उत्तर - (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिये त्रिकाली उपादानकारण, ज्ञानगुण को बताना आवश्यक था; (2) भूत-भविष्यत् पर्यायों से पृथक् करने के लिये और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिये अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण से पृथक् करने और कार्य के सच्चे कारण का ज्ञान कराने के लिये, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण, ज्ञान को बताना आवश्यक था।

प्रश्न 97 - ज्ञान उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकरण से हुआ है - इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - जैसे, ज्ञान उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-

उपादानकारण से हुआ है; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ही हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 98 – विश्व में सभी कार्य उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान होते ही क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर – (1) अनादि काल की पर में करूँ–करूँ की मिथ्यामान्यता का अभाव; (2) दृष्टि अपने ज्ञायकस्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से शुद्धि में वृद्धि होकर, मोक्ष लक्ष्मी का नाथ होना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य–क्षेत्र–काल–भव–भावरूप पञ्च परावर्तन का अभाव होकर, पञ्च परमेष्टियों में गिनती होना – ये अपूर्व कार्य देखने में आते हैं।

प्रश्न 99 – विश्व में प्रत्येक कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है, तब कौन–कौनसी चार बातें एक साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं ?

उत्तर – (1) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण (उत्पाद); (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण (व्यय); (3) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य); और (4) निमित्त–कारण – ये चार बातें प्रत्येक कार्य में एक ही साथ, एक ही काल में नियम से होती हैं। *(श्री प्रवचनसार, गाथा 95)*

प्रश्न 100 – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान–

कारण से ही कार्य की उत्पत्ति होती है, क्या यह निरपेक्ष है ?

उत्तर – हाँ! कार्य स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखता है; इसलिए निरपेक्ष है, और अपनी अपेक्षा रखता है; इसलिए सापेक्ष है। पात्र भव्य जीवों को प्रथम कार्य की निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए, फिर जो कार्य हुआ, उसका अभावरूप कारण कौन है; त्रिकालीकारण कौन है; और निमित्तकारण कौन है ? – इन बातों का ज्ञान करना चाहिए, क्योंकि कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

प्रश्न 101 – ज्ञान, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है – ऐसा मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जाती है ?

उत्तर – (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग (निमित्तकारण); (2) ज्ञानगुण (त्रिकाली उपादानकान); (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण पर दृष्टि नहीं जाती है।

प्रश्न 102 – घड़ा, कारण और ज्ञान, कार्य – कारणानु-विधायीनिकार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता से ज्ञान हुआ है; घड़े के कारण नहीं, तो कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना; और ज्ञान, घड़े के कारण हुआ, तो कारणानुविधायीनि-कार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 103 – ज्ञानगुण, कारण और ज्ञान, कार्य –कारणानु-विधायीनिकार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण

से ज्ञान हुआ है; ज्ञानगुण के कारण नहीं, तो कारणानुविधायीनि –कार्याणि को माना; और ज्ञानगुण से ज्ञान हुआ है, तो कारणानुविधायीनि –कार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 104 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान–कारण और ज्ञान, कार्य – कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – ज्ञान–उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण से नहीं, तो कारणानुविधीयीनिकार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती–पर्याय क्षणिक उपादानकारण नौ नम्बर से ज्ञान हुआ तो कारणा–नुविधायीनिकार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 105 – कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है – ऐसा कहाँ कहा है ?

उत्तर – (1)'कारणानुविधायित्वादेव कार्याणां', अर्थात् कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; (2) कारण–अनुविधायित्वात् कार्याणां, अर्थात् कारण जैसे कार्य होते हैं; *[श्री समयसार, गाथा 130-131 की टीका]* (3) 'कारणानुविधायीनि कार्याणि', अर्थात् कारण जैसा ही कार्य होता है। *[श्री समयसार, गाथा 68 की टीका]* (4) 'तेहि पुणों पज्जाया', अर्थात् द्रव्य और गुणों से पर्यायें होती हैं; *[श्री प्रवचनसार, गाथा 93]* (5) गुणों के विशेषकार्य (परिणमन) को पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 106 – कार्य के पर्यावाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर – कार्य को कर्म, अवस्था, पर्याय, हालत, दशा, परिणाम, परिणति, व्याप्य, उपादेय, नैमित्तिक आदि कहा जाता है।

प्रश्न 107 - कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है, इसमें अनेकान्त किस प्रकार घटित होता है ?

उत्तर - कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; पर से नहीं, यह अनेकान्त है।

प्रश्न 108 - कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; पर से नहीं, इसमें कौन से कारण की बात है ?

उत्तर - 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण' की बात है।

प्रश्न 109 - 'कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; पर से नहीं', 'पर में' कौन-कौन से कारण आते हैं ?

उत्तर - (1) निमित्तकारण, (2) त्रिकाली उपादानकारण, (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण - ये सब पर में आते हैं।

***कारणानुविधायिनीकार्याणि - कुछ प्रश्नोत्तर**

प्रश्न 110 - गुरु, कारण और ज्ञान, कार्य, क्या कारणानु-विधायीनि -कार्याणि को माना ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं माना। क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; गुरु से नहीं, तब 'कारणानुविधायिनी कार्याणि' को माना।

प्रश्न 111 - ज्ञान, कार्य और इन्द्रियाँ, कारण; क्या कारणानु -विधायीनिकार्याणि को माना ?

**इस प्रकरण के प्रश्नोत्तरों में प्रत्येक बोल पर उपादान-उपादेय के प्रश्नोत्तर स्वयं लगाकर अभ्यास करना चाहिए।*

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; इन्द्रियों से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 112 – ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम, कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 113 – शुभभाव, कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना; क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; शुभभाव से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 114 – श्रद्धागुण, कारण और ज्ञान, कार्य-क्या कारणानु-विधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से; अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके; उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; श्रद्धागुण से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 115 - आत्मा, कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानु-विधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि आत्मा में तो अनन्त गुण हैं; इसलिए ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके; उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; आत्मा से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 116 - ज्ञानगुण, कारण और ज्ञान, कार्य - क्या कारणानु-विधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि ज्ञानगुण तो त्रिकाल है और ज्ञानरूप कार्य एक समय का है; इसलिए अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ; त्रिकाली ज्ञानगुण के कारण नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 117 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि कभी अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है; इसलिए उस समय पर्याय की योग्यता, ज्ञान क्षणिक-उपादानकारण और ज्ञान, कार्य, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 118 - ज्ञान, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ - ऐसा मानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - (1) अत्यन्त भिन्न देव, गुरु शास्त्र से, (2) आँख, नाक, कान आदि इन्द्रियों से, (3) ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशमादि से, (4) शुभभावों से, (5) श्रद्धा-चारित्र-आनन्द आदि अनन्त गुणों से, (6) अभेदद्रव्य से, (7) ज्ञानगुण से, (8) अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिकउपादानकारण से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 119 - अब वर्तमान ज्ञान के लिए कहाँ देखना रहा ?

उत्तर - वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण ही ज्ञान होने का सच्चा कारण है, उसकी ओर देखना रहा।

दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम से क्षयोपशमसम्यक्त्व हुआ— इस वाक्य में से (1) क्षयोपशमसम्यक्त्व, (2) दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम पर यहाँ केवल इस सम्बन्ध में तीन प्रश्नोत्तर दिए हैं ? उपादान-उपादेय के लगाकर समझायें।

प्रश्न 120 - क्षयोपशमसम्यक्त्व हुआ, उसका सच्चा कारण कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही क्षयोपशमसम्यक्त्व का सच्चा कारण है।

प्रश्न 121 - क्षयोपशमसम्यक्त्व का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही है। ऐसा जानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - (1) अत्यन्त भिन्न देव, गुरु, शास्त्र से, (2)दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम से, (3) आत्मा से, (4) ज्ञान-चारित्र आदि अनन्त गुणों से, (5) शुभभावों से, (6) श्रद्धागुण जो त्रिकाली उपादानकारण है, उससे, (7) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण

औपशमिकसम्यक्त्व से; क्षयोपशमसम्यक्त्वरूपकार्य के लिये दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 122 - क्षयोपशमिकसम्यक्त्व का द्रव्य, गुण और अभावरूप पर्याय का नाम बताओ ?

उत्तर - (1) आत्मा, द्रव्य हैं, (2) श्रद्धा, गुण है, (3) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण औपशमिकसम्यक्त्व की अभावरूप पर्याय है।

केवलज्ञानावरणी के अभाव से केवलज्ञान हुआ — इस वाक्य से (1) केवलज्ञान, (2) केवलज्ञानावरणी के अभाव पर यहाँ इस सम्बन्ध में केवल तीन प्रश्नोत्तर दिए हैं। उपादान-उपादेय के लगाकर समझायें —

प्रश्न 123 - केवलज्ञान का सच्चा कारण कौन हैं ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही केवलज्ञान का सच्चा कारण है।

प्रश्न 124 - उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान -कारण ही केवलज्ञान का सच्चा कारण है तो केवलज्ञान का सच्चा कारण कौन-कौन नहीं है ?

उत्तर - (1) चौथा काल, (2) केवलज्ञानावरणीकर्म का अभाव, (3) वज्रवृषभानाराचसंहनन, (4) आत्मा, (5) ज्ञानगुण के अतिरिक्त अन्य अनन्त गुण, (6) ज्ञानगुण, (7) शुक्ललेश्या आदि मन्दकषाय का शुभभाव (8) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण, भावश्रुतज्ञान - यह सब केवलज्ञान के सच्चे कारण नहीं हैं।

प्रश्न 125 - केवलज्ञान का (1) त्रिकाली उपादानकारण, (2) अभावरूप उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – (1) आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादनकारण है, और (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान, क्षणिकउपादान अभावरूप कारण है और केवलज्ञान, कार्य है।

प्रश्न 126 – कुम्हार ने घड़ा बनाया — इसमें कुम्हार, कारण और घड़ा बना, कार्य – 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को कब माना ?

उत्तर – आहारवर्गणारूप मिट्टी में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिक उपादानकारण पिण्ड का अभाव करके; उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से घड़ा बना; कुम्हार आदि से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 127 – घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण से बना है; कुम्हार आदि से नहीं – इसमें किस-किस का समावेश होता है ? प्रत्येक पर कारणानुविधायीकार्याणि को कब माना, कब नहीं ?

उत्तर – (1) कुम्हार का राग, (2) हाथ-कीली-चाक-डण्डा, (3) आहारवर्गणा को छोड़कर, बाकी वर्गणाएँ, (4) मिट्टी, (5) पिण्ड, यह सब 'कुम्हार आदि' में आते हैं; इनसे घड़ा नहीं बना है। एकमात्र उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से घड़ा बना – ऐसा माननेवाले ने ही कारणानुविधायीकार्याणि को माना है; अन्य ने नहीं।

प्रश्न 128 – 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' — इसमें ऐसा लगता है कि आत्मा का ज्ञान और शरीर की क्रिया, उपादानकारण और मोक्ष, कार्य – 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को माना ?

उत्तर – 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को बिल्कुल नहीं माना,

क्योंकि उस समय पर्याय की योग्यता मोक्ष, क्षणिक उपादानकारण और मोक्ष, कार्य है।

प्रश्न 129 - मोक्ष का त्रिकाली उपादानकारण और अभावरूप उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - आत्मा, त्रिकाली उपादानकारण है और अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय चौदहवाँ गुणस्थान अभावरूप क्षणिकउपादानकारण है।

प्रश्न 130 - मोक्ष का कारण कौन-कौन नहीं है ? प्रत्येक पर 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) औदारिकशरीर; (2) द्रव्यकर्म का अभाव; (3) वज्र -वृषभनाराचसंहनन; (4) चौथा काल; (5) आत्मा; (6) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण चौदहवाँ गुणस्थान; (7) आत्मा का ज्ञान और शरीर की क्रिया, इनमें कोई भी मोक्ष का कारण नहीं है। एक मात्र उस समय पर्याय की योग्यता, मोक्ष, क्षणिक उपादानकारण और मोक्ष हुआ, यह कार्य है - ऐसा माननेवाले ने ही कारणानुविधायीकार्याणि को माना है; अन्य ने नहीं।

प्रश्न 131 - यदि ऐसा है तो शास्त्रों में 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' - ऐसा क्यों कहा जाता है ?

उत्तर - यहाँ पर ज्ञान, अर्थात् सम्यग्ज्ञान, और क्रिया, अर्थात् सम्यक्चारित्र, दोनों मिलकर मोक्ष का कारण जानना चाहिए। शरीराश्रित उपदेश, उपवासादिक क्रिया और शुभरागरूप व्यवहार को मोक्षमार्ग नहीं जानना चाहिए। यह इस कथन का आशय है। जो 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' का अर्थ, ज्ञान और शरीर की क्रिया से मोक्ष है, ऐसा करते हैं, वह मिथ्या है।

प्रश्न 132 – आत्मा का ज्ञान और शरीर की क्रिया, उपादान-कारण और मोक्ष, कार्य – इस सूत्र का यह अर्थ गलत क्यों हैं ?

उत्तर – 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' का अर्थ जो शरीर की क्रिया और आत्मा का ज्ञान – ऐसा करते हैं, उन्हें व्याकरण का भी ज्ञान नहीं है, क्योंकि ज्ञान एक और शरीर की क्रिया, यह अनन्त पुद्गल परमाणुओं की क्रिया हैं। क्रियाभ्याम् द्विवचन है, यदि यहाँ पर 'भ्याम्' के बदले में तीसरी बहुवचन शब्द होता तो ठीक होता, परन्तु यहाँ पर 'भ्याम्' है, यह दो को बताता है; इसलिए जो ज्ञान और शरीर की क्रिया, यह मोक्ष है – ऐसा अर्थ करते हैं, वह मिथ्या अर्थ है। इसलिए पात्र जीवों को यहाँ ज्ञान का अर्थ, सम्यग्ज्ञान और क्रिया का अर्थ, सम्यक्चारित्र तथा इन दोनों को मिलाकर मोक्ष का कारण जानो और शरीर की क्रिया को मोक्षमार्ग मत जानो, ऐसा ज्ञानियों का आदेश है।

प्रश्न 133 – 'दर्शनमोहनीयकर्म का अभाव, कारण और क्षायिकसम्यक्त्वकार्य' – कारणानुविधीयीनि कार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि त्रिकाली उपादानकारण, श्रद्धागुण है और क्षायिकसम्यक्त्व, कार्य है।

प्रश्न 134 – कोई चतुर, दर्शनमोहनीयकर्म का अभाव, कारण और क्षायिकसम्यक्त्व, कार्य – ऐसा कहे तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – दर्शनमोहनीय के अभाव को जीव का श्रद्धागुण बनने का प्रसङ्ग उपस्थित होता है – यह दोष आता है।

प्रश्न 135 – क्षायिकसम्यक्त्व का सच्चा कारण कौन है और कौन नहीं ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही सच्चा कारण है, क्योंकि पर तो कारण है ही नहीं; श्रद्धागुण और अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण क्षयोपशमसम्यक्त्व भी सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 136 – क्षायिकसम्यक्त्व का सच्चा कारण 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही है' – ऐसा जानने से किन-किन कारणों से दृष्टि हट गयी।

उत्तर – (1) देव-गुरु; (2) दर्शनमोहनीय का अभाव; (3) श्रद्धागुण; (4) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण क्षयोपशमसम्यक्त्व से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 137 – भूतार्थस्वभाव, कारण और सम्यग्दर्शन, कार्य – इसमें भूतार्थस्वभाव कौन है ?

उत्तर – एकमात्र अनादि-अनन्त अमूर्त ज्ञायकस्वभाव ही भूतार्थ-स्वभाव है; भूतार्थस्वभाव के आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है।

प्रश्न 138 – सम्यग्दर्शन कार्य के लिए अभूतार्थ कौन-कौन हैं ?

उत्तर – (1) देव, गुरु-शास्त्र अभूतार्थ हैं; (2) दर्शनमोहनीय का उपशमादि अभूतार्थ है; (3) शरीर,इन्द्रियाँ, नौकर्म अभूतार्थ हैं; (3) शुभभाव अभूतार्थ हैं; (4) चौथा काल अभूतार्थ है।

प्रश्न 139 – मोक्षरूप कार्य के लिए भूतार्थ कौन है ?

उत्तर – एकमात्र त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव ही भूतार्थ है।

प्रश्न 140 – मोक्षरूप कार्य के लिए अभूतार्थ कारण क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) वज्रवृषभनाराचसंहनन; (2) कर्मों का अभाव; (3) शुभभाव; और (4) चौथाकाल, अभूतार्थ कारण है।

प्रश्न 141 – कार्य होने में कारण से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – वास्तव में कार्य होने में उपादानकारण से तात्पर्य है; निमित्तकारण से तात्पर्य नहीं।

प्रश्न 142 – शास्त्रों में निमित्तकारणों की बात क्यों की है, जबकि का कार्य का सच्चा कारण उपादानकारण ही है ?

उत्तर – जब-जब उपादान में कार्य होता है, उस समय निमित्त होता ही है, ऐसी वस्तु स्थिति है; इसलिए कार्य के समय कौन निमित्तकारण है ? उसका ज्ञान कराने के लिए शास्त्रों में निमित्त की बात समझायी है।

प्रश्न 143 – जब-जब कार्य होता है, तब-तब निमित्त होता ही है—ऐसा शास्त्रों में कहाँ लिखा है ?

उत्तर – (1) 'उपादान निज गुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय। भेदज्ञान परमान विधि, बिरला बूझे कोय॥' [बनारसीविलास] (2) प्रति समय के उत्पाद (कार्य) के समय, उचित बहिरङ्ग साधनों की (निमित्तों की) सन्निधि (उपस्थिति) होती ही है। 'जो उचित बहिरङ्ग साधनों की सन्निधि के सद्भाव में अनेक प्रकार की अनेक अवस्थाएँ करता है।' *[श्री प्रवचनसार, गाथा 95 की टीका]* (3) उस वस्तु में विद्यमान परिणमनरूप जो योग्यता, वह अन्तरङ्ग निमित्त (उपादानकारण) है और उस पारिणमन का निश्चयकाल (कालद्रव्य), बाह्य निमित्त है – ऐसा तत्त्वदर्शियों ने निश्चय किया है। *[श्री गोम्मट्सार, जीवकाण्ड, गाथा 580 की टीका तथा श्लोक]*

प्रश्न 144 - तीनों कारणों में से कौनसा कारण हो, तब कार्य की उत्पत्ति नियम से होती है ?

उत्तर - वास्तव में कार्य की उत्पत्ति, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण के समय नियम से होती है। वहाँ पर बाकी के दोनों उपादानकारण और निमित्तकारण होते ही हैं; किसी को किसी का इन्तजार नहीं करना पड़ता है।

प्रश्न 145 - पहले कारण है या कार्य है ?

उत्तर - कारण और कार्य का एक ही समय है; अत: यह प्रश्न कि पहले कारण या कार्य, व्यर्थ है।

प्रश्न 146 - जब सब कार्य 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण' से ही होते हैं तो लोग दूसरे कारणों की चर्चा क्यों करते हैं ?

उत्तर - जैसे, किसी का माल चोरी करने से डण्डे पड़ते हैं, जेल जाना पड़ता है; वैसो ही जो कार्य में दूसरे कारणों की बात में पागल हो रहे हैं, उन्हें चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है; इसलिए दूसरे कारणों की चर्चा करते हैं।

प्रश्न 147 - जो व्यवहारकारणों को सच्चा कारण मानते हैं, उन जीवों को भगवान ने किन-किन नामों से शास्त्रों में सम्बोधन किया है ?

उत्तर - जो व्यवहारकारणों को सच्चा कारण मानते हैं, उन्हें - (1) 'उनका सुलटना दुर्निवार है और यह उनका मोह-अज्ञान -अन्धकार है।' *[श्री समयसार, कलश 55]* (2) वह पद-पद पर धोखा खाता है, *[श्री प्रवचनसार, गाथा 55]* (3) वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है। *[श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6]* (4) वह मिथ्यादृष्टि है।

[श्री समयसार, 324 से 327 के हैडिंग में] (5) उसका फल, संसार है। *[श्री समयसार, गाथा 11 के भावार्थ]*(6) उसके सब धर्म के अङ्ग मिथ्यात्व-भाव को प्राप्त होते हैं और अकार्यकारी, अर्थात् अनर्थकारी हैं। *[श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 213]* (8) यह उसका हरामजादीपना है। *[श्री आत्मवलोकन, पृष्ठ 143]*

प्रश्न 148 - उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान से कार्य की उत्पत्ति होती है, क्या यह निरपेक्ष है ?

उत्तर - हाँ; वस्तु स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखती; इसलिए निरपेक्ष है और अपनी अपेक्षा रखती है; इसलिए सापेक्ष है। इसलिए सबसे प्रथम पात्र जीवों को कार्य की निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए, फिर सापेक्षता की बात आती है।

प्रश्न 149 - क्या निरपेक्षता सिद्ध किये बिना, सापेक्षता नहीं होती है ?

उत्तर - नहीं होती हैं क्योंकि —(1) निरपेक्षता के बिना, सापेक्षता का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (2) अभेद के बिना, भेद का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (3) निश्चय के बिना, व्यवहार का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (4) उपादान के बिना, निमित्त का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (5) भूतार्थ के बिना, अभूतार्थ का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (6) यथार्थ के बिना, उपचार का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (7) स्व के बिना, पर का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (9) मुख्य के बिना, गौण का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (10) द्रव्यार्थिक के बिना, पर्यायार्थिक का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (11) अहेतुक के बिना, सहेतुक का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है। (12) नित्य के बिना, अनित्य का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (13) तत् के बिना, अतत् का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (14) अस्ति के बिना, नास्ति का यथार्थ ज्ञान नहीं

होता है, (15) एक के बिना, अनेक का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है। (16) स्वद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के बिना, परद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है - ऐसा जिनवाणी में कहा है।

प्रश्न 150 - क्षायिकसम्यग्दर्शन में तीनों प्रकार के उपादान -उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) जीव का श्रद्धागुण, त्रिकाली उपादानकारण; क्षायिकसम्यक्त्व, उपोदय; (2) क्षयोपशमकसम्यक्त्व, अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादानकारण; क्षायिकसम्यक्त्व, उपादेय; (3) क्षायिकसम्यक्त्व उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक उपादानकारण; क्षायिकसम्यक्त्व, उपादेय।

प्रश्न 151 - केवलदर्शन में तीनों प्रकार के उपादान-उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) आत्मा का दर्शनगुण, त्रिकाली उपादानकारण; केवलदर्शन, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय अचक्षुदर्शन, क्षणिकउपादानकारण; अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय केवलदर्शन, उपोदय; (3) केवलदर्शन उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण, केवलदर्शन, उपादेय।

प्रश्न 152 - अन्तरायकर्म के अभाव में तीनों प्रकार के उपादान-उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) कार्माणवर्गणा, त्रिकाली उपादानकारण; अन्तरायकर्म का अभाव, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादानकारण; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय अन्तरायकर्म का क्षयोपशम, क्षणिकउपादानकारण; अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय अन्तरायकर्म का अभाव, उपादेय; (3) अन्तरायकर्म का अभाव

उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण; अन्तरायकर्म का अभाव, उपादेय।

प्रश्न 153 - यथाख्यातचारित्र में तीनों प्रकार के उपादान -उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) जीव का चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण; यथाख्यातचारित्र, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय सकलचारित्र, क्षणिकउपादानकारण; अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय यथाख्यातचारित्र, उपादेय; (3) उस समय पर्याय की योग्यता यथाख्यातचारित्र क्षणिकउपादानकारण; यथाख्यातचारित्र, उपादेय।

प्रश्न 154 - जब उत्पाद होता है, वहाँ पर उत्पाद के अलावा तीन बातें कौन-कौन सी होती हैं ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण (व्यय); (2) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य); (3) अनुकूल निमित्त की (उपस्थिति)

जय महावीर-जय महावीर

3

कारण-कार्य रहस्य

योग्यता : स्वरूप एवं लाभ

प्रश्न 1- योग्यता किसे कहते हैं ?

उत्तर - समर्थ उपादानशक्ति का नाम ही योग्यता है।

प्रश्न 2- योग्यता के पर्यायवाची शब्द क्या हैं ?

उत्तर - समर्थ उपादनशक्ति कहो; भवितव्यता कहो; योग्यता कहो; एक ही बात है।

प्रश्न 3- भवितव्यता, अर्थात् योग्यता का व्युत्पत्ति अर्थ क्या है ?

उत्तर - 'भवितु योग्य भवितव्यम् तस्य भावः भवितव्यता' जो होनेयोग्य हो, उसे भवितव्य कहते हैं; उसका भाव, भवितव्यता कहलाती हैं। जिसे हम योग्यता कहते हैं, उसी का दूसरा नाम भवितव्यता है।

प्रश्न 4 - योग्यता को जानने से क्या-क्या लाभ हैं ?

उत्तर - (1) प्रत्येक द्रव्य में जो-जो परिणमन होता है, वह 'उस समय पर्याय की योग्यता' के अनुसार ही हुआ है, हो रहा है, होता रहेगा; उसमें किसी दूसरे का जरा भी हस्तक्षेप नहीं है - ऐसा जानने से, पर का मैं कुछ करूँ या पर मेरा कुछ करे- ऐसा प्रश्न उपस्थित नहीं होता है; (2) क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि होती है; (3) करूँ-

करूँ की मिथ्याबुद्धि का अभाव होते ही सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 5 - कार्य, योग्यतानुसार ही होता है - इसके लिए क्या शास्त्रप्रमाण है ?

उत्तर - (1) वैभाविकपरिणमन, निमित्त-सापेक्ष होकर भी वह अपनी उस काल में प्रगट होनेवाली योग्यतानुसार ही है। अपनी योग्यतानुसार जीव, संसारी है और अपनी योग्यतानुसार ही मुक्त होता है; (2) परिणमन का साधारणकारण, कालद्रव्य होते हुए भी, द्रव्य अपने उत्पाद - व्ययस्वभाव के कारण ही परिणमन करता है; काल उसका कुछ प्रेरक नहीं है; (3) वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है, क्योंकि यह पर्याय का स्वभाव है। *(श्री समयसार, कलश 211)*; (4) एक द्रव्य में अतीत (भूत), अनागत (भविष्य), और गाथा में आए हुए 'अपि' शब्द से वर्तमान पर्यायरूप जितनी अर्थपर्याय और व्यंजननपर्याय हैं, 'तत्प्रमाण' वह द्रव्य होता है। *(धवला पुस्तक 1, पृष्ठ 386)* (5) तीन काल के जितने समय हैं, प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में उतनी-उतनी ही पर्यायें होती हैं। (6) प्रत्येक पर्याय, पूर्व पर्याय का अभाव करके आयी, इस अपेक्षा 'विकार्य' कहा है; नयी उत्पन्न हुयी, इस अपेक्षा 'निर्वर्त्य' कहा है; थी तो आयी, इस अपेक्षा प्राप्य कहा है। *(श्री समयसार, गाथा 76 से 78 तक)* - ये योग्यता के लिए शास्त्र के प्रमाण हैं।

प्रश्न 6 - जब आप लोगों से कोई उत्तर नहीं बनता है, तो आप कह देते हो कि यह 'उस समय पर्याय की योग्यता' से है; इस प्रकार 'योग्यता' कहकर क्या आप धोखा नहीं देते ?

उत्तर - नहीं, भाई ! यह धोखा नहीं, अपितु सर्वज्ञप्रणीत सत्यार्थ

वस्तुस्थिति है। देखो! (1) दो परमाणु हैं, एक परमाणु की वर्णगुण की पर्याय शत-प्रतिशत सफेद है और दूसरे परमाणु की हजार गुनी सफेद है - तो आप बतलाइये, उसका क्या कारण है? परमाणु तो शुद्ध है, उसमें दूसरा कोई कारण नहीं कहा जा सकता है; अत: निश्चित् होता है कि उसका कारण, उस समय पर्याय की योग्यता ही है। (2) आपके सामने सब पुद्गल स्कन्ध हैं, किसी के रङ्गगुण की पर्याय काली है, हरी है, पीली है, नीली है - तो प्रश्न होता है - ऐसा क्यों है? तो आपको कहना पड़ेगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है। (3) विश्व में जीव अनन्त हैं, सबके भाव अलग-अलग क्यों हैं? आपको कहना पड़ेगा— उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है। (4) अध्यापक कक्षा में 50 छात्रों को पढ़ाता है, सबको एक-सा ज्ञान क्यों नहीं होता है? तो आपको कहना पड़ेगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है। (5) सामने लोकालोक है; लोकालोक का ज्ञान, केवली को होता है, आपको क्यों नहीं होता है? - तो कहना पड़ेगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है। (6) भगवान की दिव्यध्वनि खिरती है, क्या सबको एक-सा ज्ञान होता है? नहीं; तो हम पूछते हैं, ऐसा क्यों हैं? उत्तर यही होगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है।

याद रखो:— वास्तव मे कोई भी कार्य होने में या बिगड़ने में 'उस समय पर्याय की योग्यता ही' साक्षात् साधक है।

(इष्टोपदेश, गाथा 35 की टीका)

प्रश्न 7 - आचार्यों ने धवला श्लोक, 199 में योग्यता के विषय में क्या बताया है?

उत्तर - (1) द्रव्यार्थिकनय से द्रव्य में तीनों काल की पर्यायोंरूप अपने-अपने समय में परिणमन करने की योग्यता है। (2) पर्यायार्थिकनय से द्रव्य में जो वर्तमान पर्याय होती है, वह उसीरूप

से परिणमन की योग्यता रखती है। (3) इससे यह सिद्ध हुआ वर्तमान पर्याय, भूत या भविष्य में परिणमे, ऐसा भी नहीं होता है। भूतकाल की कोई भी पर्याय, आगे-पीछे काल में होने की योग्यता नहीं रखती है। भविष्य की पर्याय, उससे पहले हो जावे या पीछे हो जावे, ऐसी योग्यता नहीं रखती है; इसलिए किसी भी द्रव्य की किसी भी पर्याय को अनिश्चित मानना, जिनमत से बाहर है। (4) यह जीव इतना काल बीतने पर मोक्ष जायेगा, ऐसी नोंध केवलज्ञान में है। *(श्री समयसार, कलश टीका कलश नं० 4 पृष्ठ 4)* (5) केवलज्ञान एक ही समय में सर्व आत्मप्रदेशों से समस्त द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव को जानता है। *(श्री प्रवचनसार, गाथा 47 का रहस्य)*

प्रश्न 8 - योग्यता से क्या सिद्ध हुआ ?

उत्तर - (1) बम पड़ना, (2) बहुत से मनुष्यों का एक साथ मरना, (3) एक शरीर में रहनेवाले निगोदिया जीवों का, सबका एक साथ मरण होना, (4) हवाईजहाज का टूटना, (5) राकेट ऊपर जाना, (6) नदी का प्रवाह बदलना, (7) बाँध का बनना, (8) कच्चे फल को जल्दी पकना, (9) पक्के फल को लम्बे काल तक कायम रखना, (10) अकालमरण, (11) कर्म का संक्रमण, उदीरणा, उत्कर्षण, स्थितिकाण्ड, अनुभागकाण्ड आदि सब काम अपने-अपने कार्यकाल में ही होते हैं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में जितने-जितने गुण हैं, उस-उस प्रत्येक गुण में तीन काल के जितने समय हैं, उतनी-उतनी पर्यायें हैं, वे निश्चित और क्रमबद्ध हैं, जरा भी आगे-पीछे नहीं हो सकती हैं - ऐसी बात 'योग्यता' से सिद्ध होती है।

प्रश्न 9 - योग्यता क्या है ?

उत्तर - भवितव्यता अथवा नियति, 'उस समय पर्याय की योग्यता है' वह क्षणिकउपादानकारण है।

प्रश्न 10 – द्रव्य की योग्यता क्या है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने द्रव्यरूप ही रहता है, कभी दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता; इसलिए द्रव्यरूप योग्यता, द्रव्यरूप रहती है।

प्रश्न 11- गुण की योग्यता क्या है ?

उत्तर – प्रत्येक गुण अपने-अपनेरूप ही रहता है। जैसे – ज्ञानगुण, ज्ञानगुणरूप ही रहता है; श्रद्धा, चारित्ररूप नहीं होता है; और पुद्गल में रसगुण, रसगुणरूप ही रहता है; गन्ध-वर्ण-स्पर्शरूप नहीं होता है – यह गुणरूप योग्यता है।

प्रश्न 12 – पर्यायरूप योग्यता क्या है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। एक-एक गुण में, जिस समय, जिस पर्याय की योग्यता है, वही होगी; एक समय भी आगे-पीछे नहीं हो सकती है। किसी भी तरह से उस योग्यता को टालने के लिए देव, इन्द्र, जिनेन्द्रभगवान की समर्थ नहीं हैं। पर्याय की योग्यता एक समयमात्र की ही होती है।

प्रश्न 13- उपादान-उपादेय प्रकरण में किस योग्यता की बात चलती है ?

उत्तर – पर्यायरूप योग्यता की बात चलती है। वह योग्यतारूप पर्याय, जाननेयोग्य है; आश्रय करनेयोग्य नहीं है।

प्रश्न 14 – योग्यतारूप पर्याय के जानने से क्या-क्या लाभ हैं ?

उत्तर – (1) सब में योग्यतारूप पर्याय जो होनी है, वही होगी; आगे-पीछे नहीं; (2) पर में करने-कराने की बुद्धि का अभाव हो जाता है; (3) दृष्टि अपने स्वभाव पर आ जाती है और जैनदर्शन के

रहस्य का मर्मी बन जाता है; (4) क्रम से मोक्ष का पथिक बन जाता है।

प्रश्न 15 - (1) पर्यायरूप योग्यता और द्रव्यरूप योग्यता के विषय में क्या-क्या जानना चाहिये ?

उत्तर - (1) पर्यायरूप योग्यता, ज्ञायक का ज्ञेय है, जाननेयोग्य है। (2) निज द्रव्यरूप योग्यता, आश्रय करनेयोग्य है, क्योंकि इसके आश्रय से ही धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है।

प्रश्न 16 - पर्यायरूप योग्यता की विशेषरूप में समझाओ ?

उत्तर - (1) जैसे, आम है, जब उसकी पकनेयोग्य अवस्था होती है, तभी होगी; आगे-पीछे नहीं। किसी ने पाल में देकर पहले पका दिया - ऐसा नहीं है। (2) आम खट्टा था, मीठा हो गया, जब उसकी मीठा होनेयोग्य अवस्था थी, तभी हुई; आगे-पीछे नहीं और किसी के कारण से भी नहीं। (3) शरीर में बालकपन, युवावस्था, वृद्धावस्था होनेयोग्य होवे, तभी होती है; किसी बाह्य साधन से या किसी भी प्रकार से हेर-फेर नहीं हो सकता है। (4) महावीर भगवान को तीस वर्ष की आयु में दीक्षा का भाव आया; आदिनाथ भगवान को तिरासी लाख वर्ष पूर्व आयु के बाद दीक्षा का भाव आया - यह उनकी योग्यता ही ऐसी थी। (5) महावीर भगवान को दीक्षा के बारह वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ और आदिनाथ भगवान को दीक्षा के एक हजार वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ; मल्लिनाथ भगवान को दीक्षा लेते ही छह दिन में केवलज्ञान हुआ - यह सब उस समय पर्याय की योग्यता की बात है; इसमें किसी का कुछ भी हस्तक्षेप नहीं है। (6) सब द्रव्यों में जो-जो पर्याय होती हैं, वे उस-उस समय की योग्यता के कारण ही होती हैं। इस बात को स्वीकार करते ही

दृष्टि, अपने भगवान आत्मा पर आती है, तभी वास्तव में योग्यता को माना और जाना कहा जाता है।

प्रश्न 17 – योग्यता की बात, जीव-पुद्गलद्रव्यों में है या सब द्रव्यों में योग्यता की बात है ?

उत्तर – (1) जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। इन सब द्रव्यों में प्रत्येक में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं, उतनी ही पर्यायों की योग्यता हैं। (2) वह योग्यता, क्रमबद्ध और क्रमनियमित हैं। उसे जरा भी हेर-फेर कोई नहीं कर सकता है।

प्रश्न 18 – सब द्रव्यों की पर्यायों की योग्यता क्रमबद्ध और निश्चित है, इसे कौन जानता है ?

उत्तर – चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक के सब जीव जानते हैं। जानने में जरा भी अन्तर नहीं है; मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है।

प्रश्न 19 – योग्यता, योग्यता की बातें करे और आत्मा का आश्रय न लेवे, तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – वह स्वच्छन्दता का सेवन करनेवाला, चारों गतियों में घूमकर निगोद चला जाएगा – क्योंकि योग्यता को जानने मानने का फल, अपने स्वभाव का आश्रय लेकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति है।

प्रश्न 20 – योग्यता से क्या-क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर – (1) जिस समय जो पर्याय उत्पन्न होने की योग्यता हो,

वही नियम से होती है; (2) पर्याय होती है, वह अपने स्वकाल से होती है; (3) प्रत्येक पर्याय अपने जन्मक्षण में ही उत्पन्न होती है; (4) जिस समय, जिस पर्याय का उत्पाद होगा, उसी समय वही होगी; (5) क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि-आदि बातों का निर्णय योग्यता के मानने से होता है।

प्रश्न 21-योग्यता माननेवाले को क्या-क्या प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं ?

उत्तर - (1) इससे यह हुआ; (2) यह हो, यह न हो; (3) ऐसा क्यों ? - आदि प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं।

जय महावीर-जय महावीर

4

कारण-कार्य रहस्य

निमित्तकारण : स्वरूप एवं प्रयोजन

प्रश्न 1- निमित्तकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो पदार्थ, स्वयं स्वत: कार्यरूप परिणमित न हो, परन्तु कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके, उस पदार्थ को निमित्तकारण कहते हैं। जैसे, घड़े की उत्पत्ति में कुम्भकार, दण्ड, चक्र आदि निमित्तकारण हैं।

प्रश्न 2 - क्या निमित्त, सच्चा कारण है ?

उत्तर - निमित्त, सच्चा कारण नहीं है; वह अकारणवत्-अहेतुवत् है, क्योंकि वह उपचारमात्र अथवा व्यवहारमात्र कारण है।

प्रश्न 3 - निमित्त के पर्यायवाची नाम बताओ ?

उत्तर - निमित्तमात्र, असर, प्रभाव, बलाधान, प्रेरक, सहायक इन सब शब्दों का अर्थ, निमित्त है।

प्रश्न 4 - आपने जो निमित्त के पर्यायवाची नाम बताये, यह किस शास्त्र में आये हैं ?

उत्तर - श्री तत्त्वार्थसार, तीसरा अधिकार, श्लोक 43 में आये हैं।

प्रश्न 5 - जैनेन्द्र-सिद्धान्तकोष, भाग दो, पृष्ठ 610 में निमित्त के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या बताये हैं ?

उत्तर - कारण; प्रत्यय; हेतु; साधन; सहकारी; उपकारी;

उपग्राहक; आश्रय; आलम्बन; अनुग्राहक; उत्पादक; कर्ता; हेतुकर्ता; प्रेरक; हेतुमत; अभिव्यंजक- ये सब निमित्त के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 6 - निमित्तकारणों के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं (1) प्रेरकनिमित्त, और (2) उदासीननिमित्त।

प्रश्न 7- प्रेरकनिमित्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - (1) गमनक्रियावाले (इसमें क्षेत्र से क्षेत्रान्तर मात्र ही लेना है) जीव-पुद्गल, और (2) इच्छादि (क्रोध, मान, माया, लोभ) वाले जीव, प्रेरकनिमित्त कहलाते हैं।

प्रश्न 8 - प्रेरक का अर्थ क्या है ?

उत्तर - अपने में प्रकृष्टरूप से इरण और प्रेरणा करे, वह प्रेरक है।

प्रश्न 9- इच्छावाले और गमनक्रियावाले जीवों से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - (1) कोई मुनि हैं; उन्हें किसी धर्मलोभी जीव को उपदेश देने का विकल्प आवे, तो वह (मुनि) इच्छादिवाले निमित्त कहलाये, (2) अरहन्तभगवान इच्छादिवाले निमित्त नहीं हैं, परन्तु गमनक्रियावाले निमित्त हैं।

प्रश्न 10 - सिद्धभगवान को इच्छा नहीं है और गमन भी नहीं है, तब सिद्धभगवान कौन से निमित्त कहलायेंगे ?

उत्तर - सिद्धभगवान, उदासीननिमित्त कहलायेंगे।

प्रश्न 11 - क्या प्रेरकनिमित्त, उपादान में कुछ करता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं! प्रेरकनिमित्त, जबरन उपादान में कार्य कर देते हैं या प्रभाव आदि डाल सकते हैं - ऐसा नहीं समझना,

क्योंकि दोनों पदार्थों का (उपादान-निमित्त का) एक-दूसरे में अभाव है। प्रेरकनिमित्त, उपादान को प्रेरणा नहीं करता।

प्रश्न 12- उदासीननिमित्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश और कालादि निष्क्रिय (गमनक्रियारहित) या रागरहित द्रव्यों को उदासीननिमित्त कहते हैं।

प्रश्न 13- जब निमित्त, उपादान में कुछ करता ही नहीं है, तब प्रेरकनिमित्त और उदासीननिमित्त - ऐसा भेद क्यों डाला है ?

उत्तर - निमित्तों के उपभेद बताने के लिए किन्हीं निमित्तों को प्रेरक और किन्हीं को उदासीन कहा जाता है, किन्तु सर्व प्रकार के निमित्त, उपादान के लिए तो 'धर्मास्तिकायवत् उदासीन ही हैं।' निमित्त के भिन्न-भिन्न प्रकारों का ज्ञान कराने के लिए ही, उसके दो भेद किये गये हैं।

प्रश्न 14- निमित्त के दूसरे प्रकार के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं। सद्भावरूप निमित्त और अभावरूप निमित्त।

प्रश्न 15 - सद्भावरूप निमित्त और अभावरूप निमित्त से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - सद्भाव निमित्त, अस्तिरूप है और अभावरूप निमित्त, नास्तिरूप है।

प्रश्न 16 - सर्व प्रकार के निमित्त धर्मास्तिकायवत् ही हैं, ऐसा किस शास्त्र में कहाँ आया है ?

उत्तर - 'नाज्ञो विज्ञत्वमायाति, विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति।
निमित्तमात्र मन्यस्तु, गतेधर्मास्तिकायवत्॥ 35॥'

अर्थात् :— अज्ञानी, विशेष प्रकार के ज्ञानभाव को प्राप्त नहीं करता और विशेष ज्ञानी, अज्ञानपने को प्राप्त नहीं करता। गति को जिस प्रकार धर्मास्तिकाय निमित्त है; उसी प्रकार अन्य तो निमित्तमात्र है। *[श्री इष्टोपदेश, श्लोक 35]*

(2) चैतन्यस्वभाव के कारण जानने और देखने की क्रिया का जीव ही कर्ता है। जहाँ जीव है, वहाँ चार अरूपी अचेतनद्रव्य भी हैं, तथापि वे, जिस प्रकार जानने और देखने की क्रिया के कर्ता नहीं हैं; उसी प्रकार जीव के सम्बन्ध में रहे हुए कर्म, नोकर्मरूप पुद्गल भी उस क्रिया के कर्ता नहीं हैं। *[श्री पञ्चास्तिकाय, गाथा 122 की टीका से]*

प्रश्न 17 – 'कुम्हार ने घड़ा बनाया' इस पर निमित्त की परिभाषा लगाओ ?

उत्तर – कुम्हार स्वयं तो घड़ेरूप परिणमित न हो, परन्तु घड़े की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस (कुम्हार) पर आरोप आ सके, उस पदार्थ को (कुम्हार को) निमित्तकारण कहते हैं।

प्रश्न 18 – जीव ने कर्म बाँधा, इस पर निमित्त की परिभाषा लगाओ ?

उत्तर – जीव, स्वयं तो कर्मबन्धरूप परिणमित न हों, परन्तु कर्मबन्ध की अवस्था में अनुकूल होने का जिस पर (अज्ञानी जीव पर) आरोप आ सके, उस पदार्थ को (अज्ञानी जीव को) निमित्तकारण कहते हैं।

प्रश्न 19 – (1) स्त्री ने रोटी बनायी; (2) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ; (3) केवलज्ञान से केवलज्ञानावरणीय का अभाव हुआ; (4) मैंने बिस्तरा उठाया; (5) दर्जी ने कपड़े बनाये; (6) दिव्यध्वनि सुनने से सम्यग्ज्ञान

की प्राप्ति हुई; (7) ज्ञेय से ज्ञान होता है; (8) मैंने मकान बनाया; (9) धर्मद्रव्य मुझे चलाता है; (10) अधर्मद्रव्य मुझे ठहराता है; (11) आकाशद्रव्य जगह देता है; (12) कालद्रव्य ने मुझे परिणमाया; (13) ज्ञानावरणीकर्म के क्षयोपशम से ज्ञान का उघाड़ होता है; (14) मैं हँसा; (15) मैं बोला; (16) मैं चला; (17) मैंने कपड़े पहिने; (18) मैंने पलंग बनाया; (19) मैंने हलुआ बनाया; (20) मैं उठा - आदि वाक्यों में निमित्त की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर - (1) स्त्री स्वयं स्वत: रोटीरूप तो परिणमित न हो, परन्तु रोटी की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर (स्त्री पर) आरोप आ सके, उस पदार्थ को (स्त्री को) निमित्तकारण कहते हैं। इसी प्रकार अन्य उन्नीस वाक्यों पर पूर्व प्रश्न के अनुसार लगाकर अभ्यास करो।

प्रश्न 20- 'गुरु उपदेश निमित्त बिन, उपादान बलहीन।
ज्यों नर दूजे पाँव बिन, चलवे को आधीन॥'

अर्थात् :— गुरु के उपदेशरूप निमित्त के बिना, उपादान (शिष्यादि) बलहीन है, जैसे कि दूसरे पाँव के बिना, मनुष्य चल नहीं सकता है ? क्या यह मान्यता सत्य है -

उत्तर - यह मान्यता सत्य नहीं है — ऐसा बतलाने के लिये श्रीगुरु दोहे से उत्तर देते हैं कि —

'ज्ञान नैन किरिया चरन, दोऊ शिवमग धार।
उपादान निहचै जहाँ, तहाँ निमित्त व्योहार॥'

अर्थात् :— सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप नेत्र और स्थिरतारूप चरण लीनतारूप क्रिया - दोनों मिलकर मोक्षमार्ग जानो। जहाँ उपादानरूप

निश्चयकारण होता है, वहाँ निमित्तरूप व्यवहारकारण होता ही है।

तात्पर्य यह है कि उपादान तो निश्चय, अर्थात् सच्चा कारण है और निमित्त तो मात्र व्यवहार, अर्थात् उपचारकारण है; सच्चा कारण नहीं है; इसीलिए तो उसे अकारणवत् (अहेतुवत्) कहा है। उसे उपचार (आरोपित) कारण इसलिए कहा है कि वह उपादान का कुछ कार्य करता-कराता नहीं है, तथापि कार्य के समय उस पर अनुकूलता का आरोप आता है; इस कारण उसे उपचारमात्र कहा है। सम्यदर्शन-सम्यग्ज्ञान और चारित्ररूप लीनता को मोक्षमार्ग जानो — ऐसा कहा, उसमें शरीराश्रित उपदेश-उपवासादिक क्रिया और शुभरागरूप व्यवहार को मोक्षमार्ग न जानो, यह बात आ जाती है।

'उपादान निज गुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय।
भेदज्ञान परमान विधि, बिरला बूझे कोय॥'

अर्थात् :— जहाँ निज शक्तिरूप उपादान हो, वहाँ पर निमित्त होता ही है, उसके द्वारा भेदज्ञान प्रमाण की विधि (व्यवस्था) हैं। यह सिद्धान्त कोई विरले ही समझते हैं।

जहाँ उपादान की योग्यता हो, वहाँ नियम से निमित्त होता ही है। निमित्त की प्रतीक्षा करनी पड़े - ऐसा नहीं होता; और निमित्त को हम जुटा सकते हैं— ऐसा कभी भी नहीं होता। निमित्त की प्रतीक्षा करनी पड़ती है या उसे मैं ला सकता हूँ— ऐसी मान्यता, परपदार्थ में अभेदबुद्धि, अर्थात् अज्ञानसूचक है। उपादान और निमित्त, दोनों असहायरूप स्वतन्त्र हैं, यह उनकी मर्यादा है।

'उपादान बल जहँ तहाँ, नहिं निमित्त को दाव।
एक चक्र सौ रथ चलै, रवि को यहि स्वभाव॥'

अर्थात् :— जहाँ देखो, वहाँ उपादान का ही बल है; (निमित्त

होता है) परन्तु निमित्त का (कार्य करने में) कोई भी दाव (बल) नहीं है। एक चक्र से रवि का (सूर्य का) रथ चलता है, वह उसका स्वभाव है। [उसी प्रकार प्रत्येक कार्य, उपादान की योग्यता से (सामर्थ्य से) ही होता है।]

प्रश्न 21- 'हौ जानै था एक ही, उपादान सों काज।
थकै सहाई पौन बिन, पानी माँहि जहाज॥'

अर्थात् :— अकेले उपादान से कार्य होता है तो पवन की सहायता के बिना जहाज पानी में क्यों नहीं चलता?

उत्तर - 'सधै वस्तु असहाय जहँ, तहँ निमित्त है कौन।
ज्यों जहाज परवाह में, तिरै सहज बिन पौन॥'

अर्थात् :—जहाँ प्रत्येक वस्तु स्वतन्त्ररूप से अपनी अवस्था को (कार्य को प्राप्त करती है, वहाँ निमित्त कौन है? जिस प्रकार जहाज, प्रवाह में सहज ही बिना पवन के तैरता है।)

आशय यह है कि जीव और पुद्गलद्रव्य, शुद्ध या अशुद्ध अवस्था में स्वतन्त्ररूप से ही अपने में परिणमन करते हैं। अज्ञानी जीव भी स्वतन्त्ररूप से निमित्ताधीन होकर परिणमन करता है; कोई निमित्त उसे आधीन नहीं कर सकता।

'उपादान विधि निर्वचन, है निमित्त उपदेश।
बसे जु जैसे देश में, करै सु तैसे भेष॥'

अर्थात् :—उपादान का कथन निर्वचन हैं; (अर्थात्, एक 'योग्यता' द्वारा ही होता है) उपादान अपनी योग्यता से अनेक प्रकार से परिणमन करता है, तब उपस्थित निमित्त पर भिन्न-भिन्न कारणपने का आरोप (भेष) आता है; उपादान की विधि निर्वचन होने से, निमित्त द्वारा यह कार्य हुआ — ऐसा व्यवहार से कहा जाता है।

उपादान जब जैसा कार्य करता है, तब वैसे कारणपने का आरोप (भेष) निमित्त पर आता है; जैसे कि कोई वज्रकायवान मनुष्य, सातवें नरकगति के योग्य मलीनभाव धारण करता है, तो वज्रकाय पर नरक के कारणपने का आरोप आता है, और यदि जीव, मोक्ष के योग्य निर्मलभाव करता है तो उस वज्रकाय पर, मोक्ष के कारणपने का आरोप आता है। इस प्रकार उपादान के कार्य अनुसार, निमित्त में कारणपने का भिन्न-भिन्न आरोप किया जाता है। इससे ऐसा सिद्ध होता है कि निमित्त से कार्य नहीं होता, परन्तु कथन होता है; इसलिए उपादान, सच्चा कारण है और निमित्त, आरोपितकारण है। वास्तव में तो निमित्त ऐसा प्रसिद्ध करता है कि — नैमित्तिक, स्वतन्त्र अपने कारण से परिणमन कर रहा है, तो उपस्थिति दूसरी अनुकूल वस्तु को निमित्त कहा जाता है।

प्रश्न 22 - हम निमित्त मिलावें या नहीं ?

उत्तर - कोई किसी भी द्रव्य को मिला नहीं सकता, क्योंकि सब द्रव्य पृथक्-पृथक् हैं। निमित्त मिलाने की बुद्धि, मिथ्यादृष्टियों की है।

प्रश्न 23 - हम निमित्त क्यों नहीं मिला सकते हैं ?

उत्तर - (1) निमित्त और उपादान के कार्य का एक ही समय है; (2) निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध, दो स्वतन्त्र द्रव्यों के एक समय की पर्यायों में ही होता है; (3) छद्मस्थ एक समय की पर्याय पकड़ नहीं सकता है; (4) एक द्रव्य की पर्याय, दूसरे द्रव्य की पर्याय में अकिंचित्कर है; (5) किस समय, किस द्रव्य का परिणमन नहीं होता ? सबका ही होता है। इसलिए निमित्त मिलाने की बुद्धि, अनन्त संसार का कारण है।

प्रश्न 24 - निमित्त का ज्ञान क्यों कराते हैं ?

उत्तर - (1) मिथ्यादृष्टियों ने अनादि से एक-एक समय करके

निमित्त का आश्रय माना है। (2) निमित्त परद्रव्य है, उससे तेरा सम्बन्ध नहीं है - ऐसा ज्ञान करके, स्वभाव का आश्रय ले, तो तेरा भला हो। (3) निमित्त का आश्रय छुड़ाने के लिए, निमित्त का ज्ञान कराया है। (4) जहाँ उपादान होता है, वहाँ निमित्त होता ही है; इसलिए निमित्त का ज्ञान कराया है।

प्रश्न 25 - निमित्त और उपादान के विषय में क्या-क्या बातें याद रखनी चाहिए?

उत्तर - (1) जब तत् समय की योग्यतावाला क्षणिक-उपादानकारण होता है, वहाँ पर नियम से त्रिकाली उपादानकारण; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादानकारण और निमित्तकारण नियम से होता है; इनमें से कोई न होवे, ऐसा होता ही नहीं है। (2) उपादान का कार्य, उपादान से ही होता है, निमित्त से नहीं। (3) जितने भी प्रकार के निमित्त हैं, वे सब उपादान के लिए मात्र धर्मद्रव्य के समान ही हैं। (4) जब उपादान होता है, तब निमित्त होता ही है - ऐसी वस्तुस्थिति है। (5) निमित्तकारण, उपादान के प्रति निश्चय से (वास्तव में) अकिंचित्कर (कुछ न करनेवाला है); इसीलिए उसे निमित्तमात्र, बलाधानमात्र, सहायमात्र, अहेतुवत् आदि शब्दों द्वारा सम्बोधित किया जाता है। (6) किसी भी समय उपादान में निमित्त कुछ भी नहीं कर सकता है; निमित्त, उपादान में कुछ करता है - ऐसी बुद्धि, निगोद का कारण है। (7) उपादान के अनुकूल ही उचित निमित्तकारण होता है। (8) निमित्तकारण आये, तभी उपादान में कार्य होता है - ऐसी मान्यता मिथ्या है। (9) उपादान -निमित्त दोनों एक साथ अपने-अपने कारण से होते हैं। (10) कार्य, उपादान से ही होता है; निमित्त की अपेक्षा कथन होता है - ऐसा पात्र जीव जानता है।

प्रश्न 26 – अज्ञानी क्या देखते हैं ?

उत्तर – विशेष को देखते हैं; सामान्य को नहीं देखते हैं।

प्रश्न 27 – मात्र विशेष का देखने से, और सामान्य को नहीं देखने से क्या होता है ?

उत्तर – आस्रव–बन्ध करता हुआ, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 28 – ज्ञानी क्या देखते हैं ?

उत्तर – सामान्य को देखते हैं।

प्रश्न 29 – सामान्य को देखने से क्या होता है ?

उत्तर – संवर–निर्जरा की प्राप्ति करके, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति करता है।

प्रश्न 30 – निमित्त क्या बताता है ?

उत्तर – निमित्त, उपादान की प्रसिद्धि करता है। जैसे, पानी का लोटा यह बतलाता है कि लोटा तो पीतल का है; पानी का नहीं; उसी प्रकार निमित्त कहता है कि जैसा मैं कहता हूँ, उसे झूठा मानना और उपादान जो कहता है, उसे सत्य मानना क्योंकि मैं किसी को किसी में मिलाकर कथन करता हूँ; मेरे श्रद्धान से मिथ्यात्व होगा और उपादान, किसी को किसी में मिलाकर निरूपण नहीं करता, उसके श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है। जहाँ मेरी अपेक्षा (निमित्त की अपेक्षा) कथन किया हो, उसका अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा कथन किया है' – ऐसा जानना। निमित्त, पात्र जीव को ऐसा ज्ञान कराता है।

प्रश्न 31 – उपादान क्या बताता है ?

उत्तर – उपादान कहता है कि जो मैं कहता हूँ, उसे सत्य मानना;

निमित्त की बात झूठ मानना, क्योंकि मैं किसी को किसी में मिलाकर निरूपण नहीं करता; मेरे श्रद्धान से सम्यक्त्वादि की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्षलक्ष्मी को प्राप्ति होती है और निमित्त, किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है; उसके श्रद्धान से चारों गतियों मे घूमकर निगोद को प्राप्त होगा। जहाँ मेरी अपेक्षा (उपादान की अपेक्षा) कथन किया हो उसे 'ऐसा ही है'- ऐसा श्रद्धान करना। ऐसा पात्र जीव को उपादान, ज्ञान कराता है।

प्रश्न 32 - अज्ञानी कहते हैं कि ज्ञानी, निमित्त को नहीं मानते क्योंकि वे निमित्त से उपादान में कुछ होना नहीं मानते हैं ?

उत्तर - जैसे, अन्य मतावलम्बी कहते हैं कि जैनमतावलम्बी, ईश्वर को नहीं मानते हैं, क्योंकि वे ईश्वर को, उत्पन्न करनेवाला, रक्षा करनेवाला, पापियों को नष्ट करनेवाला नहीं मानते हैं; उसी प्रकार वर्तमान में दिगम्बरधर्मी नाम धराकर कहते हैं कि ज्ञानी, निमित्त की नहीं मानते हैं; अज्ञानियों की यह बात यथार्थ नहीं है।

प्रश्न 33 - क्या वास्तव में ज्ञानी निमित्त को नहीं मानते हैं ?

उत्तर - वास्तव में ज्ञानी ही निमित्त को मानते हैं, क्योंकि ज्ञानी कहते हैं कि निमित्त अपना कार्य शत-प्रतिशत अपने में करता है और उपादान, शत-प्रतिशत अपना कार्य अपने में करता है - ऐसा स्वतन्त्र निमित्त-नैमत्तिकसम्बन्ध है। खोटी दृष्टि से शास्त्र पढ़नेवाले अज्ञानी कहते हैं कि निमित्त, उपादान में कुछ करता है - यदि ऐसा मानो तो हम तुम्हारा निमित्त को मानना माने।

प्रश्न 34 - निमित्त, उपादान में कुछ करता है - ऐसा माना जाए तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - उसने निमित्त को निमित्त न मानकर, उपादान माना।

प्रश्न 35 - यह जीव, संसार में क्यों भ्रमण कर रहा है ?

उत्तर - निमित्त को निमित्त न मानकर, परन्तु निमित्त को उपादान मानकर संसार में भ्रमण कर रहा है।

प्रश्न 36 - क्या निमित्त नहीं है ?

उत्तर - (1) निमित्त है; (2) निमित्त जाननेयोग्य है; (3) आश्रय करनेयोग्य नहीं है।

प्रश्न 37 - निमित्त का प्रभाव पड़ता है - यह मान्यता किसकी है ?

उत्तर - अज्ञानी मिथ्यादृष्टियों की है।

प्रश्न 38 - आज कल के पण्डित कहते हैं कि निमित्त के बिना, काम नहीं होता; गुरु बिना, ज्ञान नहीं होता; कर्म का अभाव हुए बिना, मोक्ष नहीं होता है; शुभभाव करे तो धर्म की प्राप्ति हो - क्या यह उनका कहना गलत है ?

उत्तर - बिल्कुल गलत है - क्योंकि निमित्त के बिना, काम नहीं होता - आदि मान्यताएँ अन्य मतों की हैं। दिगम्बरधर्म की आड़ में अन्य मत की पुष्टि करनेवाले चारों गतियों में घूमकर निगोद के पात्र हैं।

प्रश्न 39 - उपादान और निमित्त, किस नय का कथन है ?

उत्तर - उपादान, निश्चयनय का कथन है और निमित्त, व्यवहारनय का कथन है।

प्रश्न 40 - याद रखनेयोग्य बातें क्या-क्या हैं ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय का व्यय होकर जो उत्पादरूप पर्याय होती है, वह द्रव्य में होनेयोग्य होवे, वह ही होती है; अन्य नहीं होती है। (2) जो स्वयं स्वत: कार्य करने में असमर्थ

है, उसका पर कुछ भी नहीं कर सकता है और जो स्वत: अपना कार्य करने में समर्थ है, उसका भी पर कुछ नहीं कर सकता है।

प्रश्न 41 - मुक्तदशा होने पर, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का क्या नाम है और क्या वह नियम से होता है ?

उत्तर - उसका नाम अयोगीकेवली चौदहवाँ गुणस्थान है और वह नियम से होता है।

प्रश्न 42 - कोई मात्र सामान्यअंश को ही उपादान कहे, तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - वह उपादान का स्वरूप न जाननेवाला, वेदान्तमत-वाला है।

प्रश्न 43 - कोई मात्र विशेषअंश को ही उपादान कहे, तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - वह उपादान का स्वरूप न जाननेवाला, बौद्धमतवाला है।

प्रश्न 44 - उपादान और निमित्त, कारण हैं या कार्य हैं ?

उत्तर - दोनों कारण हैं; कार्य नहीं हैं।

प्रश्न 45 - निमित्त और नैमित्तिक, कारण हैं या कार्य हैं ?

उत्तर - निमित्त, कारण है और नैमित्तिक, कार्य है।

प्रश्न 46 - पर्याय, नियत है या अनियत है ?

उत्तर - पर्याय स्वयं से नियत है।

प्रश्न 47 - पर्याय, नियत है - जरा स्पष्ट करो ?

उत्तर - तीन काल के जितने समय हैं, उतनी ही एक-एक गुण में पर्यायें होती हैं। उसे जरा भी आगे-पीछे नहीं किया जा सकता है,

क्योंकि एक पर्याय को आगे-पीछे करना माने तो गुण-द्रव्य के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होगा।

प्रश्न 48 - प्रत्येक कार्य, क्रमबद्ध और निश्चित है तो निमित्त मिलाने की बात कहाँ से आयी ?

उत्तर - (1) जब निश्चयकारण उपादान के कार्यरूप परिणमित होने का काल होता है, तब निमित्त की उपस्थिति स्वयंमेव होती है - ऐसा वस्तु का स्वभाव है। (2) जो जीव, निमित्त मिलाने के प्रयत्न में लगे रहते हैं, उन्हें धर्म की प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि निमित्त मिलाना पड़ता नहीं है, परन्तु होता है। (3) निमित्त मिलाने की बात निगोद से (मिथ्यात्व से) आयी है, क्योंकि प्रत्येक कार्य एक समय जितना होने से उसका (कार्य का) निमित्त के साथ एक समय का सम्बन्ध है। कार्य होने से पहले निमित्त किसे कहना और मिलाना कैसे ?

प्रश्न 49 - उपादान और निमित्त को जानने से क्या फल आना चाहिए ?

उत्तर - (1) व्यवहार से मोह छोड़ना; (2) व्यवहारनय में अविरोधरूप से मध्यस्थ रहना; (3) त्रिकाली उपादान के द्वारा मोह का अभाव करना; (4) मैं पर का नहीं हूँ, पर मेरे नहीं हैं - ऐसा स्व-पर का परस्पर स्व-स्वामीसम्बन्ध को त्याग देना; (5) मैं एक आत्मा ही हूँ; अनात्मा नहीं हूँ; (6) अपने में अपने को एकाग्र करना; (7) ध्रौव्य के लिए शुद्ध आत्मा ही उपलब्ध करनेयोग्य है; (8) अध्रुव शरीरादि उपलब्ध करनेयोग्य नहीं हैं; *[श्री प्रवचनसार, गाथा 190 से 193 तक के शब्दों में]* - यह फल आना चाहिए।

प्रश्न 50- कौनसा उपादानकारण हो, तब कार्य की उत्पत्ति नियम से होती हैं ?

उत्तर - उस समय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण हो, तब

नियम से कार्य की उत्पत्ति होती ही है।

प्रश्न 51 - पहले कारण या कार्य ?

उत्तर - वास्तव में सच्चे कारण-कार्य का एक ही समय होता है; तब फिर पहले कारण और फिर कार्य — ऐसा प्रश्न ही नहीं है।

प्रश्न 52 - उपादान के लिए और निमित्त के लिए आचार्यों ने क्या शब्द प्रयोग किया है ?

उत्तर - उपादान को 'अनुरूप' और निमित्त को 'अनुकूल' शब्द बताया है।

प्रश्न 53 - पर्याय का कारण, पर तो है नहीं, परन्तु द्रव्य भी कारण नहीं और अनन्तपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भी कारण नहीं है; मात्र उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है- इसकी सिद्धि कैसे हो ?

उत्तर - देखो दरी, लड्डू, चश्मा, पुस्तक-यह चारों पुद्गल हैं। इन सब में वर्णगुण है; सब की अलग-अलग पर्याय क्यों है ? वर्णगुण तो सब में है; इसलिए मानना पड़ेगा कि मात्र उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है।

प्रश्न 54 - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर - (1) जगत में जो-जो कार्य होता है, वह उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है; (2) पर तो उसका कारण है ही नहीं; (3) द्रव्य भी उसका करण नहीं है; (4) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण भी सच्चा कारण नहीं है; (5) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही सच्चा कारण और कार्य है - ऐसा जानने से अनादि काल से पर में कर्ता-भोक्ता की मिथ्याबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 55 – क्या निमित्त, उपादान में कुछ करता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं करता है, क्योंकि दोनों का स्वचतुष्ट्य पृथक्–पृथक् है।

प्रश्न 56– सोनगढ़ में निश्चय की बात तो ठीक है, परन्तु व्यवहार की बात ठीक नहीं है – क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर – किसी सेठ के एक पुत्र था। उसे जवानी में वेश्या सेवन का व्यसन पड़ गया। जब सेठ ने अपने पुत्र से शादी की बात कही तो वह कहने लगा, मैं शादी नहीं कराऊँगा। सेठ ने सोचा – यह कैसे हो सकता है ? सेठ ने अच्छे खानदान की एक सुन्दर कन्या से उसकी सगाई कर दी। लड़का कहता है कि मुझे शादी नहीं करनी है, क्योंकि मैं उसका मुँह देखूँगा, तो अन्धा हो जाऊँगा। तब सेठ ने लड़कीवालों को बुलाकर कहा कि हमारे यहाँ लड़के की आँख पर पट्टी बाँध कर फेरे होते हैं – ऐसा रिवाज है।

लड़कीवाले सहमत हो गये और शादी हो गयी। लड़का घर में आँखों पर पट्टी बाँधकर आवे, तुरन्त चला जावे। लड़की होशियार थी। उसे पता चला, मेरा पति वेश्यागामी है और वेश्या ने उसे कहा है कि तू अपनी पत्नी का मुँह देखेगा तो अन्धा हो जाएगा।

एक दिन लड़की ने अपने पति का हाथ पकड़कर कहा, आपको मालूम है कि आप मुझे देखें तो अन्धे हो जाओगे। आप मेरे कहे से एक आँख पर पट्टी बँधी रहने दो और एक आँख से मुझे देख लो। उसने ऐसा ही किया, किन्तु आँख तो फूटी नहीं। तब उसने कहा अब दूसरी पर पट्टी बाँध लो और दूसरी आँख से मुझे देखो, तब वह भी नहीं फूटी। तब उसने कहा – अब दोनों आँखों से मुझे देखो; तो उसने जब दोनों पट्टियों को उताकर देखा तो आँखें फूटी नहीं, किन्तु वेश्या से दृष्टि उठ गयी; उसी प्रकार सोनगढ़ का निश्चय तो

ठीक है, तो भाई! वहाँ जाकर देख, कैसा व्यवहार सोनगढ़ में है। लाखों रुपयों का दान होता है, नाम कोई लिखाता नहीं। दो बार प्रवचन, पूजा-भक्ति होती है। देख! कन्दमूल कोई खाता नहीं, रात्रि को पानी पीता नहीं। ज्यादातर पति-पत्नी ब्रह्मचर्य से रहते हैं। लगभग साठ बहिनें आजन्म ब्रह्मचर्य से रहती हैं। इसलिए हे भाई! निश्चय तो सोनगढ़ से सीखना पड़ेगा, परन्तु व्यवहार भी सोनगढ़ से सीखना पड़ेगा। जहाँ पर व्यवहार को हेय कहा जाता है, देखो! वहाँ का व्यवहार कैसा है! इसलिए सोनगढ़ की निश्चय की बात ठीक है और व्यवहार की बात ठीक नहीं है, यह बात बिल्कुल झूठ है।

प्रश्न 57 - निमित्तकर्ता से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - इसने ऐसा किया तो ऐसा हुआ - ऐसी मान्यता होना, यह निमित्तकर्ता से तात्पर्य है।

प्रश्न 58 - निमित्तकर्ता की मान्यता को उदाहरणों से समझाइये ?

उत्तर - (1) मैंने शुभभाव किया तो जीव बच गया। (2) मैंने अशुभभाव किया तो जीव मर गया। (3) मैंने गाली दी तो उसे क्रोध आया। (4) जीव ने विकार किया तो कर्मबन्ध हुआ। (5) मैंने भाव किये तो ऐसे-ऐसे कार्य हुए - आदि निमित्तकर्ता के उदाहरण हैं।

प्रश्न 59 - निमित्तकर्ता मानने का क्या फल है ?

उत्तर - चारों गतियों में घूमकर निगोद, निमित्तकर्ता मानने का फल है।

नोट *- निमित्त-उपादान / कारण-कार्य का सही स्वरूप समझने के लिए पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन ग्रन्थ (1) वस्तुविज्ञानसार; (2) मूल में भूल; (3) स्वतन्त्रता की घोषणा; (4) स्वाधीनता का शंखनाद का अध्ययन करना चाहिए। सभी पुस्तकें तीर्थधाम मङ्गलायतन से प्राप्त की जा सकती हैं।*

5

कारण-कार्य रहस्य

निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध : स्वरूप एवं प्रयोजन

प्रश्न 1 - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर - जब उपादान स्वयं स्वत: कार्यरूप परिणमित होता है, तब भावरूप (अस्तिरूप) या अभावरूप (नास्तिरूप) किस उचित (योग्य) निमित्तकारण का उसके साथ सम्बन्ध है, यह बतलाने के लिए उस कार्य को नैमित्तिक कहते हैं; इस प्रकार भिन्न-भिन्न पदार्थों के स्वतन्त्र सम्बन्ध को निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध कहते हैं।

प्रश्न 2 - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध किसमें होता है ?

उत्तर - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध दो स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है।

प्रश्न 3 - क्या निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध परतन्त्रता का सूचक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध परस्पर स्वतन्त्रता का सूचक है; परतन्त्रता का सूचक नहीं है। नैमित्तिक के साथ कौन निमित्तरूप पदार्थ है, उसका वह ज्ञान कराता है ?

प्रश्न 4 - कार्य को निमित्त की अपेक्षा क्या कहते हैं ?

उत्तर - नैमित्तिक कहते हैं।

प्रश्न 5 - कार्य को उपादान की अपेक्षा क्या कहते हैं ?

उत्तर - उपादेय कहते हैं।

प्रश्न 6 - निमित्त-नैमित्तिक का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, एक ही है या भिन्न-भिन्न है ?

उत्तर - निमित्त-नैमित्तिक का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, भिन्न -भिन्न हैं।

प्रश्न 7 - क्या निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध एक द्रव्य में उसको पर्याय के साथ होता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं! निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध दो पृथक्-पृथक् स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है; एक द्रव्य में उसकी पर्याय के साथ नहीं होता है।

प्रश्न 8 - अनेक निमित्तकारणों में कौन-कौन से भेद पड़ते हैं ?

उत्तर - अनेक निमित्तकारणों में जो मुख्य निमित्त हो, उसे अन्तरङ्ग (निमित्त) कारण कहा जाता है और गौण निमित्त हो, उसे बहिरङ्ग निमित्तकारण कहा जाता है।

प्रश्न 9 - जीव ने विकार किया तो कर्मबन्ध हुआ — इसमें निमित्त-नैमित्तिक बताओ ?

उत्तर - कर्मबन्ध, नैमित्तिक और जीव का विकार, निमित्त।

प्रश्न 10 - 'कर्मबन्ध हुआ' इसमें कर्म की कितने प्रकार की दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - प्रकृति-प्रदेश-स्थिति और अनुभाग - चार प्रकार की दशा होती है।

प्रश्न 11- प्रकृति, प्रदेशबन्ध हुआ, इसमें निमित्त-नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर - प्रकृति-प्रदेशबन्ध नैमित्तिक, और योगगुण की विकारी पर्याय, निमित्त है।

प्रश्न 12- स्थिति, अनुभागबन्ध हुआ, इसमें निमित्त-नैमित्तिक कौन हैं ?

उत्तर - स्थिति-अनुभागबन्ध, नैमित्तिक और कषायभाव, निमित्त है।

प्रश्न 13 - कर्मबन्ध हुआ, इसमें पृथक्-पृथक् निमित्त-नैमित्तिक किस प्रकार हुए - जरा स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर - (1) प्रकृति-प्रदेशबन्ध हुआ, नैमित्तिक और योगगुण की विकारीपर्याय, निमित्त; (2) स्थिति-अनुभागबन्ध हुआ, नैमित्तिक और कषायभाव, निमित्त।

कर्मबन्धन के लिए आत्मा के योगगुण के विकारीपरिणमन को बहिरङ्ग निमित्तकारण कहा और कर्मबन्धन के लिए जीव के कषायभाव को अन्तरङ्ग निमित्तकारण कहा, परन्तु कर्मबन्धन के लिए दोनों निमित्त, धर्मद्रव्य के समान हैं, तथापि निमित्तों की पहिचान के लिए यह स्पष्ट किया है।

प्रश्न 14- कर्मबन्धन में योग की विकारीपर्याय और कषायभाव कैसे निमित्त हैं ?

उत्तर - वास्तव में दोनों बहिरङ्ग निमित्त हैं।

प्रश्न 15 - आपने कर्मबन्धन के लिए योग के विकारी-परिणमन को बहिरङ्ग निमित्त और कषाय को अन्तरङ्ग निमित्त क्यों कहा है ?

उत्तर – (1) कषाय की मुख्यता बताने के लिए, उसे अन्तरङ्ग निमित्तकारण कहा है और योगगुण के विकारीपरिणमन की गौणता बताने के लिए, उसे बहिरङ्ग निमित्तकारण कहा है।

प्रश्न 16- कर्मबन्धन के लिए अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग निमित्तकारण बताने के पीछे क्या रहस्य है ?

उत्तर – (1) प्रकृति-प्रदेशबन्ध का नैमित्तिकपना अपने उपादान से हुआ; योगगुण के विकारी परिणमन के कारण नहीं। योगगुण में विकारीपरिणमन के कारण प्रकृति-प्रदेशबन्ध का कार्य हुआ – ऐसी श्रद्धा छोड़नी है। (2) स्थिति-अनुभागबन्ध का नैमित्तिकपना अपने उपादान से हुआ; कषाय के कारण नहीं। कषाय का परिणमन होने के कारण, कर्मों में स्थिति अनुभागबन्ध हुआ – ऐसी श्रद्धा छोड़नी है।

प्रश्न 17 – दर्शनमोहनीय के उपशम से औपशमिकसम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी – इसमें निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध बताओ ?

उत्तर – औपशमिकसम्यक्त्व की प्राप्ति, नैमित्तिक और दर्शन-मोहनीय का उपशम, निमित्त।

प्रश्न 18 – औपशमिकसम्यक्त्व में दर्शनमोहनीयकर्म का उपशम, निमित्त बताया है। इसके अलावा क्या दूसरा कोई निमित्त भी है ?

उत्तर – सच्चा गुरु, दूसरा निमित्त है।

प्रश्न 19 – दर्शनमोहनीय का उपशम और गुरु, यह दो औपशमिकसम्यक्त्व में निमित्त हुए, इन दोनों निमित्तों को क्या कहा जाता है ?

उत्तर – दर्शनमोहनीय का उपशम, अन्तरङ्गनिमित्त और गुरु, बहिरङ्ग निमित्त कहे जाते हैं।

प्रश्न 20- गुरु जो निमित्त है, उसमें भी कोई भेद है ?

उत्तर - हाँ है; ज्ञानी गुरु का अभिप्राय, अन्तरङ्गनिमित्त और वाणी, बहिरङ्गनिमित्त।

प्रश्न 21- अन्तरङ्गनिमित्त, बहिरङ्गनिमित्त — यह निमित्तों के भेद क्यों किये ?

उत्तर - (1) निमित्तों के उपभेद बताने के लिए भेद किए हैं। (2) सम्यग्दर्शन अपने श्रद्धागुण के परिणमन के कारण हुआ है; निमित्तों के कारण नहीं; (3) जितने भी निमित्त हैं - चाहे अन्तरङ्ग हों या बहिरङ्ग हों, वे सब निमित्त, धर्मद्रव्य के समान ही हैं।

प्रश्न 22- बाई ने रोटी बनायी -इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - रोटी बनी, नैमित्तिक और बाई का राग, निमित्त।

प्रश्न 23 - कर्म के कारण, राग हुआ - इमसें निमित्त-नैमित्तिक बताओ ?

उत्तर - राग हुआ, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीयकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 24- धोबी ने कपड़ा धोया - इसमें निमित्त-नैमित्तिक बताओ ?

उत्तर - कपड़ा धुलना, नैमित्तिक और धोबी का राग, निमित्त।

प्रश्न 25- धर्मद्रव्य, जीव को चलाता है - इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव का चलना, नैमित्तिक और धर्मद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 26- (1) बढ़ई रथ बनता है। (2) मैं रोटी खाता हूँ। (3) कर्मों के अभाव से जीव मोक्ष जाता है। (4) देह से सुख

होता है। (5) मैंने बिस्तर बिछाया। (6) ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम से ज्ञान का उघाड़ होता है। (7) केवलज्ञान, लोकालोक को जानता है। (8) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व होता है।(9) मैंने किताब बनायी।(10) मैंने मेज उठायी। इन सब में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध लगाओ ?

उत्तर – (1) रथ बनना, नैमित्तिक और बढ़ई का राग, निमित्त। इसी प्रकार बाकी के नौ वाक्यों के उत्तर स्वयं दें।

प्रश्न 27 – सकलचारित्र की प्राप्ति हुई – इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – सकलचारित्र, नैमित्तिक और अनन्तानुबन्धी आदि तीन चौकड़ीरूप द्रव्यकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 28– औपशमिकसम्यक्त्व की प्राप्ति हुई – इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – औपशमिकसम्यक्त्व, नैमित्तिक और दर्शनमोहनीय का उपशम और अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ; द्रव्यकर्म का क्षयोपशमादि, निमित्त।

प्रश्न 29 -मिथ्यात्वदशा हुई-इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – मिथ्यात्वदशा, नैमित्तिक और दर्शनमोहनीयकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 30– बारहवें गुणस्थान में क्षयोपशमदशा है – इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – बारहवें गुणस्थान में क्षयोपशमदशा, नैमित्तिक और ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तरायकर्म का क्षयोपशम, निमित्त।

प्रश्न 31- केवलज्ञान में निमित्त-नैमित्तिक कौन हैं ?

उत्तर - केवलज्ञान, नैमित्तिक और केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 32- अरहन्तदशा में सिद्धपद नहीं है - इसमें निमित्त -नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर - अरहन्त को सिद्धपद नहीं होना, नैमित्तिक और चार अघातिकर्म का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 33 - सच्चे श्रावकपने में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - सच्चा श्रावकपना, नैमित्तिक और दर्शनमोहनीयसहित अनन्तानुबन्धी और अप्रत्याख्यान — चारित्रमोहनीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 34- जीव की विभावव्यंजनपर्याय में निमित्त-नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर - जीव की विभावव्यंजनपर्याय, नैमित्तिक और शरीर तथा नामकर्म का सद्भाव, निमित्त।

प्रश्न 35- जीव की स्वभावव्यंजनपर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव की स्वभावव्यंजनपर्याय, नैमित्तिक और शरीर तथा नामकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 36 - शुक्ललेश्या में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - शुक्ललेश्या का भाव, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीय-कर्म का मन्द उदय, निमित्त।

प्रश्न 37- नो कषाय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – नो कषाय का भाव, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीयकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 38 – अकषायभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अकषायभाव, नैमित्तिक और गुणस्थानप्रमाण चारित्र-मोहनीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 39 – शुक्लध्यान में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – शुक्लध्यान, नैमित्तिक और संज्वलन चारित्रमोहनीयकर्म का गुणस्थानानुसार अभाव, निमित्त।

प्रश्न 40- अव्याबाधप्रतिजीवीगुण शुद्ध हुआ – इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अव्याबाधप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और वेदनीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 41- अवगाहनप्रतिजीवीगुण शुद्ध हुआ – इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अवगाहनप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और आयुकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 42 – अगुरुलघुत्वप्रतिजीवीगुण शुद्ध प्रगटा, इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अगुरुलघुत्वप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और गोत्रकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 43 – सूक्ष्मत्वप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, प्रगटी, इसमें निमित्त-नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर – सूक्ष्मत्वप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और नामकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 44 - परम ज्ञायकस्वभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - परम ज्ञायकस्वभाव, निरपेक्षस्वभाव है; इसमें निमित्त -नैमित्तिक नहीं होता है, क्योंकि निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध दो स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है।

प्रश्न 45 - क्या द्रव्यकर्म है, इसलिये जीव में दोष है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि दोनों द्रव्यों के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, पृथक्-पृथक् है; इसलिए द्रव्यकर्म है तो जीव में दोष हुआ— ऐसा नहीं है।

प्रश्न 46 - क्या जीव में दोष है, इसलिए द्रव्यकर्म है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; क्योंकि दोनों पृथक्-पृथक् पदार्थ हैं।

प्रश्न 47- ऐसा कौनसा द्रव्य है, जिसकी पर्याय में निमित्त -नैमित्तिकपना न हो ?

उत्तर - ऐसी किसी भी द्रव्य की पर्याय नहीं है, क्योंकि पर्याय में निमित्त-नैमित्तिकपने का स्वभाव है और स्वभाव का कभी अभाव होता नहीं है।

प्रश्न 48- जीव की अशुद्धदशा में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध क्या है ?

उत्तर - जीव की अशुद्धदशा, नैमित्तिक और द्रव्यकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 49- जीव-पुद्गल की गति में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव-पुद्गल का गमन होना, नैमित्तिक और धर्मद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 50 - जीव-पुद्गल की स्थिति में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव-पुद्गल की स्थिति होना, नैमित्तिक और अधर्मद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 51- छहों द्रव्यों को स्थान देने में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - छहों द्रव्यों का अपने-अपने स्थान (क्षेत्र) में रहना, नैमित्तिक और आकाशद्रव्य निमित्त।

प्रश्न 52 - छहों द्रव्यों के परिणमन में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - छहों द्रव्यों का परिणमन, नैमित्तिक और कालद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 53- क्षायिकसम्यग्दर्शन की प्राप्ति में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - क्षायिकसम्यग्दर्शन, नैमित्तिक और सातों कर्मप्रकृतियों का अभाव, अन्तरङ्गनिमित्त।

प्रश्न 54- रागादि का होना -इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - रागादि का होना, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीय का उदय तथा नोकर्म, निमित्त।

प्रश्न 55- छठवें गुणस्थान में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - (अ) शुद्धपरिणति, नैमित्तिक और तीन चौकड़ी कषाय कर्म का अभाव, निमित्त तथा (आ) शुभभाव, नैमित्तिक और संज्वलन क्रोधादि का तीव्र उदय, निमित्त।

प्रश्न 56- सातवें गुणस्थान में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - (अ) राग का अव्यक्तरूप से सद्भाव, नैमित्तिक और संज्वलन-क्रोधादि का मन्द उदय, निमित्त तथा (आ) शुद्धोपयोगदशा, नैमित्तिक और तीन चौकड़ी तथा संज्वलन के तीव्र उदय का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 57- जीव का स्वभाव, द्रव्यकर्म के अभावरूप कब होता है ?

उत्तर - जीव के स्वभाव में, द्रव्यकर्म के अभाव के सद्भाव का कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि स्वभाव त्रिकाल एकरूप रहता है।

प्रश्न 58 - मोक्षमार्ग में प्रकाश किसका है ?

उत्तर - संवर-निर्जरारूप निश्चयरत्नत्रयरूप जैनधर्म का प्रकाश है।

प्रश्न 59 - क्या उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी का कारण द्रव्यकर्म है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि श्रेणी का कारण उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण है।

प्रश्न 60- एक जीव अनन्त काल पहले मोक्ष गया और एक अब जा रहा है और अन्य आगे जावेंगे - उसका क्या कारण है ?

उत्तर - 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान-कारण' है।

प्रश्न 61 - क्या जीव की अशुद्धता में उपादानकारण, द्रव्यकर्म है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान सच्चा उपादानकारण है; द्रव्यकर्म, कारण नहीं है।

प्रश्न 62 - निमित्त-नैमित्तिक का स्वरूप जानने से कौनसी मिथ्यामान्यता दूर हो जानी चाहिए ?

उत्तर - एक-दूसरे में करने-कराने की और भोक्ता-भोग्य की मान्यता नष्ट हो जानी चाहिए।

प्रश्न 63 - क्या केवलज्ञानियों को ही पारमार्थिक सुख है ?

उत्तर - हाँ, केवलज्ञानियों को ही पारमार्थिक सुख है - ऐसा ज्ञानी जानते हैं।

प्रश्न 64 - केवलज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है - ऐसा कहीं श्री प्रवचनसार में आया है ?

उत्तर - गाथा 62 में आया कि:—

सूणी घातिकर्म विहीन को सुख, वह सुख उत्कृष्ट है।
श्रद्धे न वह अभव्य है अरु भव्य वह सम्मत करे॥

अर्थात् — जिनके घातिकर्म नष्ट हो गये हैं, उनका सुख (सर्व) सुखों में उत्कृष्ट है। यह सुनकर जो श्रद्धा नहीं करते, वे अभव्य हैं, और जो उसे स्वीकार करते हैं - उसकी श्रद्धा करते हैं, वे भव्य हैं।

प्रश्न 65- पारमार्थिकसुख की शुरुआत कौन से गुणस्थान से होती है ?

उत्तर - चौथे गुणस्थान से पारमार्थिक सुख की शुरुआत होती हैं। जिनको पारमार्थिकसुख की शुरुआत होती है, वे अल्प काल में ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 66- ज्ञानियों को सुख है और ज्ञान भी है - ऐसा कौन कहते हैं ?

उत्तर - जिन-जिनवर और जिनवरवृषभ कहते हैं।

प्रश्न 67- ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है और ज्ञान भी है - ऐसा जानकर ज्ञानी क्या करते हैं ?

उत्तर - अपने ज्ञायकस्वभाव में विशेष स्थिरता करके, अल्प काल में ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 68 - ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है और ज्ञान भी है; अज्ञानियों को न सुख है और न ज्ञान ही है - सुनकर ऐसा सम्यक्त्व के सन्मुख पात्र जीव क्या करता है ?

उत्तर - सम्यक्त्व के सन्मुख पात्र जीव, अपने ज्ञायकस्वभाव की श्रद्धा करके, क्रम से ज्ञानियों की तरह मोक्ष को प्राप्त करता है।

प्रश्न 69- ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है और ज्ञान भी है अज्ञानियों को ना सुख है और ना ही ज्ञान है, ऐसा सुनकर अपात्र अज्ञानी क्या करता है ?

उत्तर - भगवान की वाणी का विरोध करके, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद चला जाता है।

प्रश्न 70 - ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख और ज्ञान क्यों है ?

उत्तर - ज्ञानियों को अपना श्रद्धान-ज्ञान-आचरण होने से तथा वस्तुस्वरूप का ज्ञान होने से पारमार्थिकसुख और ज्ञान, दोनों वर्तते हैं।

प्रश्न 71- अज्ञानियों को पारमार्थिकसुख और ज्ञान क्यों नहीं है ?

उत्तर - अज्ञानियों को अपना श्रद्धान-ज्ञान-आचरण न होने से

तथा वस्तुस्वरूप का ज्ञान न होने से पारमार्थिकसुख और ज्ञान नहीं है।

प्रश्न 72- वस्तुस्वरूप कैसा है ?

उत्तर - 'अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती' ऐसा वस्तुस्वरूप है।

प्रश्न 73- 'मैं सुबह उठकर यहाँ आया' - इस वाक्य में वस्तुस्वरूप (निमित्त-नैमित्तिक) किस प्रकार हैं ?

उत्तर - (अ) मैं आत्मा अनादि-अनन्त ज्ञायकस्वरूप, अनन्त गुणों का धारी अमूर्तिक प्रदेशों का पुँज हूँ। मुझ आत्मा का अपनी क्रियावतीशक्ति के कारण गमनरूप परिणमन हुआ, फिर स्थिररूप परिणमन हुआ। गमनरूप परिणमन में धर्मद्रव्य, निमित्त है और स्थिररूप परिणमन में अधर्मद्रव्य, निमित्त है। मुझ आत्मा अपने असंख्यात प्रदेशों में रहा। इसमें निमित्त, आकाशद्रव्य है; मुझ आत्मा के अनन्त गुणों में निरन्तर परिणमन उसकी योग्यता से होता है, उसमें निमित्त, कालद्रव्य हैं। (आ) औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्माणशरीर, भाषा और मन का मुझ आत्मा के साथ मात्र एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है तथा व्यवहारनय से ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध है। वास्तव में तो ज्ञानपर्याय, ज्ञेय और मुझ आत्मा, ज्ञायक है, परन्तु यह भी भेद है और भेद के लक्ष्य से रागी जीव को राग की उत्पत्ति होती है; अतः मुझ आत्मा ज्ञायक, सो ज्ञायक ही है। इस प्रकार अभेद के लक्ष्य से जीव का कल्याण होता है। अतः मुझ आत्मा ज्ञायक-ज्ञायक।

(इ) औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्माणशरीर, भाषा और मन

में अनन्त पुद्गल, परमाणु हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी क्रियावतीशक्ति के कारण गमन करता है, जिसमें धर्मद्रव्य निमित्त है; गमनपूर्वक करके स्थिर होता है, उसमें अधर्मद्रव्य, निमित्त है, और औदारिकशरीर आदि में अनन्त पुद्गल परमाणु अपने-अपने प्रदेश में अवगाहन करते हैं, उसमें निमित्त, आकाशद्रव्य है; औदारिक -शरीर आदि में अनन्त पुद्गल परमाणु हैं और प्रत्येक परमाणु में अनन्न-अनन्त गुण हैं, वे सब अपनी-अपनी योग्यता से परिणमन करते हैं, उसमें कालद्रव्य, निमित्त हैं। यह सब मूर्तिकद्रव्यों का पिण्ड; प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित; जिनका नवीन संयोग हुआ है - ऐसा औदारिक आदि शरीर (पुद्गल) पर हैं - ऐसी वस्तुस्थिति है। ऐसा वस्तुस्वरूप (निमित्त-नैमित्तिक) जानने-मानने से पात्र जीवों की पर में से कर्तृत्वबुद्धि छूट जाती है। वे उन सबके ज्ञाता-दृष्टा ही रहते हैं। अत: उन्हें सुख और ज्ञान भी प्रति समय रहता है और क्रम से मोक्षरूपी लक्ष्मी के नाथ बन जाते हैं।

प्रश्न 74- पूर्व प्रश्न के अनुसार वस्तुस्वरूप का ज्ञान, अर्थात् निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध के सच्चे ज्ञान और श्रद्धान का फल, भगवान ने क्या बताया है ?

उत्तर - 'भव बन्धन तड़-तड़ टूट पड़े, खिल जावे अन्तर की कलियाँ', अर्थात् अनादि का भव बन्धन समाप्त होकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति, इसका फल बताया है।

प्रश्न 75- 'मैं सुबह उठकर यहाँ आया' - अज्ञानी इसमें कैसा निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध मानता है।

उत्तर - 'अज्ञानी की मान्यता में, मैं आत्मा था तो शरीर उठकर आया या शरीर था तो मैं आत्मा आया।' इस प्रकार अनन्त परद्रव्यों

में अपनेपने की, ममकारपने की , पर को अपनेरूप करने की, अपने को पररूप करने की मिथ्याबुद्धि पायी जाती है, जिसका फल, निगोद है, अर्थात् उल्टा निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध मानने का फल, निगोद है।

प्रश्न 76- अज्ञानी का अज्ञान दूर करने का उपाय भगवान ने क्या बताया है ?

उत्तर - जिस प्रकार कोई मोहित होकर मुर्दे को जीवित माने या जिलाना चाहे तो आप ही दु:खी होता है तथा उसे मुर्दा मानना और यह जिलाने से जीयेगा नहीं - ऐसा मानना, सो ही दु:ख दूर होने का उपाय है। उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि, पदार्थों को अन्यथा माने या अन्यथा परिणमित कराना चाहे तो आप ही दु:खी होता है; उन्हें यथार्थ मानना और यह परिणमित कराने से अन्यथा परिणमित नहीं होंगे - ऐसा मानना, सो ही उस दु:ख के दूर होने का उपाय है। भ्रमजनित दु:ख का उपाय, भ्रम दूर करना ही है। सो भ्रम दूर होने से सम्यक्श्रद्धान होता है। यही सत्य उपाय भगवान ने बताया है।

(श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52)

प्रश्न 77- क्या अज्ञानी, सुबह से शाम तक दिखनेवाले पुद्गल के कार्यों का निमित्तकर्ता भी नहीं है ?

उत्तर - वास्तव में सुबह से शाम तक जितने रूपीपदार्थों के कार्य होते हैं, उनका कर्ता पुद्गल ही है। अज्ञानी जीव भी पुद्गल के कार्यों का निमित्तकर्ता नहीं है परन्तु अज्ञानी अज्ञानवश यह मानता है कि मैंने रोटी बनायी, मैंने व्यापार किया, मैं हँसा, मैं सोया आदि विपरीत मान्यताओं में पागल बना रहता है, जिसका फल, परम्परा निगोद है।

प्रश्न 78- अज्ञानी दु:खी क्यों है ?

उत्तर - जड़ की क्रिया अपनी मानने के कारण ही दु:खी है।

प्रश्न 79- ज्ञानी सुखी क्यों है ?

उत्तर -जड़ की क्रिया को अपनी न मानने के कारण ही सुखी है। अपनी ज्ञानक्रिया है -ऐसी श्रद्धा-ज्ञान होने से ही ज्ञानी सुखी है।

प्रश्न 80- जितना जड़ का कार्य है - क्या उसका कर्ता-कर्म और भोक्ता-भोग्य सर्वथा जड़ ही है ?

उत्तर - हाँ, भाई! जड़ का कर्ता-कर्म, भोक्ता-भोग्य सर्वथा जड़ ही हैं; जीव नहीं है।

प्रश्न 81 - क्या अज्ञानी, जड़ के कार्य में निमित्त भी नहीं है ?

उत्तर - अज्ञानी, जड़ के कार्य में निमित्त भी नहीं है, परन्तु जड़ के कार्य मैं करता हूँ - ऐसी मान्यता होने से दु:खी है।

प्रश्न 82- क्या जड़ के कार्य में ज्ञानी का निमित्त-नैमित्तिकपना नहीं है ?

उत्तर - नहीं है, किन्तु मात्र ज्ञेय-ज्ञायकपना व्यवहार से है। अर्थात्, ज्ञान की पर्याय, नैमित्तिक और जड़पदार्थ की पर्याय, निमित्त है।

प्रश्न 83 - श्री मोक्षमार्गप्रकाशक के तीसरे अधिकार में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर - मोह के आवेश से उन इन्द्रियों के द्वारा विषय-ग्रहण करने की इच्छा होती है, और उन विषयों का ग्रहण होने पर, उस इच्छा के मिटने से निराकुल होता है, तब आनन्द मानता है। जैसे— कुत्ता, हड्डी चबाता है, उससे अपना लोहू निकले, उसका स्वाद

लेकर ऐसा मानता है कि यह हड्डियों का स्वाद है। उसी प्रकार यह जीव, विषयों को जानता है, उससे अपना ज्ञान प्रवर्तता है; उसका स्वाद लेकर ऐसा मानता है कि यह विषय का स्वाद है, सो विषय में तो स्वाद है नहीं। स्वयं ही इच्छा की थी, उसे स्वयं ही जानकर, स्वयं ही आनन्द मान लिया; परन्तु मैं अनादि-अनन्त ज्ञानस्वरूप आत्मा हूँ—ऐसा नि:केवलज्ञान का (पर से भिन्न अपनी आत्मा का) तो अनुभवन है नहीं।

प्रश्न 87-(1) मैं सुबह उठा; (2) मैं बोला; (3) मैंने रोटी खायी; (4) मैंने रुपया कमाया; (5) मैंने जीवों की रक्षा की; (6) मैं बीमार हूँ; (7)मैं शास्त्र प्रवचन करता हूँ; (8) मैं कपड़े धोता हूँ; (9) मैंने सिनेमा देखा; इन वाक्यों को पूर्व प्रश्न में दिये गये उत्तर के अनुसार समझाइये ? ●●

6

कारण-कार्य रहस्य

व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1- व्याप्य व्यापक किसे कहते हैं ?

उत्तर - (1) जो सर्व अवस्थाओं में रहे, वह व्यापक है और एक अवस्था विशेष, (उस व्यापक का) व्याप्य है।

प्रश्न 2 - व्याप्य-व्यापक के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर - व्यापक-व्याप्य कहो, कर्ता-कर्म कहो, परिणामी -परिणाम कहो, त्रिकाली उपादान-उपादेय कहो, एक ही बात है।

प्रश्न 3 - द्रव्य-गुण-पर्याय में व्याप्य-व्यापक किसमें है ?

उत्तर - द्रव्य-गुण, व्यापक है, और पर्याय, व्याप्य है।

प्रश्न 4 - क्या व्याप्य-व्यापकपना भिन्न-भिन्न पदार्थों में होता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि व्याप्य-व्यापकपना तत्स्वरूप में ही, अर्थात् अभिन्न सत्तावान पदार्थों में ही होता है। अतत्स्वरूप में, अर्थात् जिनकी सत्ता भिन्न-भिन्न है - ऐसे पदार्थों में नहीं होता है।

प्रश्न 5 - व्याप्य-व्यापक को जानने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर - सामान्य में से विशेष आता है, अर्थात् व्यापक में से व्याप्य आता है; पर से नहीं - ऐसा जानने से ज्ञानी हो जाता है और अनादि से परपदार्थों में जो कर्ता-कर्म माना था, उसका अभाव हो जाता है। जगत का ज्ञाता-दृष्टा साक्षीभूत बन जाता है।

प्रश्न 6 - सम्यग्दर्शन का व्याप्य-प्यापक कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - आत्मा का श्रद्धागुण, व्यापक और सम्यग्दर्शन, व्याप्य है। देव-गुरु-शास्त्र, दर्शनमोहनीय के उपशमादि, व्यापक नहीं हैं।

प्रश्न 7 - केवलज्ञान में व्याप्य-व्यापक कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - आत्मा का ज्ञानगुण, व्यापक है और केवलज्ञान, व्याप्य है। व्रजवृषभनाराचसंहनन, ज्ञानावरणीय का अभाव, चौथा काल और शुभभाव, व्यापक नहीं हैं।

प्रश्न 8 - क्या रोटी, व्याप्य और बाई, व्यापक ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि आटा, व्यापक और रोटी, व्याप्य है।

प्रश्न 9 - यदि बाई को व्यापक कहे तो क्या होगा ?

उत्तर - बाई के नाश होने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा। बाई, आटा बन जावे तो ऐसा कहा जा सकता है, लेकिन व्याप्य-व्यापक-सम्बन्ध एक ही द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; दो द्रव्यों में नहीं होता है।

प्रश्न 10 - क्या जीव के विकारीपरिणाम, व्यापक और पुद्गल के विकारीपरिणाम (कर्म), व्याप्य - यह ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि पुद्गल के विकारीपरिणाम, व्याप्य और कार्माणवर्गणा, व्यापक है।

प्रश्न 11 – कोई कहे, हम तो जीव के विकारीपरिणाम, व्यापक और पुद्गलकर्म, व्याप्य – ऐसा ही मानेंगे, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – जीव के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होगा। यदि जीव नष्ट होकर कार्माणवर्गणा बन जावे तो ऐसा कहा जा सकता है, किन्तु ऐसा नहीं होता है क्योंकि व्याप्य–व्यापकसम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है; भिन्न–भिन्न पदार्थों में नहीं होता है।

प्रश्न 12 – क्या द्रव्यकर्म का उदय, व्यापक और संसार अवस्था, व्याप्य – ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि संसार अवस्था, व्याप्य और जीव, व्यापक है।

प्रश्न 13 – कोई कहे, हम तो कर्म का उदय, व्यापक और संसार अवस्था, व्याप्य – ऐसा ही मानेंगे तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – जीव के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और कर्म के उदय को जीव बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, लेकिन ऐसा होता नहीं है, क्योंकि व्याप्य–व्यापकसम्बन्ध, एक ही द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; भिन्न–भिन्न द्रव्यों में नहीं होता है।

प्रश्न 14 – क्या द्रव्यकर्म का अभाव, व्यापक और संसार का अभाव, व्याप्य ठीक है।

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि संसार का अभाव, व्याप्य और जीव, व्यापक है।

प्रश्न 15 – यदि द्रव्यकर्म का अभाव, व्यापक और संसार

का अभाव, व्याप्य - ऐसा ही माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - जीव के अभाव का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और कर्म के जीव बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, लेकिन ऐसा होता नहीं है, क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है; अलग-अलग द्रव्यों में नहीं होता है।

प्रश्न 16 - क्या वायु का चलना, व्यापक और समुद्र में लहर उठना, व्याप्य - ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि समुद्र में लहर उठना, व्याप्य और समुद्र, व्यापक है।

प्रश्न 17 - कोई कहे, वायु का चलना, व्यापक और समुद्र में लहर उठना, व्याप्य तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - समुद्र के नष्ट होने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और वायु के नष्ट होकर समुद्र बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा,किन्तु ऐसा नहीं होता हैं क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों की पर्यायों में नहीं होता है।

प्रश्न 18 - क्या वायु का न चलना, व्यापक और तरंग नहीं उठना, व्याप्य, ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि समुद्र में तरंग नहीं उठना, व्याप्य और समुद्र, व्यापक है।

प्रश्न 19 - कोई कहे, हवा नहीं चलना, व्यापक और तरङ्ग नहीं उठना, व्याप्य, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - समुद्र के नष्ट होने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और वायु का नाश होकर समुद्र बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, किन्तु

ऐसा होता नहीं है, व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों की पर्यायों में नहीं होता है।

प्रश्न 20 - विकारीभाव अहेतुक है या सहेतुक है ?

उत्तर - वास्तव में विकारीभाव अहेतुक है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का परिणमन स्वतन्त्र है, और विकारीपर्याय के समय निमित्त होता है, इस अपेक्षा सहेतुक है।

प्रश्न 21 - विकारीभाव के अहेतुक या सहेतुक में कोई दूसरी भी अपेक्षा है ?

उत्तर - विकारीभाव, आत्मा स्वतन्त्ररूप से करता है, वह अपना हेतु है, इस अपेक्षा सहेतुक है; और कर्म सच्चा हेतु नहीं है, इस अपेक्षा अहेतुक है।

प्रश्न 22 - तुम विकारीभाव को आत्मा का स्वभाव कहते हो और स्वभाव का कभी अभाव होता नहीं; इसलिए विकार को कर्मकृत मानना चाहिए - क्या यह ठीक है ?

उत्तर - (1) विकारीभाव, व्याप्य, और द्रव्यकर्म, व्यापक - ऐसा माने तो ऐसा व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध नहीं बनेगा, क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों में नहीं होता है; इसलिए आत्मा, व्यापक और विकारीभाव, व्याप्य - ऐसा मानने योग्य है। (2) हम विकार को एक समय का विकारीस्वभाव कहते हैं; त्रिकालीस्वभाव नहीं कहते हैं। (3) यदि जीव, विकार को एक समय का स्वयं का अपराध माने, तो त्रिकालीस्वभाव के आश्रय से विकार का अभाव कर सकता है। (4) यदि विकार को कर्मकृत माना जावे तो जीव कभी निगोद से नहीं निकले; जहाँ जो पड़ा हो, वहीं पड़ा रहेगा।

प्रश्न 23 - शुद्धनय की दृष्टि से रागादिक का व्याप्य-व्यापक कौन है ?

उत्तर - रागादिभाव, व्याप्य और पुद्गल, व्यापक है।

प्रश्न 24 - अशुद्धनिश्चयनय से रागादिक का व्याप्य-व्यापक कौन है ?

उत्तर - रागादिभाव, व्याप्य और अज्ञानी जीव का चारित्रगुण, व्यापक है।

प्रश्न 25 - कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया — इसमें व्याप्य-व्यापक बताओ ?

उत्तर - समयसार बनना, व्याप्य; पुद्गलरूप आहारवर्गणा, व्यापक।

प्रश्न 26 - मैं बोला — इसमें व्याप्य-व्यापक बताओ ?

उत्तर - शब्द निकलना, व्याप्य और भाषावर्गणा, व्यापक है।

जय महावीर-जय महावीर

7

श्री समयसार, गाथा 100 का रहस्य

आत्मा, निमित्त – नैमित्तिकभाव से भी.....

प्रश्न 1 – श्री समयसार, गाथा 100 के चार बोल क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) यदि आत्मा, व्याप्य-व्यापकभाव से परद्रव्य का कर्ता बने तो तन्मयपने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, अर्थात् अभिप्राय में आत्मा के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; **(पररूपपना)** (2) यदि आत्मा, निमित्त-नैमित्तिकभाव से परद्रव्य का कर्ता बने तो नित्यकर्तृत्व का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, अर्थात् उसका संसार तीनों काल कायम रहेगा। **(त्रिकाल संसारपना)** (3) अज्ञानी का योग और उपयोग, परद्रव्य की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है; **(अज्ञानीपना)** (4) ज्ञानी का योग और उपयोग, परद्रव्य की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता नहीं, मात्र ज्ञाता है। **(ज्ञानीपना)**

प्रश्न 3 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – क्या कुम्हार, व्यापक और घड़ा, व्याप्य – यह ठीक है।

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि मिट्टी, व्यापक और घड़ा, व्याप्य है।

प्रश्न 4 – कोई चतुर कहे कि कुम्हार, व्यापक और घड़ा, व्याप्य, तो क्या होगा।

उत्तर - यदि कुम्हार नष्ट होकर मिट्टी बन जावे, तो ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा नहीं होता है, क्योंकि व्याप्य-व्यापक-सम्बन्ध तत्स्वरूप में ही होता है, अतत्स्वरूप में नहीं होता है।

प्रश्न 5- यह ठीक है कि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध तो एक द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है परन्तु घड़ा बना, नैमित्तिक और कुम्हार, निमित्त तो है न ?

उत्तर - (1) कुम्हार, निमित्त नहीं है। यदि कुम्हार, घड़े का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बने, तो कुम्हार को नित्यकर्तृत्वपने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, अर्थात् उसका संसार तीनों काल कायम रहेगा, (2) याद रखें - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध दो द्रव्यों की स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है; द्रव्य-गुण के बीच में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध नहीं होता है। दूसरा बोल, द्रव्य की अपेक्षा से है; इसलिए कुम्हार, निमित्त नहीं है।

प्रश्न 6 - हम भी द्रव्य-गुण में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध नहीं मानते हैं; इसलिए आपकी बात ठीक है, परन्तु घड़ा बना, नैमित्तिक और कुम्हार का उस समय का राग तो, निमित्त है न ?

उत्तर - (1) निमित्त तो है, परन्तु अज्ञानी, निमित्तकर्ता मानता है और निमित्तकर्ता मानने से, जब-जब घड़ा बने तो कुम्हार को उपस्थित रहना पड़ेगा। वह कभी भी अपने बाल-बच्चों को भी नहीं खिला सकेगा, स्वर्ग-मोक्ष में भी नहीं जा सकेगा, अर्थात् उसका संसार तीनों काल कायम रहेगा।

(2) जैसे, गाय का माँस निकला हो तो कौआ वहीं पर बैठता है; उसी प्रकार अज्ञानी की दृष्टि निमित्तकर्ता पर ही रहती है। (3) वास्तव में अज्ञानी, पर्याय में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध शास्त्र के

आधार से कहता है, उसकी बुद्धि में कर्ता-कर्म बैठा है; इसलिए कहता है कि एक समय का निमित्त तो है न!

प्रश्न 7 - हमारी दृष्टि में कुछ भी बैठा हो, हम तो यह पूछते हैं कि घड़ा बना, नैमित्तिक और कुम्हार का उस समय का राग निमित्त है न?

उत्तर - मानो घड़ा बना 10 नम्बर पर; कुम्हार का राग भी 10 नम्बर पर; हाथ आदि क्रिया भी 10 नम्बर पर; यह तीनों अलग-अलग द्रव्यों की स्वतन्त्र क्रियाएँ हैं। अज्ञानी को इनकी स्वतन्त्रता का पता नहीं है। (1) यहाँ पर कुम्हार के ज्ञान का, कषायों के साथ जुड़ना, उसे उपयोग कहा है (2) और हाथ आदि की क्रिया का मन-वचन-काय के निमित्त से आत्मप्रदेशों का चलन, वह योग है। (3) घड़ा बना, यह परद्रव्य की क्रिया है। अज्ञानी का योग और उपयोग परद्रव्य की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है; है नहीं।

चार्ट में देखो

त्रिकाली उपादान	कुम्हार का चारित्र गुण	आहारवर्गणा के स्कन्ध	मिट्टी
	1 2 3	1 2 3	1 2 3
	4 5 6 7 8	4 5 6 7 8	4 5 6 7 8
अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण	9	9	9
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण	10	10	10
(कार्य) उपादेय	कुम्हार का राग	हाथ आदि क्रिया	घड़ा बना

यह तीनों स्वतन्त्ररूप से परिणमन करते हुए अपने-अपने क्रम काल में 10 नम्बर पर आये। अज्ञानी कुम्हार को इसका पता नहीं है; इसलिए कुम्हार का योग और उपयोग घड़े की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है।

प्रश्न 8 - अज्ञानी कुम्हार, घड़े की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है, तो क्या ज्ञानी कुम्हार हो, वह स्वतन्त्र पर्यायों का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता नहीं है?

उत्तर – वास्तव में ज्ञानी तो अस्थिरता के राग का, हाथ आदि क्रिया का, और घड़ा बना, उन सब का मात्र व्यवहार से ज्ञाता है। क्योंकि ज्ञानी जानता है कि सब द्रव्य अपने-अपने स्वरूप से परिणमते हैं; कोई किसी का परिणमाया परिणमता नाहीं।

चार्ट को ध्यान से देखो

त्रिकाली उपादान	कुम्हार का ज्ञानगुण	कुम्हार का चारित्रगुण	हाथ आदि आहारवर्गणा के स्कन्ध	मिट्टी
	1	1	1	1
	2	2	2	2
	3	3	3	3
	4	4	4	4
	5	5	5	5
	6	6	6	6
	7	7	7	7
	8	8	8	8
अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती पर्याय क्षणिक-उपादानकारण	9	9	9	9
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण	10	10	10	10
(कार्य) उपादेय	ज्ञान हुआ	अस्थिरता का राग	हाथ आदि की क्रिया	घड़ा बना

प्रश्न 9 - क्या ज्ञानी कुम्हार का घड़ा बनने में निमित्त -नैमित्तिकपना नहीं है ?

उत्तर - ज्ञातापना है; ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध भी व्यवहार से है, क्योंकि ज्ञानी कुम्हार तो योग, हाथ आदि क्रिया का; अस्थिरता के राग का; घड़ा बनने की क्रिया का, निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता नहीं है; मात्र ज्ञाता है।

प्रश्न 10 - क्या ज्ञानी कुम्हार, ज्ञायक, और अस्थिरता का राग; हाथ आदि की क्रिया; घड़ा बना, ये सब ज्ञेय हैं ?

उत्तर - हाँ, यह सब व्यवहार से ज्ञान के ज्ञेय हैं। वास्तव में ज्ञानी ने अपनी ज्ञानपर्याय का ज्ञान किया है।

प्रश्न 11 - आत्मा, ज्ञायक और ज्ञान की पर्याय, ज्ञेय - यह तो ठीक है न ?

उत्तर - यह भी व्यवहारकथन है; बस ! ज्ञायक तो ज्ञायक ही है।

प्रश्न 12 - श्री समयसार की 100 वीं गाथा के चार बोलों से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - (1) द्रव्यदृष्टि से तो कोई द्रव्य, अन्य किसी द्रव्य का कर्ता नहीं है। (2) परन्तु पर्यायदृष्टि से किसी द्रव्य की पर्याय, किसी समय, किसी अन्य द्रव्य की पर्याय को निमित्त होती है; इसलिए इस अपेक्षा से एक द्रव्य के परिणाम, अन्य के परिणाम के निमित्तकर्ता कहलाते हैं। (3) परमार्थत: प्रत्येक द्रव्य अपने ही परिणामों का कर्ता है; अन्य के परिणामों का अन्य द्रव्य, कर्ता नहीं है।

प्रश्न 13- इस 100 वीं गाथा के चार बोल समझने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर – (1) पर में कर्ता–भोक्ताबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति होना; (2) पंच परावर्तन का अभाव होना; (3) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (4) पंचम परिणामिकभाव का महत्त्व आना; और (5) पञ्च परमेष्ठियों में गिनती होना – ये लाभ हैं।

प्रश्न 14 – इस 100 वीं गाथा में योग और उपयोग किसे कहा है ?

उत्तर – (1) योग, अर्थात् मन–वचन–काय के निमित्त से आत्मप्रदेशों का चलन; (2) उपयोग, अर्थात् ज्ञान का कषायों के साथ उपयुक्त होना–जुड़ना।

प्रश्न 31 – योग और उपयोग को तो घटादिक व द्रव्यकर्म का निमित्तकर्ता कहा जाता है, किन्तु आत्मा को उनका कर्ता क्यों नहीं कहा जाता है ?

उत्तर – (1) त्रिकाली आत्मा, उसका कर्ता नहीं है। (2) जिसको स्वभाव की दृष्टि हुई है, वह ज्ञानी आत्मा, योग–उपयोग और घटादिक, द्रव्यकर्म का निमित्त–नैमित्तिकभाव से भी कर्ता नहीं है; मात्र ज्ञाता है; इसलिए आत्मा को उनका कर्ता नहीं कहा जाता है। (3) आत्मा को संसारदशा में अज्ञान से मात्र योग–उपयोग का कर्ता कहा जा सकता है, परन्तु किसी भी आत्मा को घटादिक और द्रव्यकर्म का कर्ता तो किसी भी अपेक्षा से नहीं कहा जा सकता है।

जय महावीर — जय महावीर

8

मोक्षमार्ग

इस भव तरु का मूल इक जानहु मिथ्या भाव।
ताको करि निर्मूल अब करिए मोक्ष उपाव॥1॥
शिव उपाय करते प्रथम कारण मंगलरूप।
विघन विनाशक सुखकरन नमौं शुद्ध शिवभूप॥2॥

अर्थात्, इस भवरूपी वृक्ष का मूल, एक मिथ्यात्वभाव है, उसको निर्मूल करके मोक्ष का उपाय करना चाहिए॥1॥

शिव उपाय, अर्थात् मोक्ष का उपाय करने से पहिले उसका कारण और मङ्गलरूप शुद्ध शिवभूप को नमस्कार करना चाहिए, क्योंकि वह विघ्न विनाशक और सुख का करनेवाला है॥2॥

प्रश्न 1- मोक्ष क्या है?

उत्तर - 'मोक्ष कहे निज शुद्धता', अर्थात् परिपूर्ण शुद्धि का प्रकट होना, वह मोक्ष है और मोक्ष, आत्मा की परिपूर्ण शुद्धदशा है।

प्रश्न 2- मोक्ष कितने प्रकार का है?

उत्तर - पाँच प्रकार का है। (1) शक्तिरूप मोक्ष, (2) दृष्टिरूप मोक्ष (चौथा गुणस्थान), (3) मोहमुक्त मोक्ष (12 वाँ गुणस्थान), (4) जीवनमुक्त मोक्ष (13, 14 वाँ गुणस्थान), (5) देहमुक्त मोक्ष (सिद्धदशा)।

प्रश्न 3- पाँच प्रकार के मोक्ष के विषय में क्या ध्यान रखना चाहिए?

उत्तर – (1) शक्तिरूप मोक्ष के आश्रय बिना, दृष्टिरूप मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। (2) दृष्टिरूप मोक्ष के प्राप्त किये बिना, मोहमुक्त मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। (3) मोहमुक्त मोक्ष प्राप्त किये बिना, जीवनमुक्त मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती। (4) जीवनमुक्त मोक्ष प्राप्त किये बिना, देहमुक्त मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। इसलिए पात्र जीवों को एकमात्र शक्तिरूप मोक्ष का आश्रय करना चाहिए, क्योंकि इसी के आश्रय से ही दृष्टिरूप मोक्ष आदि की प्राप्ति होती है। पर के, विकार के, अपूर्ण-पूर्ण शुद्धपर्यायों के आश्रय से मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 4- मोक्ष कैसे होता है ?

उत्तर – संवर, निर्जरापूर्वक ही मोक्ष होता है।

प्रश्न 5- संवर, निर्जरा और मोक्ष, अस्तिसूचक नाम हैं या नास्तिसूचक नाम हैं ?

उत्तर – संवर, निर्जरा और मोक्ष, नास्तिसूचक नाम हैं।

प्रश्न 6- भावसंवर की नास्ति-अस्ति सूचक परिभाषा क्या है ?

उत्तर – शुभाशुभभावों का उत्पन्न नहीं होना, नास्ति से भावसंवर और शुद्धि का प्रगट होना, अस्ति से भावसंवर है।

प्रश्न 7- भावनिर्जरा की नास्ति-अस्ति सूचक परिभाषा क्या है ?

उत्तर – अशुद्धि की हानि, नास्ति से भावनिर्जरा है और शुद्धि की वृद्धि, अस्ति से भावनिर्जरा है।

प्रश्न 8- भावमोक्ष की नास्ति-अस्ति सूचक परिभाषा क्या है ?

उत्तर – सम्पूर्ण अशुद्धि का अभाव, नास्ति से भावमोक्ष है और सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना, अस्ति से भावमोक्ष है।

प्रश्न 9– भावसंवर, भावनिर्जरा किसके अभावपूर्वक प्रगट होती है ?

उत्तर – संवर–निर्जरा, आस्रव और बन्ध के अभावपूर्वक प्रगट होती है।

प्रश्न 10– आस्रव किसे कहते हैं ?

उत्तर – जीव में जो विकारी शुभाशुभभावरूप अरूपी अवस्था होती है, वह आस्रव है।

प्रश्न 11– आस्रव के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं – द्रव्यआस्रव और भावआस्रव।

प्रश्न 12– आस्रव की दूसरी परिभाषा क्या हैं ?

उत्तर – (1) नया–नया आना, (2) मर्यादापूर्वक आना।

प्रश्न 13– भावआस्रव में आस्रव की यह दोनों परिभाषाएँ किस प्रकार घटित होती हैं ?

उत्तर – (1) शुभाशुभभाव नये–नये आते हैं; इसलिए 'नया–नया आना' यह भावआस्रव है। (2) जीव इतना विकार करे कि ज्ञान–दर्शन–वीर्य का सर्वथा अभाव हो जावे – ऐसा नहीं हो सकता; इसलिए आस्रवभाव, मर्यादा में ही आता है; अत: 'मर्यादापूर्वक आना', उसे भावआस्रव कहते हैं।

प्रश्न 14– द्रव्यआस्रव में आस्रव की यह दोनों परिभाषाएँ किस प्रकार घटित होती हैं ?

उत्तर – (1) कर्म नये–नये आते हैं; इसलिए 'नया–नया आना' यह द्रव्यआस्रव है। (2) जीव, विकार करे और सर्व

कार्माणवर्गणा, द्रव्यकर्मरूप परिणमन कर जावे – ऐसा नहीं होता है, क्योंकि कार्माणवर्गणा भी मर्यादापूर्वक ही आती हैं; इसलिए 'मर्यादापूर्वक आना' यह द्रव्यआस्त्रव है।

प्रश्न 15– भावबन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – आत्मा का अज्ञान, राग–द्वेष, पुण्य–पापरूप विभाव में रुक जाना, वह भावबन्ध है।

प्रश्न 16– भावआस्त्रव, भावबन्ध का अभाव और भाव–संवर–भावनिर्जरा की प्राप्ति किसमें होती है ?

उत्तर – जीव में होती है; इसलिए जीवतत्त्व की जानकारी भी आवश्यक है।

प्रश्न 17– जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर – जीव, अर्थात् आत्मा। वह सदैव ज्ञातास्वरूप, पर से भिन्न और त्रिकाली / स्थायी है।

प्रश्न 18– भावआस्त्रव, भावबन्ध किसके निमित्त से होते हैं ?

उत्तर – अजीव के निमित्त से होते हैं; अत: अजीव की जानकारी भी आवश्यक है।

प्रश्न 19– अजीव किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिनमें चेतना–ज्ञातृत्व नहीं, वे अजीव हैं – ऐसे द्रव्य पाँच हैं। उनमें धर्म, अधर्म, आकाश और काल, चार अरूपी हैं और पुद्गल, रूपी हैं।

प्रश्न 20– सात तत्त्वों में द्रव्य कौन हैं और पर्याय कौन हैं ?

उत्तर – सात तत्त्वों में प्रथम दो तत्त्व 'जीव' और 'अजीव', द्रव्य हैं और पाँच तत्त्व, जीव और अजीव की संयोगी और वियोगी

पर्यायें हैं। आस्रव और बन्ध, जीव-अजीव की संयोगी पर्यायें तथा संवर, निर्जरा और मोक्ष, ये जीव-अजीव की वियोगी पर्यायें हैं।

प्रश्न 21- भावसंवर और भावनिर्जरा में कितने समय का अन्तर है ?

उत्तर - दोनों का समय एक ही है, परन्तु शुद्धि प्रगट हुई, इस अपेक्षा भावसंवर है और शुद्धि की वृद्धि हुई, इस अपेक्षा भावनिर्जरा है।

प्रश्न 22- भावसंवर और भावनिर्जरा होने पर, भावमोक्ष होने में कितना समय लगेगा ?

उत्तर - असंख्यात समय ही लगेंगे, संख्यात् या अनन्त समय नहीं लगेंगे।

प्रश्न 23- जिस समय संवर-निर्जरा प्रगट हो, उसी समय मोक्ष प्रगट हो तो हम संवर-निर्जरा होना माने - कोई ऐसा कहे, तो क्या नुकसान है ?

उत्तर - (1) चौथा गुणस्थान और सिद्धदशा ही रहेगी और पाँचवें से चौदहवें गुणस्थान तक के अभाव का प्रसंग उपस्थित होवेगा। (2) श्रावकदशा, मुनिदशा, श्रेणी एवं अरहन्तदशा का अभाव हो जावेगा। (3) गुणस्थानों में क्रम के अभाव का प्रसंग उपस्थित होवेगा। (4) कोई उपदेशक नहीं रहेगा, यद्यपि सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में सम्यग्ज्ञानी का ही उपदेश निमित्त होता है; अतः सम्यग्दर्शन का भी अभाव हो जावेगा।

प्रश्न 24- संवरपूर्वक निर्जरा किसको होती है और किसको नहीं होती है ?

उत्तर - (1) सम्यग्दर्शन होने पर ही संवरपूर्वक निर्जरा ज्ञानियों को ही होती है; मिथ्यादृष्टियों को नहीं। (2) अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरण में अकेली निर्जरा होती है, संवरपूर्वक नहीं।

प्रश्न 25- संवर-निर्जरापूर्वक, मोक्ष की प्राप्ति के लिये क्या करें और निगोद की प्राप्ति क्यों होती है ?

उत्तर - अपने सामान्य द्रव्यस्वभाव को देखने से, अपने विशेष में संवर-निर्जरा की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष होता है और मात्र विशेष को देखने से, आस्रव-बन्ध की प्राप्ति होकर निगोद की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 26- स्वभाव के आश्रय से पुरुषार्थ करने का क्या फल है ?

उत्तर - (1) पञ्च परावर्तन का अभाव हो जाता है; (2) मिथ्यात्व-अविरति आदि संसार के पाँच कारणों का अभाव हो जाता है; (3) पञ्च परमेष्ठियों में उसकी गिनती होने लगती है; (4) पञ्चम गति मोक्ष की प्राप्ति होती है; (5) पञ्चम पारिणामिक -भाव का महत्व आ जाता है; (6) आठ कर्मों का अभाव हो जाता है; (7) 14 गुणस्थान, 14 मार्गणा और 14 जीवसमास का अभाव होकर, सिद्धदशा की प्राप्ति होना स्वभाव के आश्रय से पुरुषार्थ करने का फल है।

प्रश्न 27- अजीव की संयोगी-वियोगी पर्यायों की परिभाषा क्या हैं ?

उत्तर - द्रव्यआस्त्रव=नवीन कर्मों का आना। द्रव्यबन्ध=नवीन कर्मों का स्वयं स्वत: बंधना। द्रव्यसंवर=कर्मों का आना, स्वयं स्वत: रुक जाना। द्रव्यनिर्जरा=जड़कर्म का अंशत: खिर जाना। द्रव्यमोक्ष = द्रव्यकर्मों का आत्म प्रदेशों से अत्यन्त अभाव होना।

प्रश्न 28- जीव और अजीव की पर्यायों में कैसा-कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – निमित्त–नैमित्तिकसम्बन्ध है। निमित्त–नैमित्तिकसम्बन्ध परस्पर परतन्त्रता का सूचक नहीं है, परन्तु नैमित्तिक के साथ कौन निमित्तरूप पदार्थ है, उसका ज्ञान कराता है क्योंकि जहाँ उपादान होता है, वहाँ निमित्त नियम से होता ही है – ऐसा वस्तु स्वभाव है। बनारसीदासजी ने कहा है – 'उपादान निजगुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय; भेदज्ञान प्रमाण विधि, बिरला बूझे कोय॥'

प्रश्न 29– जीव का प्रयोजन क्या है ?

उत्तर – जिसके द्वारा सुख उत्पन्न हो और दु:ख का नाश हो, उस कार्य का नाम प्रयोजन है। इस जीव का प्रयोजन तो एक यही है कि दु:ख ना हो और सुख हो। किसी जीव के अन्य कुछ भी प्रयोजन नहीं है।

प्रश्न 30– दु:ख का नाश और सुख की उत्पत्ति किसके द्वारा हो सकती है ?

उत्तर – सात तत्त्वों के सच्चे श्रद्धान से ही दु:ख का नाश और सुख की प्राप्ति हो सकती है।

प्रश्न 31– सात तत्त्वों के सच्चे श्रद्धान से ही दु:ख का अभाव सुख की प्राप्ति कैसे हो सकती है ?

उत्तर – प्रथम तो दु:ख दूर करने में अपना और पर का ज्ञान अवश्य होना चाहिए। (अ) यदि अपना और पर का ज्ञान नहीं हो तो अपने को पहिचाने बिना, अपना दु:ख कैसे दूर करे। (आ) अपने को और पर को एक जानकर अपना दु:ख दुर करने के अर्थ पर का उपचार करे तो अपना दु:ख कैसे दूर हो ? (इ) आप (स्व है) और पर भिन्न है, परन्तु यह पर में अहंकार–ममकार करे तो इससे दु:ख दूर नहीं होता है तथा अपना और पर का ज्ञान, जीव–अजीव का ज्ञान होने पर ही होता है, क्योंकि आप स्वयं जीव है, शरीरादिक अजीव हैं।

यदि लक्षणादि द्वारा जीव-अजीव की पहचान हो तो अपनी और पर की भिन्नता भासित हो; इसलिए जीव-अजीव को जानना। इस प्रकार जीव-अजीव का यथार्थ ज्ञान करने पर ही, स्व-पर का श्रद्धान होता है और पर से भिन्न अपने को पहचानकर निज आत्मा के हित के अर्थ, मोक्ष का उपाय करता है; उससे सुख उत्पन्न होता है। जीव -अजीव का यथार्थ ज्ञान न करने पर, स्व-पर का श्रद्धान नहीं होता। अपने से भिन्न परद्रव्य को न जानने से, पर से उदासीन होकर मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति नहीं होती; अत: उससे दु:ख उत्पन्न होता है। इसलिए आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्षसहित जीव-अजीव तत्त्व प्रयोजनभूत समझने चाहिए। आस्रव और बन्ध, दु:ख के कारण हैं तथा संवर, निर्जरा और मोक्ष, सुख के कारण हैं; इसलिए जीवादि सात तत्त्वों का श्रद्धान करना आवश्यक है। इन सात तत्त्वों की सच्ची श्रद्धा के बिना, दु:ख का अभाव और सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

प्रश्न 32- जीव-अजीवतत्त्व का सच्चा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर - अपने को आपरूप जानकर, पर का अंश भी अपने में न मिलाना और अपना अंश भी पर में न मिलाना, यह जीव-अजीव तत्त्व का सच्चा श्रद्धान है।

प्रश्न 33- आस्रवतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान क्या है ?

उत्तर - परमार्थत: पुण्य-पाप (शुभाशुभभाव) आत्मा को अहितकर हैं। आत्मा की क्षणिक अशुद्ध अवस्था हैं। द्रव्य पुण्य -पाप, आत्मा का हित-अहित नहीं कर सकते हैं। मिथ्यात्व राग -द्वेषादि भाव आत्मा को प्रगटरूप से दु:ख के देनेवाले हैं - यह आस्रवतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान है।

प्रश्न 34- बन्धतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान क्या है ?

उत्तर - जैसे - सोने की बेड़ी, वैसे ही लोहे की बेड़ी है क्योंकि

दोनों बन्धन कारक हैं; इसी प्रकार पुण्य-पाप दोनों जीव को बन्धन कारक हैं - यह बन्धतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान है।

प्रश्न 35- संवरतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान क्या है?

उत्तर - निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही जीव के लिए हितकारी है - यह संवरतत्त्व का सच्चा श्रद्धान है।

प्रश्न 36- निर्जरातत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान क्या है?

उत्तर - आत्मा में एकाग्र होने पर शुभाशुभ इच्छाएँ उत्पन्न ना होने से, निज आत्मा की शुद्धि का बढ़ना सो तप है। उस तप से निर्जरा होती है। ऐसा तप, सुखदायक है - यह निर्जरातत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान है।

प्रश्न 37- मोक्षतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान क्या है?

उत्तर - मोक्षदशा में सम्पूर्ण आकुलता का अभाव है। पूर्ण स्वाधीन निराकुलतारूप सुख है - यह मोक्षतत्त्व का ज्यों का त्यों श्रद्धान है।

प्रश्न 38- जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है?

उत्तर - बाह्य अनुकूल संयोगों से मैं सुखी और प्रतिकूल संयोगों से मैं दु:खी; निर्धन होने से मैं दु:खी, धन होने से मैं सुखी इत्यादि मिथ्या अभिप्राय, यह जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 39- अजीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है?

उत्तर - शरीर का संयोग होने से मैं उत्पन्न हुआ और शरीर का वियोग होने से मैं मर जाऊँगा। धन, शरीरादि जड़पदार्थों में परिवर्तन होने से अपने में इष्ट-अनिष्ट परिवर्तन मानना, अर्थात् जो अजीव की अवस्थाएँ हैं, उन्हें अपनी मानना, यह अजीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 40- आस्रवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उत्तर - मिथ्यात्व रागादि प्रगट दु:ख देनेवाले हैं तथापि उनका सेवन करने में सुख मानना - यह आस्रवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 41- बन्धतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उत्तर - शुभ को लाभदायक तथा अशुभ को हानिकारक मानना - यह बन्धतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 42- संवरतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान तथा सम्यग्ज्ञानसहित वैराग्य को कष्टदायक मानना - यह संवरतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 43- निर्जरातत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उत्तर - शुभाशुभ इच्छाओं को न रोककर, इन्द्रिय विषयों की इच्छा करना - यह निर्जरातत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 44- मोक्षतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उत्तर - सम्यग्दर्शनपूर्वक ही पूर्ण निराकुलता प्रगट होती है और वही सच्चा सुख है, ऐसा न मानकर, बाह्य सुविधाओं में सुख मानना - यह मोक्षतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न 45- मोक्ष प्राप्त करने के लिए किस पर अधिकार मानना चाहिए ?

उत्तर - एकमात्र 'सकल निरावरण-अखण्ड-एक स्वरूप प्रत्यक्ष प्रतिभासमय, अविनश्वर-शुद्ध पारिणामिकपरमभाव लक्षण, निज परमात्मस्वरूप पर अधिकार मानने से ही तुरन्त संवर, निर्जरा, और क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।'

प्रश्न 46- अनादिकाल से अज्ञानीजीव ने किस-किस पर

अपना अधिकार माना, जिससे उसे संवर-निर्जरा-मोक्ष की प्राप्ति नहीं हुई है ?

उत्तर - (1) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों पर अपना अधिकार माना; (2) आँख, नाक, कानरूप औदारिकशरीर पर अपना अधिकार माना; (3) तैजस-कार्माणशरीरों पर अपना अधिकार माना; (4) भाषा और मन पर अपना अधिकार माना; (5) शुभाशुभ विकारीभावों में अपना अधिकार माना; (6) अपूर्ण-पूर्ण शुद्धपर्यायों पर अपना अधिकार माना; (7) भेदनय के पक्ष पर अपना अधिकार माना; (8) अभेदनय के पक्ष पर अपना अधिकार माना; (9) भेदाभेदनय के पक्ष पर अपना अधिकार माना; इसलिए संवर निर्जरा और मोक्ष की प्राप्ति नहीं हुई।

प्रश्न 47- नौ प्रकार के पक्षों पर अधिकार मानने से क्या होता है ?

उत्तर - अनादिकाल से एक-एक समय करके चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद की सैर करता है और प्रत्येक समय महादु:खी होता है।

प्रश्न 48- आत्मा का अधिकार किसमें है और किसमें नहीं है ?

उत्तर - आत्मा का अधिकार अपने अनन्त गुणों के पिण्ड ज्ञायकभाव में ही है और नौ प्रकार के पक्षों पर, आत्मा को अधिकार नहीं है।

प्रश्न 49- शरीर में बीमारी आ जावे, लड़का मर जावे, धन नष्ट हो जावे, तो हम क्या करें, जिससे शान्ति की प्राप्ति हो ?

उत्तर - जो सिद्धभगवान करते हैं, वही हम करें तो शान्ति की प्राप्ति हो। जैसे - हॉस्पिटल में 50 मरीज मर जावें, तो क्या

डॉक्टर रोवेगा? बस जानेगा और देखेगा, क्योंकि इन पर उसका अधिकार नहीं है; उसी प्रकार शरीर में बीमारी आवे, स्त्री मर जावे, धन नष्ट हो जावे, तो जानना चाहिए कि शरीरादि पुद्गलों की इन अवस्थाओं पर चैतन्यस्वरूप आत्मा का अधिकार नहीं है; तुरन्त शान्ति आ जावेगी। शरीरादि पुद्गलों की अवस्थाओं पर आत्मा का अधिकार मानेगा तो दु:खी होकर चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद में चला जावेगा।

प्रश्न 50- पूर्ण-अपूर्ण शुद्धपर्याय पर भी अपना अधिकार माने तो चारों गतियों में घूमकर निगोद में चला जावेगा-ऐसा आपने कहा है। जबकि ज्ञानी तो शुद्धपर्याय पर ही अपना अधिकार मानते हैं?

उत्तर - चौथे गुणस्थान से लेकर सब ज्ञानी, एकमात्र अपने त्रिकाली भगवान पर ही अधिकार मानते हैं। अपूर्ण-पूर्ण शुद्धपर्याय पर भी ज्ञानी अपना अधिकार नहीं मानते हैं। पर और विकारीभावों की तो बात ही नहीं है।

प्रश्न 51- पूर्ण-अपूर्ण शुद्धपर्याय के आश्रय से मेरा भला हो, ऐसा माननेवाला कौन है?

उत्तर - मिथ्यादृष्टि है और वह चारों गतियों में घूमकर निगोद का पात्र है।

प्रश्न 52- ज्ञानियों को औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव जो धर्मरूप हैं, क्या उनकी भावना नहीं होती है?

उत्तर - ज्ञानियों को एकमात्र परमपारिणामिकभाव की ही भावना होती है। उसके फलस्वरूप औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिकभाव पर्याय में उत्पन्न होते हैं परन्तु उनकी भावना नहीं होती है।

प्रश्न 53- ज्ञानियों की पर्याय में तो औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव होते हैं और औदयिकभाव भी होते हैं तो क्या ज्ञानियों को उन सब भावों की भावना नहीं है ?

उत्तर - अरे भाई, पर्याय में औपशमिकादिक भावों का होना अलग बात है और उनकी भावना करना अलग बात है क्योंकि ज्ञानी, श्रद्धा में एकमात्र अपने परमपरिणामिक ज्ञायकभाव को ही स्वीकार करते हैं; निमित्त भंगभेद, अपूर्ण-पूर्ण शुद्धपर्याय को स्वीकार नहीं करते हैं। (2) ज्ञानी अपने सम्यग्ज्ञान में परमपारिणामिकभावरूप निज जीव को आश्रय करने योग्य जानता है। औपशमिकभाव, धर्म का क्षायोपशमिकभाव और क्षायिकभाव, अर्थात् संवर, निर्जरा और मोक्ष को प्रगट करने योग्य जानता है। औदयिकभाव, अर्थात् आस्रव -बन्ध को हेयरूप जानता है। इस प्रकार ज्ञानियों को तो मात्र निज ज्ञायक की ही भावना वर्तती हैं, और की नहीं।

प्रश्न 54- मोक्षमार्ग शब्द में 'मार्ग' का क्या अर्थ है ?

उत्तर - मार्ग, अर्थात् रास्ता।

प्रश्न 55- अज्ञानी, मोक्षमार्ग, अर्थात् मोक्ष का रास्ता कहाँ खोजता है ?

उत्तर - जैसे, हिरन की नाभि में कस्तूरी है परन्तु वह बाहर खोजता है; उसी प्रकार अज्ञानी, शरीर की क्रियाओं में व शुभभावों में मोक्षमार्ग खोजता है।

प्रश्न 56- बाहरी क्रियाओं में और शुभभावों में जो मोक्षमार्ग मानता है, उसे जिनवाणी में क्या-क्या कहा है ?

उत्तर - (1) श्री समयसार में नपुंसक, व्यभिचारी, मिथ्यादृष्टि, असंयमी, पापी, अन्य मतवाला तथा आत्मावलोकन में हरामजादीपना आदि कहा है। (2) पञ्चास्तिकाय, गाथा 168 में मिथ्यादृष्टि का

शुभराग सर्व अनर्थ सन्तति का मूल कहा है और रत्नकरण्डश्रावकाचार, गाथा 33 में 'संसार' परिभ्रमण ही बताया है।

प्रश्न 57- मोक्षमार्ग, अर्थात् मोक्ष का रास्ता क्या है ?

उत्तर - निज परमपारिणामिक ज्ञायक भगवान का आश्रय लेकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करना ही मोक्ष का रास्ता है।

प्रश्न 58- सम्यग्दर्शनादि मोक्षमार्ग है, इसमें अनेकान्त क्या है ?

उत्तर - सम्यग्दर्शनादि ही मोक्षमार्ग है; व्यवहाररत्नत्रयादि मोक्षमार्ग नहीं है - यह अनेकान्त है।

प्रश्न 59- व्यवहाररत्नत्रयादि मोक्षमार्ग नहीं है, वह किस जीव की बात है ?

उत्तर - जिस जीव को सम्यग्दर्शनादि प्रगट हुआ है, उस जीव के भूमिकानसार राग को उपचार से मोक्षमार्ग कहते हैं; वास्तव में वह राग, मोक्षमार्ग नहीं है तथा जो शुद्धि प्रगटी है, वह ही मोक्षमार्ग है। मिथ्यादृष्टि के शुभभावों को तो व्यवहार भी नहीं कहा जाता है, क्योंकि अनुपचार हुए बिना, उपचार का आरोप नहीं आता है।

प्रश्न 60- द्रव्यपुण्य-पाप और शुभाशुभभावों के सम्बन्ध में क्या-क्या जानना चाहिए ?

उत्तर - (1) परमार्थतः पुण्य-पाप (शुभाशुभभाव) आत्मा को अहितकर ही हैं और यह आत्मा की क्षणिक अशुद्ध अवस्था है। (2) सम्यग्दृष्टि के शुभभावों से संवर निर्जरा होती है, यह मान्यता खोटी है, क्योंकि शुभभाव चाहे ज्ञानी के हो या मिथ्यादृष्टि के हो, दोनों ही बंध के कारण हैं *[श्री समयसार कलश टीका, कलश 110]* (3) पुण्य छोड़कर, पापरूप प्रवर्तन ना करे और पुण्य को मोक्षमार्ग

ना माने, यह पुण्य-पाप को जानने का लाभ है। *[मोक्षमार्गप्रकाशक]*
(4) द्रव्यपुण्य-पाप, आत्मा का हित अहित नहीं करते हैं।

प्रश्न 61- पूर्ण विकार किसे होता है ?

उत्तर - किसी को भी नहीं; क्योंकि यदि पूर्ण विकार हो जावे तो जीव के नाश का प्रसंग उपस्थित हो जावेगा, सो ऐसा होता ही नहीं।

प्रश्न 62- भावास्त्रव अमर्यादित हो तो क्या हो ?

उत्तर - जो मर्यादित हो, उसका अभाव हो सकता है - ऐसा जानकर पात्र जीव, निज स्वभाव का आश्रय लेकर भावास्त्रव का अभाव करके, धर्म की शुरुआत करके क्रम से परमदशा को प्राप्त हो जाता है।

प्रश्न 63- द्रव्यास्त्रव मर्यादित है या अमर्यादित ?

उत्तर - मर्यादित है, क्योंकि यदि अमर्यादित हो तो सम्पूर्ण कार्माणवर्गणा को द्रव्यकर्मरूप परिणमित होने का प्रसंग उपस्थित होवेगा, सो ऐसा होता नहीं।

प्रश्न 64- पञ्चाध्यायीकार ने आस्त्रव को क्या कहा है ?

उत्तर - 'आगन्तुकभाव' कहा है।

प्रश्न 65- संसार का बीज क्या है ?

उत्तर - पर वस्तुओं में और शुभाशुभभावों में एकत्वबुद्धि ही संसार का बीज है। *[पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 14]*

प्रश्न 66- पञ्चाध्यायी में संसार का बीज, अर्थात मिथ्यात्व किसे किसे बताया है ?

उत्तर - (1) आत्मा को मात्र कर्मचेतना (राग-द्वेष, मोहरूप) और कर्मफलचेतना (सुख-दुखरूप) ही अनुभव करना, मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 972 से 974]*

(2) आत्मा को नो तत्त्वरूप (पर्याय के भेदरूप) अनुभव करना और सामान्य (अन्त:तत्त्वरूप) अनुभव नहीं करना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 983 से 996]*

(3)[1] आत्मा का, [2] कर्म का, [3] कर्ता-भोक्तापने का, [4] पाप का, [5] पुण्य-पाप के कारण का, [6] पुण्य-पाप के फल का, [7] सामान्य-विशेषस्वरूप का, [8] राग से भिन्न अपने स्वरूप का श्रद्धान-ज्ञान न होना, वह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1233]*

(4) सात भययुक्त रहना, वह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1264]*

(5) इष्ट का नाश न हो जाए, अनिष्ट की प्राप्ति न हो जावे, धन नाश होकर दरिद्रता न आ जावे, यह इस लोक का भय है। यह मिथ्यादर्शन है। विश्व से भिन्न होने पर भी, अपने को विश्वरूप समझना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1274 से 1278]*

(6) मेरा जन्म दुर्गति में न हो जाए, ऐसा परलोक का भय, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1292 से 1294]*

(7) रोग से डरते रहना या रोग आने पर घबराना या उससे (रोग से) अपनी हानि मानना, यह वेदनाभय मिथ्यादर्शन से होता है। *[गाथा 1292 से 1294 तक]*

(8) शरीर के नाश से अपना नाश मानना, यह अत्राणभय (वेदनाभय) मिथ्यादृष्टियों को होता है। *[गाथा 1299 से 1301]*

(9) शरीर की पर्याय के जन्म से, अपना जन्म और शरीर की पर्याय के नाश से, अपना नाश मानना, यह अगुप्तिभय मिथ्यादर्शन से होता है। *[गाथा 1604 से 1605]*

(10) दस प्राणों के नाश से डरना या उनके नाश से अपना नाश मानना, यह मरणभय मिथ्यादर्शन से होता है। *[1307 से 1308]*

(11) बिजली गिरने से या और किसी कारण से मेरी बुरी अवस्था ना हो जाए, ऐसा अकस्मात्भय मिथ्यादर्शन से होता है।

[गाथा 1311 से 1313]

(12) लोकमूढ़ता, देवमूढ़ता, गुरुमूढ़ता और धर्ममूढ़ता, यह मिथ्यादर्शन के चिह्न हैं। *[गाथा 1361 से 1369]*

(13) नौ तत्त्वों में अश्रद्धा, अर्थात् विपरीत श्रद्धा का होना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1792 से 1809]*

(14) अन्य मतियों के बताये हुए पदार्थों में श्रद्धा का होना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1997]*

(15) आत्मस्वरूप की अनुपलब्धि होना, यह मिथ्यादर्शन है।

(16) सूक्ष्म अन्तरित और दूरवर्ती पदार्थों का विश्वास ना होना, यह मिथ्यादर्शन है। जैसे - (अ) जो पदार्थ केवलीगम्य हैं, वे छदमस्थ को आगम आधार से जानने योग्य हैं। (आ) धर्म-अधर्म -आकाश-काल-परमाणु आदि को सूक्ष्म पदार्थ कहते हैं क्योंकि ये इन्द्रियों से ग्रहण नहीं होते हैं। (इ) राम-रावण आदि को, अर्थात् जिन पदार्थों में भूतकाल के बहुत समय का अन्तर हो या आगे बहुत समय बाद होनेवाला हो। जैसे - राजा श्रेणिक, प्रथम तीर्थङ्कर होंगे तथा दूरवर्ती पदार्थों में मेरुपर्वत, स्वर्ग, नदी, द्वीप, समुद्र इत्यादिक जिनका छद्मस्थ वहाँ पहुँचकर दर्शन नहीं कर सकता है, उनका विश्वास नहीं करना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1810]*

(17) मोक्ष के अस्तित्व का और उसमें पाये जानेवाले अतीन्द्रिय सुख और अतीन्द्रिय ज्ञान के प्रति रुचि न होना, यह मिथ्यादर्शन है।

[गाथा 1812]

(18) जाति अपेक्षा छह द्रव्य का स्वत:सिद्ध अनादिअनन्त स्वतन्त्र परिणमन न मानना, यह मिथ्यादर्शन है। *[1813]*

(19) प्रत्येक द्रव्य को नित्य-अनित्य, एक-अनेक, अस्ति -नास्ति, तत्-अतत् आदि अनेकान्तात्मकस्वरूप न मानना, किन्तु एकान्तरूप मानना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1814]*

(20) नोकर्म (शरीर-मन-वाणी), भावकर्म (क्रोधादिशुभाशुभ -भाव) और धन-धान्यादि जो अनात्मीय वस्तुएँ हैं, उनको आत्मीय मानना, यह मिथ्यादर्शन है।

(21) झूठे देव-गुरु-धर्म को सच्चेवत् समझना, अर्थात् सच्चे देव-गुरु-धर्म की श्रद्धा न होना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1816]*

(22) धन, धान्य, सुता आदि की प्राप्ति के लिए देवी आदि को पूजना या अनेक कुकर्म करना, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 1817]*

प्रश्न 67- मिथ्यात्व के उक्त 22 लक्षण क्या और किसी शास्त्र में भी है ?

उत्तर - भाई! चारों अनुयोगों के सब शास्त्रों में यही लक्षण बताये हैं।

प्रश्न 68- श्री प्रवचनसार में मिथ्यात्व का क्या लक्षण बताया है ?

उत्तर - (1) (आ) पदार्थों का अयथाग्रहण, (आ) तिर्यञ्च -मनुष्यों के प्रति करुणाभाव, (इ) विषयों की संगति, अर्थात् इष्ट विषयों में प्रीति और अनिष्ट विषयों में अप्रीति, यह सब मोह के चिह्न (लक्षण) हैं। *[गाथा 85]*

(2) (अ) जीव के द्रव्य-गुण-पर्याय सम्बन्धी मूढ़भाव, वह मोहभाव है। (आ) उससे आच्छादित वर्तता हुआ जीव, राग-द्वेष को प्राप्त करके क्षुब्ध होता है। *[गाथा 83]*

(3) जो श्रमण अवस्था में इन अस्तित्ववाले विशेषसहित

पदार्थों की श्रद्धा नहीं करता, वह श्रमण नहीं है, उसे धर्म प्राप्त नहीं होता है। *[गाथा 91]*

(4) आगमहीन श्रमण, निज और पर को नहीं जानता, वह जीवादि पदार्थों को नहीं जानता हुआ भिक्षु, द्रव्य-भावकर्मों को कैसे क्षय करें ? *[गाथा 233]*

(5) द्रव्यलिंगी मुनि को संसार तत्त्व कहा है। *[गाथा 271]*

(6) सूत्र, संयम और तप से संयुक्त होने पर भी (जो जीव), जिनोक्त आत्म प्रधान पदार्थों का श्रद्धान नहीं करता तो वह श्रमण नहीं है। *[गाथा 264]*

(7)असमानजातीय द्रव्यपर्याय में एकत्वबुद्धि, यह मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 94]*

प्रश्न 69- क्या मिथ्यादर्शन का स्वरूप श्रीसमयसार में भी आया है ?

उत्तर - (1) द्रव्यकर्म, नोकर्म और भावकर्म में एकत्वबुद्धि मिथ्यादर्शन है। *[गाथा 19]*

(2) जब तक यह आत्मा, प्रकृति के निमित्त से उपजना-विनशना नहीं छोड़ता, तब तक अज्ञानी है, मिथ्यादृष्टि है, असंयत है। *[गाथा 314]*

(3) (1) शुभाशुभभावों में और ज्ञप्तिक्रिया में, (2) देव -नारकी और ज्ञायक आत्मा में, (3) ज्ञेय और ज्ञान में एकत्वबुद्धि मिथ्यादर्शन है, एकत्व का ज्ञान मिथ्याज्ञान है और एकत्व का आचरण मिथ्याचारित्र है। *[गाथा 270]*

(4) जो बहुत प्रकार के मुनिलिङ्गों में अथवा गृहस्थी लिङ्गों में ममता करते हैं, अर्थात् यह मानते है कि द्रव्यलिङ्ग ही मोक्ष का दाता

है, उन्होंने समयसार को नहीं जाना। उसे [अ] 'अनादिरूढ़' [आ] 'व्यवहारमूढ' [इ] और 'निश्चय पर अनारूढ़' कहा है, यह सब मिथ्यात्व का प्रभाव है। *[गाथा 413]*

प्रश्न 70- छहढाला में अगृहीत मिथ्यादर्शन किसे कहा है ?

उत्तर - (1) आत्मा का स्वभाव ज्ञान-दर्शन है, इसको भूलकर शरीर को आत्मा मान लेना, शरीर आश्रित उपवास और उपदेशादि में अपनेपने की बुद्धि होना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (2) शरीर की उत्पत्ति में अपनी उत्पत्ति और शरीर के बिछुड़ने पर अपना मरण मानना, अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (3) शुभाशुभभाव प्रगट दुःख के देनेवाले हैं, उन्हें सुखकर मानना, अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (4) शुभाशुभभाव एक रूप ही हैं और बुरे ही हैं परन्तु आत्मा का अनुभव ना होने से, अशुभकर्मों के फल में द्वेष और शुभकर्मों के फल में राग करना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (5) निश्चय -सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जीव को हितकारी हैं, स्वरूप स्थिरता द्वारा राग का जितना अभाव, वह वैराग्य है और सुख का कारण है परन्तु निश्चयसम्यग्दर्शनादि को कष्टदायक मानना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (6) सम्यग्ज्ञानपूर्वक इच्छाओं का अभाव ही निर्जरा है और वही आनन्दरूप है परन्तु अपनी शक्ति को भूलकर, इच्छाओं की पूर्ति में सुख मानना, अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (7) मुक्ति में पूर्ण निराकुलतारूप सच्चा सुख है, उसके बदले भोगसम्बन्धी सुख को ही सुख मानना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

प्रश्न 71- भावदीपिका में अगृहीत मिथ्यात्व कितने प्रकार का बताया है ?

उत्तर - आठ प्रकार का बताया है। (1) परद्रव्य में अहंबुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव है। (2) परगुण में अहंबुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव

है। (4) परद्रव्य में ममकारबुद्धि – यह मिथ्यात्वभाव है। (5) परगुण में ममकारबुद्धि – यह मिथ्याभाव है। (6) परपर्याय में ममकारबुद्धि – यह मिथ्यात्वभाव है। (7) दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायों में द्रव्यरूप बुद्धि – यह मिथ्यात्वभाव है। (8) अदृष्टिगोचर द्रव्य–गुण–पर्यायों में अभावरूपबुद्धि – यह मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 72– परद्रव्य में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्व क्या है ?

उत्तर – परद्रव्य जो शरीर पुद्गल पिण्ड, उसमें अहंबुद्धि 'यह मैं हूँ' यह परद्रव्य में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 73– परगुण में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उत्तर – पुद्गल के स्पर्शादिगुणों में अहंबुद्धि होना। जैसे – मैं गरम, मैं ठण्डा, मैं कोमल, मैं कठोर, मैं हल्का, मैं भारी, मैं रूखा, मैं खट्टा, मैं मीठा, मैं कडुवा, मैं चरपरा, मैं कषायला, मैं दुर्गन्धीवाला, मैं काला, मैं गोरा, मैं लाल, मैं पीला इत्यादि – यह पर गुणों में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 74– परपर्याय में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्व क्या है ?

उत्तर – मैं देव, मैं नारकी, मैं मनुष्य, मैं तिर्यञ्च, और इनके एकेन्द्रिय आदि अवान्तर भेद–प्रभेद में अहंबुद्धि होना – यह पर्यायों में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 75– परद्रव्य में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उत्तर – मेरा धन, मेरा मकान, मेरे आभूषण, मेरे कपड़े, मेरा बक्सा, मेरा पलंग, मेरा बाग, मेरी घड़ी, मेरे दस हजार के नोट, मेरा पुस्तकालय, मेरा भोजन – इस प्रकार पर वस्तुओं में ममकारपना, यह परद्रव्यों में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 76- पर गुण में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उत्तर - मेरे शरीर का बल ऐसा है कि अनेक पराक्रम करूँ, यह मेरा शब्द, ये मेरी चाल, यह मेरी अंगुलियाँ, यह मेरा मुँह, ये मेरा नाम, यह मेरे कान, यह मेरे दाँत इत्यादिरूप प्रवृत्ति होना - यह पर गुणों में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 77- पर पर्याय में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उत्तर - मेरे पुत्र, मेरी स्त्री, मेरी माता, मेरे पिता, मेरे भाई, मेरी बहिन, मेरे नौकर, मेरी प्रजा, मेरे हाथी, मेरे घोड़े, मेरी गाय-भैंस, इस प्रकार में ममकारबुद्धि होना, यह पर पर्यायों में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 78- दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायों में द्रव्यबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उत्तर - दृष्टि में जितनी पुद्गल की पर्याय आती हैं, उनको जुदा जुदा द्रव्य मानता है। जैसे, ये घट है, यह स्वर्ण है, यह पाषाण है, ये पर्वत है, ये वृक्ष है, यह मनुष्य है, यह हार्थी है, यह घोड़ा है, यह चिड़िया है, यह स्यार है, यह सिंह है, यह सूर्य है, यह चन्द्रमा है, यह लड़का है, यह लड़की है, यह जयपुर नरेश है, यह राष्ट्रपति है, यह बहु है, इत्यादि समानजातीय और असमानजातीय द्रव्य-पर्यायों में द्रव्यबुद्धि को धारण करता है, उनका पृथक्-पृथक् सत्त्व मानता है, अर्थात् वर्तमान क्षणिकपर्यायों को ही द्रव्य मानता है। त्रैकालिक सत्तासहित गुण-पर्यायरूप द्रव्य नहीं मानता है, यह दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायों में द्रव्यबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 79- अदृष्टिगोचर द्रव्य-गुण-पर्यायों में अभाव बुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उत्तर - (1) जो दृष्टिगोचर नहीं, ऐसे जो दूर क्षेत्रवर्ती, (2) हो कर नाश हो गयी, (3) अनागत में होगी, (4) इन्द्रियों से अगोचर सूक्ष्म पर्याय इत्यादि जो अपनी और पर की हैं, उनको अभावरूप मानता है। इनका सत्त्व हो चुका, होयेगा, या वर्तमान में है, ऐसा नहीं मानता है इत्यादि सब मिथ्यात्वभाव है।

प्रश्न 80- यह आठ प्रकार का मिथ्यात्वभाव कैसा है और क्यों है ?

उत्तर - यह अगृहीतमिथ्यात्व है। बिना सिखाये अनादि से एक-एक समय करके चला आ रहा है। सदा काल, सर्व क्षेत्र में, मिथ्यादृष्टियों के प्रर्वतता है। किसी के द्वारा कदाचित् उपदेशित नहीं; इस कारण इसे अगृहीतमिथ्यात्व कहा है।

प्रश्न 81- गृहीतमिथ्यात्व क्या है ?

उत्तर - (1) देव, (2) गुरु, (3) धर्म, (4) आप्त (हितउपदेशक), (5) आगम, (6) नौ पदार्थ - इनका उल्टा श्रद्धान, गृहीतमिथ्यात्व है।

प्रश्न 82- जीव का प्रयोजन क्या है ?

उत्तर - दु:ख का अभाव और सुख की प्राप्ति, यह ही एकमात्र जीव का प्रयोजन है।

प्रश्न 83- दु:ख का अभाव और सुख की प्राप्ति के लिये निमित्तकारण किसको माने तो कल्याण का अवकाश है ?

उत्तर - (1) देव-गुरु-धर्म, आप्त, आगम और नौ पदार्थों का आज्ञानुसार प्रवर्तन करे, तो कल्याण का अवकाश है।

प्रश्न 84- देव किसे कहते हैं ?

उत्तर - (1) निज स्वभाव के साधन द्वारा जिन्होंने अनन्त चतुष्टय प्राप्त किया है; 18 दोष जिसमें नहीं हैं और जिनके वचन से धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति होती है, जिससे अनेक पात्र जीवों का कल्याण होता है; श्री गणधर, इन्द्रादिक उत्तम जीव जिनका अपने हित के अर्थ सेवन करते हैं, वे अरहन्त और सिद्धदेव है। ऐसे देव की आज्ञानुसार प्रवर्तन करने से धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता होती है; अत: इन्हीं देव को मानना चाहिए। आयुध अम्बरादि व अङ्ग विकारादि जो काम-क्रोधादि निद्यभावों के चिह्न हैं, ऐसे लक्षणों से युक्त कुदेवों को नहीं मानना चाहिए।

प्रश्न 85- गुरु किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो विरागी होकर समस्त परिग्रह को छोड़कर, शुद्धोपयोगरूप परिणमित हुए हैं, ऐसे आचार्य-उपाध्याय और सर्व साधु, गुरु हैं; बाकी सब गुरु नहीं हैं। इसलिए ऐसे गुरु को ही मानना चाहिए; अन्य को नहीं।

प्रश्न 86- धर्म किसे कहते है ?

उत्तर - (1) निश्चयधर्म तो वस्तु स्वभाव है।

(2) राग-द्वेष रहित अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव में स्थिर होना, वह निश्चयधर्म है, अर्थात् चारों गतियों के अभावरूप अविनाशी मोक्ष सुख को प्राप्त करावे, वह धर्म है।

(3) पूर्ण धर्म ना होने पर मोक्षमार्ग, अर्थात् संवर-निर्जरारूप धर्म होता है। उसमें निश्चय-व्यवहार का जैसा स्वरूप है, वैसा समझना चाहिए। इससे विरुद्ध जो शरीर की क्रिया से व विकार से धर्म बताये, उससे बचना चाहिए।

प्रश्न 87- आप्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव का परम हित, मोक्ष है; उसके उपदेष्टा, वह आप्त हैं। आप्त दो प्रकार का है - (1) मूलआप्त अरहन्तदेव हैं और (2) उत्तर आप्त, गणधरादिक मुनि हैं। श्रावक और सम्यग्दृष्टि भी उत्तर आप्त में आते हैं क्योंकि वे भी आप्त के अनुसार वीतराग, सर्वज्ञ और हित का उपदेश देते हैं। इसलिए पात्र जीवों को ज्ञानियों का सत्संग करना चाहिए; अज्ञानियों का नहीं। [भावदीपिका]

प्रश्न 88- आगम किसे कहते हैं ?

उत्तर - आप्त का वचन आगम है, अर्थात् दिव्यध्वनि, जिनवाणी है। जो परम्परा या साक्षात् एकमात्र वीतरागभाव का पोषण करे, वह आगम है; क्योंकि आगम का तात्पर्य दु:ख का अभाव, सुख की प्राप्ति है। अब कलिकाल के दोष से कषायी पुरुषों द्वारा शास्त्रों में अन्यथा अर्थ का मेल हो गया है; इसलिए जैनन्याय के शास्त्रों की ऐसी आज्ञा है कि

(1) आगम का सेवन,

(2) युक्ति का अवलम्बन,

(3) पर और अपर गुरु का उपदेश, और

(4) स्वानुभव; इन चार विशेषों का आश्रय करके अर्थ की सिद्धि करके ग्रहण करना, क्योंकि अन्यथा अर्थ के ग्रहण से जीव का बुरा होता है।

प्रश्न 89- पदार्थ किसे कहते हैं ?

उत्तर - पद का जो अर्थ, अर्थात् प्रयोजन, उसको पदार्थ कहते हैं। नौ प्रकार के पदार्थों का स्वरूप जैसा जिनागम में है, वैसे ही स्वरूपसहित ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यह प्रयोजनभूत

पदार्थ है। जैसा स्वरूप कहा है, उस ही स्वरूपसहित ग्रहण करना मोक्ष का कारण है। अन्यथा स्वरूप का ग्रहण करने से संसार परिभ्रमण होता है।

प्रश्न 90- देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम और पदार्थों को मोक्ष के कारण (निमित्त) क्यों बताये हैं ?

उत्तर - इन छह निमित्तों में से एक की भी हानि हो जावे तो मोक्षमार्ग की हानि हो जाती है क्योंकि :- (1) देव न होय तो धर्म किसके आश्रय प्रवर्ते ?

(2) गुरु न होय तो धर्म का ग्रहण कौन करावे ?

(3) धर्म का ग्रहण न करे तो मोक्ष की सिद्धि किसके द्वारा की जाय ?

(4) आप्त का ग्रहण न होय तो सत्यधर्म का उपदेश कौन दे ?

(5) आगम का ग्रहण न होय तो मोक्षमार्ग में अवलम्बन किसका करे ?

(6) पदार्थों का ज्ञान न कीजिए तो [अ]आप का और पर का, [आ] अपने भावों का और पर भावों का, [इ] हेयभावों का और उपादेयभावों का, [ई] अहित का और अपने परमहित का कैसे भान होवे। इसलिए इन छह निमित्तों को मोक्षमार्ग में बताया है।

प्रश्न 91- इन छह निमित्तों को गृहीतमिथ्यात्व क्यों कहा है ?

उत्तर - इन छह निमित्तों को गृहीतमिथ्यात्व नहीं कहा है परन्तु उनके उल्टे श्रद्धान को गृहीतमिथ्यात्व कहा है। उल्टे निमित्तों के मानने से, जीव का बहुत बुरा होता है।

प्रश्न 92- जिन उल्टे निमित्तों के मानने से जीव का बहुत बुरा होता है, वे निमित्त क्या-क्या हैं ?

उत्तर – सर्व प्रकार से धर्म को जानता हुआ मिथ्यादृष्टि जीव किसी धर्म के अंग को मुख्य करके, अन्य धर्मों को गौण करता है। जैसे, (1) कई जीव, दया–धर्म को मुख्य करके, पूजा–प्रभावनादि कार्य का उत्थापन करते हैं।

(2) कितने ही पूजा–प्रभावनादि धर्म को मुख्य करके, हिंसादिक का भय नहीं रखते।

(3) कितने ही तप की मुख्यता से, आर्तध्यानादिक करके भी उपवासादि करते हैं तथा अपने को तपस्वी मानकर नि:शंक क्रोधादि करते हैं।

(4) कितने ही दान की मुख्यता से, बहुत पाप करके भी धन उपार्जन करके दान देते हैं।

(5) कितने ही आरम्भ त्याग की मुख्यता से, याचना आदि करते हैं; इत्यादि प्रकार से किसी धर्म को मुख्य करके, अन्य धर्म को नहीं गिनते तथा उसके आश्रय से पाप का आचरण करते हैं। [मोक्षमार्ग –प्रकाशक]

प्रश्न 93– क्या उनका यह कार्य ठीक नहीं है और ठीक क्या है ?

उत्तर – उनका यह कार्य ऐसा हुआ जैसे – अविवेकी व्यापारी को किसी व्यापार में नफे के अर्थ, अन्य प्रकार से बहुत टोटा पड़ता है। चाहिए तो ऐसा कि – जैसे व्यापारी का प्रयोजन नफा है, सर्व विचार कर जैसे नफा बहुत हो, वैसा करें; उसी प्रकार ज्ञानी का प्रयोजन वीतरागभाव है, सर्व विचार कर जैसे वीतरागभाव बहुत हो वैसा करें; क्योंकि मूलधर्म वीतरागभाव है। [मोक्षमार्गप्रकाशक]

प्रश्न 94– सम्यग्दर्शन के बिना कितने ही जीव, जिनवर कथित अणुव्रत, महाव्रतादि का पालन करतें हैं, क्या वे जीव भी उल्टे निमित्तों में आते हैं ?

उत्तर – हाँ भाई, वे भी उल्टे निमित्तों में ही आते हैं क्योंकि कुन्दकुन्द भगवान ने प्रवचनसार में उन्हें संसारतत्त्व कहा है।

प्रश्न 95– सम्यग्दर्शन के बिना, महाव्रतादिरूप आचरण से क्या साधते हैं ?

उत्तर – कितने ही जीव, अणुव्रत–महाव्रतादिरूप यथार्थ आचरण करते हैं और आचरण के अनुसार ही परिणाम है; कोई माया –लोभादिक का अभिप्राय नहीं; अणुव्रत महाव्रतादि को धर्म जानकर मोक्ष के अर्थ उनका साधन करते हैं, किन्हीं स्वर्गादिक के भोगों की भी इच्छा नहीं रखते, परन्तु तत्त्वज्ञान पहले नहीं हुआ है; इसलिए आप तो जानते हैं कि मैं मोक्ष का साधन कर रहा हूँ, परन्तु जो मोक्ष का साधन है, उसे जानते भी नहीं; केवल स्वर्गादिक ही का साधन करते हैं। (मोक्षमार्गप्रकाशक)

प्रश्न 96– कुन्दकुन्दादि आचार्यों का क्या आदेश है ?

उत्तर – प्रथम तत्त्वज्ञान हो और पश्चात् चारित्र हो तो सम्यक् चारित्र नाम पाता है। जैसे–कोई किसान, बीज बोये नहीं और अन्य साधन करे तो अन्न प्राप्ति कैसे हो ? घास–फूस ही होगा; उसी प्रकार अज्ञानी तत्त्वज्ञान का तो अभ्यास करें नहीं और अन्य साधन करें, तो मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो ? देवपद आदि ही होंगे। इसलिए पात्र जीवों को प्रथम जिनवरकथित तत्त्व का यथार्थ अभ्यास करके, सम्यग्दर्शनादिक की प्राप्ति करने का आचार्यों का आदेश है।

प्रश्न 97– कोई जीव, छह द्रव्य, सात तत्त्वों के नाम लक्षणादि भी नहीं जानते और व्रतादि में प्रवर्तते हैं, क्या वे आत्महित साध सकते हैं ?

उत्तर – वे जीव, आत्महित नहीं साध सकते हैं। शास्त्रों में आया है कि कितने ही जीव तो ऐसे हैं जो तत्त्वादिक के भली भाँति

नाम भी नहीं जानते, केवल व्रतादिक में ही प्रवर्तते हैं। कितने ही जीव ऐसे हैं जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान का अयथार्थ साधन करके, व्रतादि में प्रवर्तते हैं। यद्यपि वे व्रतादि का यथार्थ आचरण करते हैं तथापि यथार्थ श्रद्धान-ज्ञान बिना सर्व आचरण मिथ्याचारित्र ही है।

प्रश्न 98- सम्यग्दर्शन के बिना, व्रतादि में प्रवर्तते हैं, वह मोक्ष का साधन नहीं है, ऐसा कहीं श्रीसमयसार में कहा है?

उत्तर - श्रीसमयसार, कलश 142 में पण्डित राजमलजी ने लिखा है कि 'विशुद्ध शुभोपयोगरूप परिणाम, जैनोक्तसूत्र का अध्ययन, जीवादि द्रव्यों के स्वरूप का बारम्बार स्मरण, पञ्च परमेष्ठि की भक्ति इत्यादि हैं जो अनेक क्रियाभेद, उनके द्वारा घटाटोप करते हैं तो करो, तथापि शुद्धस्वरूप की प्राप्ति होगी सो तो शुद्धज्ञान (ज्ञायकस्वभाव) द्वारा होगी। ...तथा महाव्रतादि की परम्परा-आगे मोक्ष का कारण होगी, ऐसा भ्रम उत्पन्न होता है, सो झूठा है। महा परीषहों का सहना, उनका बहुत बोझ उसके द्वारा बहुत कालपर्यन्त मरके चूरा होते हुए बहुत कष्ट करते हैं तो करो, तथापि ऐसा करते हुए कर्मक्षय तो नहीं।'

प्रश्न 99- पञ्चास्तिकाय, गाथा 172 में क्या बताया है?

उत्तर - तेरह प्रकार का चारित्र होने पर भी उसका मोक्षमार्ग में निषेध किया है।

प्रश्न 100- प्रवचनसार में क्या बताया है?

उत्तर - आत्मा के अनुभव बिना, संयमभाव को अनर्थकारी कहा है। क्योंकि तत्त्वज्ञान होने पर ही आचरण कार्यकारी कहा जाता है।

प्रश्न 101- सम्यग्दर्शन के बिना, अणुव्रत-महाव्रतादि साधन को क्या बताया है?

उत्तर - अन्तरङ्ग परिणाम नहीं है और स्वर्गादिक की वांछा से

साधते हैं, सो इस प्रकार साधने से तो पाप बन्ध होता है। (मोक्षमार्ग -प्रकाशक)

प्रश्न 102- आपने छह निमित्तों की अन्यथारूप प्रवृत्ति को गृहीतमिथ्यात्व कहा है परन्तु शास्त्रों में तो (1) एकान्त, (2) विनय, (3) संयम, (4) विपरीत, और (5) अज्ञान को गृहीतमिथ्यात्व कहा है, ऐसा क्यों ?

उत्तर - गृहीतमिथ्यात्वभाव इन छह निमित्तों के अन्यथा ग्रहण में पाँच प्रकार प्रवर्तता है। अत: गृहीतमिथ्यात्व में प्रवृत्ति के मूलभेद पाँच प्रकार किये हैं; उत्तरभेद असंख्यात लोकप्रमाण हैं।

प्रश्न 103- स्व क्या है और पर क्या है ?

उत्तर - (1) अमूर्तिक प्रदेशों का पुँज; प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी; अनादिनिधन; वस्तु स्व है।

(2) मूर्तिक पुद्गलद्रव्यों का पिण्ड; प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित; नवीन जिसका संयोग हुआ है, ऐसे शरीरादिक पुद्गल पर हैं। जैसा स्व का स्वरूप है, वैसा माने तो तुरन्त धर्म की प्राप्ति होती है। परन्तु अज्ञानी अनादि से पर को स्व मानता है और स्व को पर मानता है; इसलिए चारों गतियों में घूमता है। अब पात्र जीव को स्व को स्व, और पर को पर जानकर, मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ बनना चाहिए।

प्रश्न 104- आपने इतने विस्तार से गृहीतमिथ्यात्व और अगृहीतमिथ्यात्व का स्वरूप क्यों समझाया है ?

उत्तर - ऊपर कहे गये अनुसार मिथ्यात्व का स्वरूप जानकर, सब जीवों को गृहीत तथा अगृहीतमिथ्यात्व छोड़ना चाहिए, क्योंकि सब प्रकार के बन्ध का मूलकारण मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व को नष्ट किये बिना, अविरति, प्रमाद, कषाय आदि कभी दूर नहीं होते; इसलिए सबसे पहले मिथ्यात्व को दूर करना चाहिए।

प्रश्न 105- मिथ्यात्व को सबसे पहले क्यों दूर करना चाहिए ?

उत्तर - मिथ्यात्व, सात व्यसनों से भी बढ़कर भयंकर महापाप है; इसलिए जैनधर्म सर्व प्रथम मिथ्यात्व को छोड़ने का उपदेश देता है।

प्रश्न 106- आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी ने मिथ्यात्व के विषय में क्या कहा है ?

उत्तर - हे भव्यों! किञ्चित्मात्र लोभ से व भय से, कुदेवादिक का सेवन करके, जिससे अनन्त काल पर्यन्त महादु:ख सहना होता है, ऐसा मिथ्यात्वभाव करना योग्य नहीं है। जिनधर्म में तो यह आम्नाय है कि पहले बड़ा पाप छुड़ाकर, फिर छोटा पाप छुड़ाया है; इसलिए इस मिथ्यात्व को सप्त व्यसनादिक से भी बड़ा पाप जानकर, पहले छुड़ाया है। इसलिए जो पाप के फल से डरते हैं, अपने आत्मा को दु:ख समुद्र में डुबाना नहीं चाहते, वे जीव इस मिथ्यात्व को अवश्य छोड़ो। (मोक्षमार्गप्रकाशक)

प्रश्न 107- जो जीव, मिथ्यात्व के प्रकारों को जानकर दूसरे का दोष देखते हैं; अपना नहीं देखते, उनके लिए आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी ने क्या कहा है ?

उत्तर - मिथ्यात्व के प्रकारों को पहिचानकर, अपने में ऐसा दोष हो, तो उसे दूर करके सम्यक् श्रद्धानी होना, औरों के ही ऐसे दोष देख-देखकर कषायी नहीं होना, क्योंकि अपना भला तो अपने परिणामों से है। औरों को रुचिवान देखें, तो कुछ उपदेश देकर उनका भी भला करें। इसलिये अपने परिणाम सुधारने का उपाय करना योग्य है; सब प्रकार के मिथ्यात्व छोड़कर, सम्यग्दृष्टि होना योग्य है क्योंकि संसार का मूल, मिथ्यात्व है और मोक्ष का मूल, सम्यक्त्व है और मिथ्यात्व के समान अन्य पाप नहीं है; इसलिए

जिस-तिस उपाय से सर्व प्रकार से मिथ्यात्व का नाश करना योग्य है। (मोक्षमार्गप्रकाशक)

प्रश्न 108- मोक्ष के प्रयत्न में कितनी बातें एक साथ होती हैं, और कौन-कौन सी होती हैं ?

उत्तर - मोक्ष के प्रयत्न में पाँच बातें एक साथ होती हैं - (1) ज्ञायक स्वभाव, (2) पुरुषार्थ, (3) काललब्धि, (4) भवितव्य, और (5) कर्म के उपशमादि। यह पाँच बातें एक साथ होती हैं।

प्रश्न 109- स्वभाव आदि पाँच बातें, कारण हैं या कार्य हैं ?

उत्तर - कारण हैं; कार्य नहीं हैं।

प्रश्न 110- स्वभाव क्या है ?

उत्तर - अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा, अपना स्वभाव है।

प्रश्न 111- पुरुषार्थ क्या है ?

उत्तर - अपने ज्ञानगुण की पर्याय जो पर सन्मुख है, उसे अपने स्वभाव के सन्मुख करना, यह पुरुषार्थ है। यह क्षणिकउपादान कारण है।

प्रश्न 112- काललब्धि क्या है ?

उत्तर - (1) वह कोई वस्तु नहीं, किन्तु जिस काल में कार्य बने, वही काललब्धि है।

(2) यहाँ कालादि लब्धि में काललब्धि का अर्थ, स्वकाल की प्राप्ति होता है।

(3) भगवान श्री जयसेनाचार्य ने श्रीसमयसार, गाथा 71 में काललब्धि को धर्म पाने के समय 'श्री धर्मकाललब्धि' के नाम से सम्बोधन किया है।

प्रश्न 113- भवितव्य क्या है ?

उत्तर - (1) भवितव्य अथवा नियति, उस समय पर्याय की योग्यता है, यह भी क्षणिकउपादानकारण है।

(2) जो कार्य होना था, सो हुआ इसको भवितव्य कहते हैं।

प्रश्न 114- कर्म के उपशमादि क्या हैं ?

उत्तर - पुद्गलद्रव्य की अवस्था है।

प्रश्न 115- कर्म के उपशमादि का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - कर्म के उपशमादिक तो पुद्गल की पर्यायें हैं। उनका कर्ता, कार्माणवर्गणा है; जीव और अन्य वर्गणाएँ इनका कर्ता नहीं है।

प्रश्न 116- कर्म के उपशमादिक का और आत्मा का कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर - जब आत्मा, यथार्थ पुरुषार्थ करता है, तब कर्म के उपशमादिक स्वयं स्वतः हो जाते हैं। इनका स्वतन्त्ररूप से निमित्त -नैमित्तिकसम्बन्ध है। जो स्वतन्त्रता का सूचक है; परतन्त्रता का सूचक नहीं है।

प्रश्न 117- इन पाँच कारणों में से किसके द्वारा मोक्ष का उपाय बनता है ?

उत्तर - जब जीव अपने ज्ञायकस्वभाव के सन्मुख होकर यथार्थ पुरुषार्थ करता है, तब काललब्धि, भवितव्य और कर्म के उपशमादिक स्वयमेव हो जाते हैं।

प्रश्न 118- समवाय किसे कहते हैं ?

उत्तर - मिलाप, समूह को समवाय कहते हैं।

प्रश्न 119- मोक्ष में किसकी मुख्यता है ?

उत्तर – पुरुषार्थ की मुख्यता है।

प्रश्न 120– जीव का कर्तव्य क्या है ?

उत्तर – जीव का कर्तव्य तो तत्त्वनिर्णय का अभ्यास (अपने स्वभाव का आश्रय) ही है। वह करे तब दर्शनमोह का उपशम स्वयमेव होता है, किन्तु द्रव्यकर्म में जीव का कुछ भी कर्तव्य नहीं है।

प्रश्न 121– मोक्ष के उपाय के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर – जिनेश्वरदेव के उपदेशानुसार पुरुषार्थपूर्वक उपाय करना चाहिए। इसमें निमित्त और उपादान, दोनों आ जाते हैं।

प्रश्न 122– जिनेश्वरदेव ने मोक्ष के लिए क्या उपाय बताया है ?

उत्तर – जो जीव, पुरुषार्थपूर्वक मोक्ष का उपाय करता है, उसे तो सर्व कारण मिलते हैं, और अवश्य मोक्ष की प्राप्ति होती है। काललब्धि, भवितव्य, कर्म के उपशमादिक कारण मिलाना नहीं पड़ते, किन्तु जो जीव पुरुषार्थपूर्वक मोक्ष का उपाय करता है, उसे तो सब कारण मिल जाते हैं और जो उपाय नहीं करता, उसे कोई कारण नहीं मिलते और न उसे धर्म की प्राप्ति होती है – ऐसा निश्चय करना। (मोक्षमार्गप्रकाशक)

प्रश्न 123– क्या जीव को काललब्धि, भवितव्य और कर्म के उपशमादिक जुटाने नहीं पड़ते हैं ?

उत्तर – जुटाने नहीं पड़ते हैं। वास्तव में जब जीव, स्वभाव सन्मुख यथार्थ पुरुषार्थ करता है, तब वे कारण स्वयं होते हैं।

प्रश्न 124– रागादिक कैसे दूर हो ?

उत्तर – जैसे – पुत्र का अर्थी विवाहादि का तो उद्यम करे और भवितव्य स्वयमेव हो, तब पुत्र होगा; उसी प्रकार विभाव दूर करने

का कारण बुद्धिपूर्वक तो तत्त्वविचारादि (रुचि और लीनता) है और अबुद्धिपूर्वक मोहकर्म के उपशमादिक हैं। सो तत्त्व का अर्थी (सच्चा सुख पाने का अर्थी) तत्त्व विचारादिक का तो उद्यम करे और मोहकर्म के उपशमादिक स्वयमेव हों, तब रागादिक दूर होते हैं।

प्रश्न 125- श्रीसमयसार-नाटक में 'शिवमार्ग' किसे कहा है?

उत्तर - स्वभाव आदि पाँचों को सर्वांगी मानना, उसे शिवमार्ग कहा है। और किसी एक को ही मानना, यह पक्षपात होने से मिथ्या-मार्ग कहा है।

प्रश्न 126- कोई कहे काललब्धि पकेगी, तभी धर्म होगा, क्या यह मान्यता बराबर है?

उत्तर - यह मान्यता खोटी है, क्योंकि ऐसी मान्यतावाले ने पाँचों समवायों को एक साथ नहीं माना, मात्र एक काललब्धि को ही माना; इसलिए एकान्तकालवादी गृहीतमिथ्यादृष्टि है।

प्रश्न 127- जगत में सब भवितव्य के आधीन हैं, जब धर्म होना होगा तब होगा, क्या यह मान्यता बराबर है?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि इस मान्यतावाले ने पाँचों समवायों को एक साथ नहीं माना है, मात्र एक भवितव्य को ही माना; इसलिए वह एकान्तनियतिवादी गृहीतमिथ्यादृष्टि है।

प्रश्न 128- कोई मात्र द्रव्यकर्म को ही माने तो क्या ठीक है?

उत्तर - यह भी मिथ्या है, क्योंकि इस मान्यतावाले ने पाँचों समवायों को एक साथ नहीं माना, मात्र एक द्रव्यकर्म के उपशमादिक को ही माना; इसलिए वह एकान्तकर्मवादी गृहीतमिथ्यादृष्टि है।

प्रश्न 129- कोई मात्र स्वभाव को ही माने, क्या ठीक है?

उत्तर -बिल्कुल नहीं, क्योंकि इस मान्यतावाले ने पाँचों समवायों

को एक साथ नहीं माना, मात्र स्वभाव को ही माना; इसलिए यह स्वभाववादी गृहीतमिथ्यादृष्टि है और वेदान्त की मान्यतावाला है।

प्रश्न 130- कोई मात्र पुरुषार्थ ही चिल्लाये और बाकी स्वभाव आदि को न माने तो क्या ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल गलत है, इस मान्यतावाले ने भी पाँचों समवायों को एक साथ नहीं माना, मात्र पुरुषार्थ को ही माना; इसलिए यह बौद्ध-मतावलम्बी गृहीतमिथ्यादृष्टि है।

प्रश्न 131- पाँचों समवायों में द्रव्य-गुण-पर्याय, कौन -कौन हैं ?

उत्तर - सामान्य ज्ञायकस्वभाव, वह द्रव्य है; शेष चार पर्यायें हैं।

प्रश्न 132- कोई तत्त्वनिर्णय ना होने में कर्म का ही दोष माने, तो क्या ठीक है ?

उत्तर - तत्त्वनिर्णय न करने में कर्म का कोई दोष नहीं है, किन्तु जीव का ही दोष है। जो जीव, कर्म का दोष निकालता है, वह अपना दोष होने पर भी कर्म पर दोष डालता है, यह अनीति है। जो सर्वज्ञ भगवान की आज्ञा माने उसके ऐसी अनीति नहीं हो सकती है। जिसे धर्म नहीं करना है, विषय कषाय ही करते रहना है, वह ऐसा झूठ बोलता है। जिसे मोक्षसुख की सच्ची अभिलाषा हो, वह ऐसी झूठी युक्ति नहीं बनायेगा। (मोक्षमार्गप्रकाशक)

प्रश्न 133- सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, नियम से मोक्ष के लिए क्या करें ?

उत्तर - (1) जीव का कर्तव्य तो तत्त्वज्ञान का अभ्यास ही है और उस ही से स्वमेव दर्शनमोह का उपशम होता है। दर्शनमोह के उपशमादिक में जीव का कर्तव्य कुछ भी नहीं है।

(2) तत्पश्चात् ज्यों-ज्यों जीव, स्वसन्मुखता द्वारा वीतरागता में वृद्धि करता है, त्यों-त्यों श्रावकदशा, मुनिदशा प्रगट होती है।

(3) उस दशा में भी जीव अपने ज्ञायकस्वभाव में पूर्ण रमणता द्वारा सर्वथा शुद्ध होने पर, केवलज्ञान, केवलदर्शन और मोक्षदशारूप सिद्धपद प्राप्त करता है।

प्रश्न 134- स्वभाव, पुरुषार्थ आदि पाँचों समवाय, किसमें लगते हैं ?

उत्तर - संसार में जितने भी कार्य हैं, उन सब में ये पाँचों समवाय एक साथ लगते हैं, लेकिन यहाँ पर मोक्ष की बात है।

प्रश्न 135- संसार में जो कार्य हम करते हैं, क्या वह सब पुरुषार्थ से करते हैं ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि - (1) धनादिक की प्राप्ति में आत्मा का वर्तमान पुरुषार्थ किञ्चित्मात्र भी कार्यकारी नहीं है।

(2) लौकिकज्ञान की प्राप्ति में भी वर्तमान पुरुषार्थ किञ्चित् -मात्र कार्यकारी नहीं है।

प्रश्न 136- पैसा कमाने का भाव करें, तभी पैसों की प्राप्ति होती है ना ?

उत्तर - अरे भाई बिल्कुल नहीं, क्योंकि पैसा कमाने का भाव, पापभाव है। पाप करे और पैसा मिले, ऐसा कभी भी नहीं हो सकता है।

प्रश्न 137- आज कल जमाने में झूठ ना बोले, चोरी न करे तो भूखे मर जावे ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं! क्योंकि झूठ और चोरी कारण हो और पैसा मिले, यह कार्य, ऐसा कभी नही हो सकता है।

प्रश्न 138- झूठ बोलकर, चोरी करने से पैसा आता हुआ तो दिखता है ?

उत्तर - पहले जन्म में कोई शुभभाव या अशुभभाव किया तो उसके निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध की अपेक्षा साता-असाता का संयोग देखने में आता है। उसमें (रुपया-पैसा कमाने में) जीव का पुरुषार्थ किञ्चित्मात्र भी कार्यकारी नहीं है।

प्रश्न 139- क्या लौकिकज्ञान की प्राप्ति में भी वर्तमान पुरुषार्थ किञ्चित्मात्र कार्यकारी नहीं है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं है क्योंकि विचारों, मेंढक चीरा तो ज्ञान बढ़ा, क्या वह ठीक है ? आप कहेंगे - ऐसा ही देखते हैं। तो भाई एक मेंढक चीरने से ज्ञान बढ़ता हो, तो सौ मेंढक चीरने से ज्यादा ज्ञान बढ़ना चाहिए, सो ऐसा होता नहीं है।

प्रश्न 140- किसी के कम ज्ञान, किसी को ज्यादा ज्ञान, ऐसा क्यों देखनें में आता है ?

उत्तर - पूर्व भव में ज्ञान के विकास सम्बन्धी मन्द / तीव्र कषाय किया तो ज्ञानावरणीय का मन्द / तीव्र रस होने से ज्ञान का उघाड़ देखने में आता है।

प्रश्न 141- अज्ञानियों को प्रयत्न करने पर भी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति क्यों नहीं होती है ?

उत्तर - अज्ञानी का उल्टा प्रयत्न होने से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं होती है क्योंकि सम्यग्दर्शन, आत्मा के आश्रय से श्रद्धागुण में से आता है। अज्ञानी ढूँढता है दर्शनमोहनीय के उपशमादि में और देव-गुरु शास्त्र में।

प्रश्न 142- अज्ञानियों को सुख की प्राप्ति क्यों नहीं होती है ?

उत्तर - आत्मा के आश्रय से सुखगुण में से सुखदशा प्रगट होती

है; अज्ञानी पाँचों इन्द्रियों के विषयों में से सुख मानता है। इसलिए सुख की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 143- अज्ञानियों को सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति क्यों नहीं होती है?

उत्तर - आत्मा के आश्रय से ज्ञानगुण में से सम्यग्ज्ञान आता है और अज्ञानी, देव-शास्त्र-गुरु के आश्रय से, ज्ञेयों के आश्रय से, ज्ञानावरणीय के क्षयोपशमादि से मानता है; इसलिए सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 144- अज्ञानी को सम्यक्चारित्र की प्राप्ति क्यों नहीं होती है?

उत्तर - आत्मा के आश्रय से चारित्रगुण में से सम्यक्चारित्र की प्राप्ति होती है। अज्ञानी, अणुव्रतादि, महाव्रतादि के आश्रय से तथा बाहरी क्रियाओं से मानता है; इसलिए सम्यक्चारित्र की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 145- जिनके जानने से मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति हो, वे अवश्य जाननेयोग्य-प्रयोजनभूत क्या-क्या हैं?

उत्तर - (1) हेय-उपादेय तत्त्वों की परीक्षा करना।

(2) जीवादि द्रव्य, सात तत्त्व, स्व-पर को पहिचानना तथा देव-गुरु-धर्म को पहिचानना।

(3) त्यागनेयोग्य मिथ्यात्व-रागादिक, तथा ग्रहण करनेयोग्य सम्यग्दर्शन-ज्ञानादिक का स्वरूप पहिचानना।

(4) निमित्त-नैमित्तिक, निश्चय-व्यवहार, उपादान-उपादेय, छह कारक, चार अभाव, छह सामान्यगुण आदि को जैसे हैं, वैसे ही जानना; इत्यादि जिनके जानने से मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति हो, उन्हें अवश्य जानना चाहिए, क्योंकि ये सब मोक्षमार्ग में प्रयोजनभूत हैं।

प्रश्न 146- प्रयोजनभूत तत्त्वों को यथार्थ जानने-मानने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर - यदि उन्हें यथार्थरूप से जाने-श्रद्धान करे तो सम्यग्दर्शन प्रगट होकर, क्रम से मोक्षदशा की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न 147- जीव को धर्म समझने का क्रम क्या है ?

उत्तर - (1) प्रथम तो परीक्षा द्वारा कुदेव, कुगुरु और कुधर्म की मान्यता छोड़कर, अरहन्त देवादि का श्रद्धान करना चाहिए, क्योंकि उनका श्रद्धान करने से गृहीतमिथ्यात्व का अभाव होता है।

(2) फिर जिनमत में कहे हुए जीवादि तत्त्वों का विचार करना चाहिए; उनके नाम लक्षणादि सीखना चाहिए, क्योंकि उस अभ्यास से तत्त्वश्रद्धान की प्राप्ति होती है।

(3) फिर जिनसे स्व-पर का भिन्नत्व भासित हो, वैसे विचार करते रहना चाहिए, क्योंकि उस अभ्यास से भेदज्ञान होता है।

(4) तत्पश्चात् एक स्व में स्व-पना मानने के हेतु, स्वरूप का विचार करने रहना चाहिए, क्योंकि उस अभ्यास से आत्मानुभव की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार अनुक्रम से उन्हें अङ्गीकार करके फिर उसी में से, किसी समय देवादि के विचार में, कभी तत्त्वविचार में, कभी स्व-पर के विचार में, तथा कभी आत्मविचार में उपयोग को लगाना चाहिये। यदि पात्रजीव पुरुषार्थ चालू रक्खे तो इसी अनुक्रम से उसे सम्यक्दर्शनादि की प्राप्ति हो जाती है। [मोक्षमार्गप्रकाशक]

प्रश्न 148- जिनदेव के सर्व उपदेश का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - मोक्ष को हितरूप जानकर, एक मोक्ष का उपाय करना ही सर्व उपदेश का तात्पर्य है।

प्रश्न 149- चारित्र का लक्षण (स्वरूप) क्या है ?

उत्तर - (1) मोह और क्षोभरहित आत्मा का परिणाम, वह चारित्र है।

(2) स्वरूप में चरना, वह चारित्र है।

(3) अपने स्वभाव में प्रवर्तन करना, शुद्धचैतन्य का प्रकाशित होना, वह चारित्र है।

(4) वही वस्तु का स्वभाव होने से धर्म है। जो धर्म है, वह चारित्र है।

(5) यही यथास्थित आत्मा का गुण होने से (अर्थात्, विषमता रहित सुस्थित आत्मा का गुण होने से) साम्य है।

(6) मोह-क्षोभ के अभाव के कारण, अत्यन्त निर्विकार ऐसा जीव का परिणाम है। *[श्रीप्रवचनसार, गाथा 7 तथा टीका से]*

प्रश्न 150- व्यवहारसम्यक्त्व किस गुण की पर्याय है ?

उत्तर - सच्चे देव-गुरु-शास्त्र, छह द्रव्य और सात तत्त्वों की श्रद्धा का राग होने से, यह चारित्रगुण की अशुद्धपर्याय है, किन्तु व्यवहारसम्यक्त्व, श्रद्धागुण की पर्याय नहीं है।

प्रश्न 151- जिसको सच्चे देव-गुरु-धर्म का निमित्त बने, वह अपना कल्याण ना करे, उसके विषय में भगवान की क्या आज्ञा है ?

उत्तर - (1) जैसे - किसी महान दरिद्री को अवलोकनमात्र चिन्तामणि की प्राप्ति हो और वह अवलोकन न करे, तथा जैसे - किसी कोढ़ी को अमृतपान करायें और वह न करे; उसी प्रकार संसारपीड़ित जीव को सुगम मोक्षमार्ग के उपदेश का निमित्त बनने पर भी, वह अभ्यास ना करे, तो उसके अभाग्य की महिमा हमसे तो नहीं हो सकती।

(2) वर्तमान में सतगुरु का योग मिलने पर भी, तत्त्वनिर्णय करने का पुरुषार्थ ना करे, प्रमाद से काल गँवाये, या मन्दरागादिसहित विषयकषायों में ही प्रवर्ते या व्यवहार धर्मकार्यों में प्रवर्ते तो अवसर चला जायेगा और संसार में ही भ्रमण रहेगा।

(3) यह अवसर चूकना योग्य नहीं, अब सर्व प्रकार से अवसर आया है, ऐसा अवसर पाना कठिन है। इसलिए वर्तमान में श्रीसत्गुरु दयालु होकर, मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं; भव्यजीवों को उसमें प्रवृत्ति करनी चाहिए। [मोक्षमार्गप्रकाशक]

प्रश्न 152- सम्यग्दर्शन का लक्षण प. टोडरमलजी ने क्या कहा है और सम्यग्दर्शन क्या है ?

उत्तर - विपरीताभिनिवेशरहित जीवादिक तत्त्वार्थ श्रद्धान, वह सम्यग्दर्शन का लक्षण है और सम्यग्दर्शन, आत्मा के श्रद्धागुण की स्वभाव अर्थपर्याय है।

प्रश्न 153- सम्यग्दर्शन सविकल्प है या निर्विकल्प है ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन निर्विकल्प शुद्धभावरूप परिणमन है और किसी भी प्रकार से सम्यग्दर्शन, सविकल्प नहीं है। यह चौथे गुणस्थान से सिद्धदशा तक एकरूप है।

प्रश्न 154- चौथे गुणस्थान से सिद्धदशा तक सम्यग्दर्शन एक समान है, इस विषय में पण्डित टोडरमलजी ने क्या कहा है ?

उत्तर - ज्ञानदिक की हीनता-अधिकता होने पर भी तिर्यञ्चादिक व केवली सिद्धभगवान के सम्यक्त्वगुण समान ही कहा है। तथा चिट्ठी में लिखा है कि 'चौथे गुणस्थान में सिद्धसमान क्षायिकसम्यक्त्व हो जाता है; इसलिए सम्यक्त्व तो यथार्थ श्रद्धानरूप ही है'। 'निश्चयसम्यक्त्व, प्रत्यक्ष है और व्यवहारसम्यक्त्व परोक्ष है' - ऐसा नहीं है; इसलिए सम्यक्त्व के प्रत्यक्ष-परोक्ष भेद नहीं मानना।

प्रश्न 155- क्या निश्चय और व्यवहार - ऐसे दो प्रकार के सम्यग्र्शन हैं ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; सम्यग्दर्शन एक ही प्रकार का है, दो प्रकार का नहीं है किन्तु उसका कथन दो प्रकार से है।

प्रश्न 156- चारों अनुयोगों में प्रथम सम्यग्दर्शन का उपदेश क्यों किया ?

उत्तर - यम-नियमादि करने पर भी सम्यग्दर्शन के बिना, धर्म की शुरुआत, वृद्धि एवं पूर्णता नहीं होती; अतः चारों अनुयोगों में प्रथम सम्यग्दर्शन का ही उपदेश है।

प्रश्न 157- क्या सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना, व्यवहार नहीं होता है ?

उत्तर - नहीं होता है, क्योंकि सम्यग्दर्शन स्वयं व्यवहार है और त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव वह निश्चय है।

प्रश्न 158- सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना, व्यवहार नहीं होता है, ऐसा कहाँ कहा है ?

उत्तर - चारों अनुयोगों में कहा है। मुख्यरूप से श्रीप्रवचनसार, गाथा 94 में 'मात्र अचलित चेतना, वह ही मैं हूँ, ऐसा मानना -परिणमित होना, सो आत्मव्यवहार है' अर्थात्, आत्मा के आश्रय से जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रगट होता है, वह व्यवहार है।

प्रश्न 159- अज्ञानी, व्यवहार किसे कहते हैं और उसका फल क्या है ?

उत्तर - बाहरी क्रिया और शुभ विकारीभावों को व्यवहार कहता है और उसका फल, चारों गतियों का परिभ्रमण है।

प्रश्न 160- सम्यग्दर्शन होने पर, संसार का क्या होता है ?

उत्तर - जैसे -पत्थर पर बिजली पड़ने पर टूट जाने से वह फिर

जुड़ता नहीं है; उसी प्रकार सम्यग्दर्शन होने पर ज्ञानी, संसार में जुड़ता नहीं है, बल्कि संसार का नाश करके परम निर्वाण को प्राप्त करता है।

प्रश्न 161- आप प्रथम सम्यग्दर्शन की ही बात क्यों करते हो; व्रत-दान-पूजादि की बात तथा शास्त्र पढ़ने आदि की बात क्यों नहीं करते हो ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना व्रत, दान, पूजादि मिथ्या चारित्र है तथा शास्त्र पढ़ना आदि मिथ्याज्ञान है; इसलिए हम व्रत, दानादि की प्रथम बात नहीं करते, बल्कि सम्यग्दर्शन की बात करते हैं क्योंकि सम्यग्दर्शन प्राप्त होने पर जितना ज्ञान है, वह सम्यग्ज्ञान है और जो चारित्र है, वह सम्यक्चारित्र है। इसलिए प्रथम सम्यग्दर्शन की बात करते हैं। छहढाला में कहा है -

मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी, या बिना ज्ञान-चारित्रा;
सम्यक्ता न लहै, सो दर्शन, धारों भव्य पवित्रा।
'दौल' समझ सुन, चेत, सयाने, काल वृथा मत खोवै,
यह नर भव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवै॥

प्रश्न 162- शुभभाव से मोक्षमार्ग क्यों नहीं है ?

उत्तर - (1) श्री प्रवचनसार, गाथा 11 की टीका में कहा है कि 'शुद्धोपयोग, उपादेय है और शुभोपयोग, हेय है।'

(2) पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 220 में कहा है 'शुभोपयोग अपराध है।' चारों अनुयोगों में एकमात्र निज भूतार्थस्वभाव के आश्रय से ही मोक्षमार्ग और मोक्ष, भगवान ने कहा है और शुभभाव किसी भी प्रकार का हो, वह तो संसार का ही कारण है। इसलिए शुभभाव से कभी भी मोक्षमार्ग और मोक्ष नहीं होता है।

प्रश्न 163- मिश्रदशा क्या है ?

उत्तर - जिसने अपने स्वभाव का आश्रय लिया, उसे मोक्ष तो नहीं हुआ, परन्तु मोक्षमार्ग हुआ।

(1) मोक्षमार्ग में कुछ वीतराग हुआ है, कुछ सराग रहा है।

(2) जो अंश वीतराग हुए, उनसे संवर-निर्जरा है और जो अंश सराग रहे, उनसे बन्ध है। ऐसे भाव को मिश्रदशा कहते हैं।

प्रश्न 164- मिश्रदशा में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जो शुद्धि प्रगटी, वह नैमित्तिक है और भूमिकानुसार राग, वह निमित्त है।

प्रश्न 165- क्या जाने तो धर्म की प्राप्ति हो ?

उत्तर - (1) मेरा स्वभाव अनादि-अनन्त एकरूप है।

(2) मेरी वर्तमान पर्याय में मेरे ही अपराध से एक समय की भूल है। उस भूल में निमित्तकारण द्रव्यकर्म-नोकर्म हैं; मैं नहीं हूँ। ऐसा जानकर, अपने अनादिअनन्त एकरूप स्वभाव का आश्रय ले, तो धर्म की प्राप्ति करके क्रम से मोक्ष का पथिक बने ?

जिन, जिनवर, जिनवरवृषभ कथित
मोक्षमार्ग अधिकार सम्पूर्ण

9

मोक्षमार्ग सम्बन्धी प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1- अशुभकर्म बुरा; शुभकर्म अच्छा, यह मान्यता कैसी है ?

उत्तर - यह मान्यता अनन्त संसार का कारण है (1) क्योंकि 'जैसे अशुभकर्म जीव को दु:खी करता है; उसी प्रकार शुभकर्म भी जीव को दु:खी करता है। कर्म में तो भला कोई नहीं है। अपने मोह को लिए हुए मिथ्यादृष्टि जीव, कर्म को भला करके मानता है।'

(श्रीसमयसार कलश टीका, कलश 100)

(2) 'शुभ अशुभ बन्ध के फल मञ्झार, रति अरति करै निजपद विसार' छहढाला में भी लिखा है कि जिसको अपना पता नहीं, ऐसा मिथ्यादृष्टि जीव, शुभ के फल को अच्छा और अशुभ के फल को बुरा मानता है।

(3) जो शुभ-अशुभ में अन्तर मानता है, वह जीव, घोर-अपार संसार में भ्रमण करता है। *(श्रीप्रवचनसार, गाथा 77)*

(4) पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 14 में ऐसी मान्यता को संसार का बीज कहा है

प्रश्न 2- शुभोपयोग से कर्म की निर्जरा होकर, मोक्ष की प्राप्ति होती है, यह मान्यता कैसी है ?

उत्तर - यह मान्यता श्वेताम्बरों की है और जो दिगम्बरधर्मी कहलाने पर भी, शुभोपयोग से संवर, निर्जरा और मोक्ष मानते हैं, वे

दिगम्बरधर्म की आड़ में श्वेताम्बरमत की पुष्टि करनेवाले, संसार के पात्र हैं।

(1) 'कोई जीव शुभोपयोगी होता हुआ यतिक्रिया में मग्न होता हुआ, शुद्धोपयोग को नहीं जानता, केवल यतिक्रियामात्र में मग्न है। वह जीव ऐसा मानता है मैं तो मुनीश्वर हूँ, हमको विषय-कषाय सामग्री निषिद्ध है। ऐसा जानकर, विषय-कषाय सामग्री को छोड़ता है, आपको धन्यपना मानता है, मोक्षमार्ग मानता है। सो विचार करने पर ऐसा जीव, मिथ्यादृष्टि है, कर्मबन्ध को करता है; कोई भलापन तो नहीं है। *[श्रीसमयसार, कलश टीका, कलश 101]*

(2) शुभभाव से संवर-निर्जरा माननेवाले को समयसार, गाथा 154 में 'नपुंसक' कहा है। गाथा 156 में अज्ञानी लोग व्रत-तपादि को मोक्ष का हेतु मानते हैं, उसका निषेध किया है।

प्रश्न 3- शुभ-अशुभक्रिया आदि बन्ध का ही कारण है, मोक्ष का कारण नहीं है, ऐसा श्री राजमलजी ने कहीं कहा है ?

उत्तर - (1) 'जो शुभ-अशुभक्रिया, सूक्ष्म-स्थूल अन्तर्जल्प -बहिर्जल्परूप जितना विकल्परूप आचरण है, वह सब कर्म का उदयरूप परिणमन है; जीव का शुद्ध परिणमन नहीं है; इसलिए समस्त ही आचरण, मोक्ष का कारण नहीं है; बन्ध का कारण है।'

(2) 'यहाँ कोई जानेगा कि शुभ-अशुभक्रियारूप जो आचरणरूप चारित्र है, सो करने योग्य नहीं है; उसी प्रकार वर्जन करने योग्य भी नहीं है ? उत्तर दिया है - वर्जन करने योग्य है। कारण कि व्यवहारचारित्र होता हुआ दुष्ट है, अनिष्ट है, घातक है; इसलिए विषय-कषाय के समान, क्रियारूपचारित्र निषिद्ध है।'

[श्रीसमयसार-कलश-टीका, कलश 107 तथा 108]

प्रश्न 4- श्री राजमलजी ने कलश-टीका, कलश 102 में

ऐसा क्यों कहा है कि 'शुभकर्म के उदय में उत्तम पर्याय होती है, वहाँ धर्म की सामग्री मिलती है; उस धर्म की सामग्री से जीव, मोक्ष जाता है; इसलिए मोक्ष की परिपाटी शुभकर्म है' ?

उत्तर – अरे भाई तुमने कलश-टीका में श्री राजमलजी के प्रश्न को भी अच्छी तरह नहीं पढ़ा, ऐसा लगता है क्योंकि प्रश्न को पूरा करने से पहले लिखा है 'ऐसा कोई मिथ्यावादी मानता है और उसको उत्तर दिया है। कोई कर्म, शुभरूप, कोई कर्म, अशुभरूप ऐसा भेद तो नहीं है .....ऐसा अर्थ निश्चित हुआ कि कोई कर्म भला, कोई कर्म बुरा – ऐसा तो नहीं; सब ही कार्य दु:खरूप हैं।'

प्रश्न 5- क्या मोक्षार्थी को अल्प भी राग नहीं करना चाहिए ?

उत्तर – (1) 'मोक्षाभिलाषी जीव, सर्वत्र किञ्चित् भी राग नहीं करो' – ऐसा करने से 'वह भव्य जीव, वीतराग होकर भवसागर को तरता है।' *[श्रीपञ्चास्तिकाय, गाथा 172]*

(2) राग कैसा भी हो, त्याज्य ही है क्योंकि अनर्थ सन्तति का मूल, रागरूप क्लेश का विलास ही है। *[श्रीपञ्चास्तिकाय, गाथा 168]*

(3) ज्ञानी का अस्थिरता सम्बन्धी राग भी मोक्ष का घातक, दुष्ट, अनिष्ट और बन्ध का कारण है।

(4) मिथ्यादृष्टि अणुव्रत-महाव्रतादि को उपादेय मानता है, इसलिए उसका शुभभाव परम्परा निगोद का कारण है।

(5) ज्ञानी का राग, पुण्य बन्ध का कारण है और मिथ्यादृष्टि का शुभराग, पापबन्ध का कारण है।

[श्रीपरमात्मप्रकाश, अध्याय प्रथम, गाथा 98]

प्रश्न 6- व्यवहार बढ़े तो निश्चय बढ़े, क्या यह कहना ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल गलत है, क्योंकि : (1) द्रव्यलिङ्गी को व्यवहाराभास जिनागम अनुसार होता है, परन्तु निश्चय होता ही नहीं है।

(2) 8, 9, 10 गुणस्थानों में निश्चय है; वहाँ पर देव-गुरु -शास्त्र का राग, अणुव्रत, महाव्रतादि का राग नहीं है।

(3) केवली भगवान को निश्चय है और व्यवहार है ही नहीं। इसलिए व्यवहार हो, तो निश्चय बढ़े - यह अन्य मिथ्यादृष्टियों की मान्यताएँ हैं; जिन-जिनवर-जिनवर-वृषभों की मान्यता नहीं है।

प्रश्न 7- जो जीव, जैनधर्म का सेवन आजीविका के लिए करते हैं, उन्हें भगवान ने क्या-क्या कहा है ?

उत्तर - (1) जैनधर्म का सेवन तो संसार के नाश के लिए किया जाता है, जो उसके द्वारा सांसारिक प्रयोजन साधना चाहते हैं, वह बड़ा अन्याय करते हैं; इसलिए वे तो मिथ्यादृष्टि हैं ही।

(2) सांसारिक प्रयोजनसहित जो धर्म साधते हैं, वे पापी भी हैं और मिथ्यादृष्टि तो हैं ही।

(3) जो जीव प्रथम से ही सांसारिक प्रयोजनसहित भक्ति करता है, उसके पाप का ही अभिप्राय हुआ।

[श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 219 से 222]

(4) इस प्रयोजन के हेतु अरहन्तादिक की भक्ति करने से भी तीव्र कषाय होने के कारण, पापबन्ध ही होता है।

[श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 8]

(5) शास्त्र बाँचकर, पूजा करके, आजीविका आदि लौकिक -कार्य साधना, अनन्त संसार का कारण है।

प्रश्न 8- क्या बाह्य सामग्री से सुख-दुःख होता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि आकुलता का घटना-बढ़ना रागादिक कषाय घटने-बढ़ने के अनुसार है; इसलिए बाह्य सामग्री से सुख-दुःख मानना, मात्र भ्रम ही है।

प्रश्न 9- क्रोधादिक क्यों उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर - पदार्थ अनिष्ट-इष्ट भासित होने से, अज्ञानियों को क्रोधादिक उत्पन्न होते हैं।

प्रश्न 10- क्रोधादिक के अभाव के लिए क्या करें ?

उत्तर - जब तत्त्वज्ञान के अभ्यास से कोई पदार्थ इष्ट-अनिष्ट भासित ना हो, तब स्वयमेव ही क्रोधादि उत्पन्न नहीं होते, तब सच्चे धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 11- क्या शुभभाव, परम्परा मोक्ष का कारण है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; क्योंकि शुभभाव किसी का भी हो, वह बन्ध का ही कारण है।

(अ) जैसे-सातवें गुणस्थान की दशा, साक्षात् मोक्ष का कारण हो तो इसकी अपेक्षा छठे गुणस्थान में जो तीन चौकड़ी कषाय के अभावरूप शुद्धपरिणति है, वह परम्परा मोक्ष का कारण है।

(आ) शुद्धपरिणति अकेली नहीं होती, उसके साथ भुमिकानुसार शुभभाव भी होता है, उसमें शुद्धपरिणति, संवर-निर्जरारूप है और राग, बन्धरूप है। ज्ञानी उस शुभभाव को हेयरूप श्रद्धा करता है और नियम से उसका अभाव करके शुद्धदशा में आ जाता है; इसलिए शास्त्रों में कहीं-कहीं ज्ञानी के शुभभावों के अभाव को परम्परा मोक्ष का कारण कहा है। कहने के लिए मोक्ष का कारण है, वास्तव में बन्धरूप ही है।

प्रश्न 12- ज्ञानियों को बीच में व्यवहार क्यों आता है ?

उत्तर – (अ) जैसे – देहली जाते हुए रास्ते में स्टेशन पड़ते हैं, वे छोड़ने के लिए हैं।

(आ) बादाम में जो छिलका है और गन्ने में जो छिलका है, वह फेंकने के लिए है; उसी प्रकार ज्ञानियों को जो व्यवहार बीच में आता है, वह फेंकने के लिए है क्योंकि ज्ञानी उसे हलाहल जहर, अर्थात् मोक्ष का घातक मानते हैं; इसलिए सम्पूर्ण व्यवहार अभूतार्थ है।

प्रश्न 13– सिद्धभगवान में जितनी शक्तियाँ हैं, उतनी ही प्रत्येक आत्मा में भी हैं, परन्तु पहिचान बिना उनकी कोई कीमत नहीं है, ऐसा क्यों कहा जाता है ?

उत्तर – भगवान की वाणी में आया है कि प्रत्येक आत्मा, सिद्धभगवान के समान चैतन्यरत्नाकर है। प्रत्येक के पास अनन्त गुणों का भण्डार है। उसकी एक-एक निर्मलपर्याय की अपार कीमत है। दुनिया के वैभव से उसकी बराबरी नहीं हो सकती, परन्तु अज्ञानी अपने को हीन मानकर, पुण्य से भीख माँगता है। अज्ञानी के पास भी कीमती गुणों का भण्डार है, परन्तु उसकी पहिचान ना होने से चारों गतियों में घूमता हुआ, अनन्त बार निगोद में चला गया।

जैसे – कोई मनुष्य अपने को गरीब मानकर, सेठ के पास भीख माँगने गया। सेठ उसके पास रखे हुए रत्न का प्रकाश देखकर आश्चर्यचकित हुआ और बोला, अरे भाई! तू भीख क्यों माँगता है, तू तो गरीब नहीं है। देख, तेरे पास जो यह रत्न है, यह महान कीमत का है। मेरे पास एक हजार सोने की मोहरें हैं। तू उन सब मोहरों को ले ले और मुझे यह रत्न दे दे। वह गरीब मनुष्य आश्चर्यचकित हुआ कि मेरे पास इतना कीमती रत्न है ? सुनकर आनन्दित हुआ। सेठ का उपकार मानकर बोला, सेठजी यह रत्न तो हमारे घर में बहुत समय से पड़ा था, परन्तु मुझे इसकी खबर नहीं थी; इसी प्रकार वर्तमान में

सच्चा दिगम्बर-धर्म मिलने पर भी अज्ञानी जीव, संयोग और संयोगीभावों में पागल होकर दौड़ा-दौड़ा फिर रहा है। महाभाग्य से वर्तमान में पूज्य गुरुदेवश्री का समागम मिला। उन्होंने कहा, अरे जीव! तू क्यों संयोग और संयोगीभावों में पागल हो रहा है। तेरे पास अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड चैतन्यरत्नाकर है। तेरे चैतन्यरत्नाकर के सामने, संसार का वैभव, तृणसमान है, तेरे चैतन्यरत्नाकर की अपार कीमत है। तू अपने चैतन्यरत्नाकर के सन्मुख हो, तो तुझे अपने वैभव की पहिचान हो। इतना सुनते ही अनादिकाल का अज्ञानी आश्चर्यचकित हो, स्वसन्मुख हुआ। अपनी आत्मा में अमूल्य वैभव है, उसे जानकर आनन्दित हुआ। तब पूज्य गुरुदेव के प्रति बहुमान आया और बोला, हे पूज्य गुरुदेव! ऐसा आत्मस्वभाव तो अनादिकाल से मेरे पास ही था, परन्तु मुझे इसकी खबर नहीं थी। इसलिए मैं संयोग और संयोगीभावों में पागल हो रहा था। अब आपकी परमकृपा से मुझे अपने चैतन्यरत्नाकर का भान हुआ, अनन्त संसार मिटा, आप धन्य हैं! धन्य हैं! यद्यपि आत्मा में अनन्त शक्तियाँ हैं फिर भी उसकी पहिचान ना होने से, उनकी कोई कीमत नहीं है - ऐसा भगवान की वाणी में आया है।

प्रश्न 14- सिद्धसमान स्वयं चैतन्य रत्नाकर होने पर भी, जो स्वयं की पहिचान नहीं करता, और संसार के कार्यों में अपनी चतुराई को लगाता है - वह जीव किसके योग्य है?

उत्तर - जैसे- एक बार राजा के दरबार में कोई परदेशी एक हीरा लेकर आया और राजा से कहा, आप अपने जौहरियों से इस हीरे की कीमत कराओ। शहर के तमाम जौहरी इकठ्ठे हुए, परन्तु उस हीरे की कीमत ना बता सके। राजा को बड़ी चिन्ता हुई कि इससे तो हमारे राज्य की बदनामी होगी। आखिरकार एक अनुभवी वृद्ध

जौहरी को बुलाया। उस जौहरी ने हीरे को देखकर उसका सही मूल्य बता दिया। तब राजा ने परदेशी से पूछा, क्या तुम्हारे हीरे की कीमत ठीक बतायी है? उसने कहा, महाराज बिल्कुल ठीक बतायी है। राजा ने प्रसन्न होकर दिवान को हुक्म दिया कि जौहरी को इनाम दो। दिवान, धर्म को जाननेवाला था। उसने सोचा कि अब वृद्ध के लिए हित का अवकाश है। दिवान ने जौहरी से कहा, जौहरी जी! तमाम जिन्दगी हीरे परखने में ही बितायी, अब आखिरी वक्त आया है, तब भी तुम्हें यह नहीं सूझता कि मैं अपने चैतन्य हीरे की पहिचान कर लूँ! इतना सुनते ही जौहरी की आत्मा जाग उठी और दिवानजी का उपकार माना। जब दिवानजी ने इनाम माँगने को कहा तो जौहरी ने कहा, कल मागूँगा। अगले दिन जौहरी ने राजा से कहा, मैं इनाम के लायक नहीं हूँ। यदि आप इनाम देना ही चाहते हैं तो मेरे सिर पर सात जूते लगवाओ, क्योंकि मैंने अपने चैतन्य हीरे की पहिचान नहीं की और तमाम उम्र हीरों की पहिचान में ही बितायी। उसी प्रकार सर्वज्ञ राजा के दिवान के रूप में पूज्य गुरुदेव कहते हैं कि अरे जीव! बाहर के पदार्थों के जानने में अनन्त काल गंवाया है और अनन्त शक्तिसम्पन्न अपने चैतन्य हीरे की पहिचान नहीं की, तो जौहरी की भाँति तू सात जूतों के लायक है। इसलिए हे भव्य! तू जाग और अपने चैतन्य हीरे की अमूल्य महिमा है, ऐसा जानकर तत्काल धर्म की प्राप्ति कर।

प्रश्न 15- हमें तो ज्ञान का अल्प उघाड़ है। इस कम ज्ञान के उघाड़ में चैतन्य हीरे की पहिचान कैसे हो सकती है, हमें तो ऐसा उपाय बताओ जिससे कम उघाड़ में चैतन्य हीरे की पहिचान हो जावे?

उत्तर - भगवान की वाणी में आया है कि प्रत्येक संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव को इतना ज्ञान का उघाड़ तो है ही कि उस ज्ञान के सम्पूर्ण

उघाड़ को यदि अपने चैतन्य हीरे की तरफ लगा दे, तो तत्काल सम्यग्दर्शनादिक की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष का पथिक बने। जैसे – बम्बई के बाजार में एक होलसेल खिलौनों की दुकान थी। उस खिलौनों की दुकान के सामने एक लड़का एक खिलौने को देख-देखकर प्रसन्न हो रहा था। व्यापारी ने लड़के से पूछा, क्या चाहिए? लड़के ने खिलौने के लिए इशारा किया। व्यापारी ने कहा, इसकी कीमत पाँच रुपया है। लड़के ने कहा, मेरे पास तो कुल दस पैसे हैं। दुकानदार ने प्रसन्न होकर दस पैसे लेकर खिलौना दे दिया। लड़का बहुत प्रसन्न हुआ और खिलौना लेकर घर पहुँचा। उसके पिता ने पूछा, यह खिलौना कितने का है और कहाँ से लाया है? उसने बता दिया। लड़के का पिता उस दुकानदार के पास गया और दो सौ खिलौनों का आर्डर लिखा दिया। दुकानदार ने तुरन्त एक हजार का बिल बनाकर उसके हाथ में दे दिया। उसने कहा, अभी-अभी तुमने हमारे लड़के को यह खिलौना दस पैसे का दिया है और हमसे पाँच रुपया क्यों माँगते हो? व्यापारी ने कहा, अरे भाई! उसके पास कुल जमा पूँजी दस पैसा ही थी, उसने सब जमापूँजी इस खिलौने को खरीदने में लगा दी। तुम तो बेचने को ले जा रहे हो और तुम्हारे पास तो लाखों रुपया है, क्या तुम हमें सब रुपया दे दोगे? उसी प्रकार वर्तमान में पूज्य गुरुदेव कहते हैं कि यदि जीव, अपने मति-श्रुतज्ञान के सम्पूर्ण उघाड़ को अपने चैतन्यरत्नाकर की ओर लगा दे तो उसे तत्काल धर्म की प्राप्ति हो। परन्तु जो जीव अपने मति-श्रुतज्ञान के उघाड़ को घर के कार्यों में, लौकिक पढ़ाई में, व्यापार-धन्धे इत्यादि अशुभभावों में और व्रत-शील-संयम-अणुव्रत-महाव्रतादि शुभभावों में ही लगा देता है, वह आत्मधर्म की प्राप्ति नहीं कर सकता।

प्रश्न 16- निर्जरा किसे कहते हैं?

उत्तर – अखण्डानन्द शुद्ध आत्मस्वभाव के बल से आँशिक शुद्धि की वृद्धि और अशुद्ध (शुभाशुभ इच्छारूप) अवस्था की आँशिक हानि करना, वह भावनिर्जरा है और उसका निमित्त पाकर जड़कर्म का अंशत: खिर जाना, वह द्रव्यनिर्जरा है।

प्रश्न 17– निर्जरा कितने प्रकार की है ?

उत्तर – चार प्रकार की है : सकामनिर्जरा, अकामनिर्जरा, सविपाकनिर्जरा और अविपाकनिर्जरा।

प्रश्न 18– सकामनिर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर – आत्मा, शुद्ध चिदानन्द भगवान है, सत्य पुरुषार्थपूर्वक उसके सन्मुख होकर शुद्धि की वृद्धि होना, सकामनिर्जरा है।

प्रश्न 19– अकामनिर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर – बाह्य प्रतिकूल संयोग होने के समय मन्दकषायरूप भाव का होना, अकामनिर्जरा है। जैसे – छोटी उम्र में कोई विधवा हो जावे, तब मन्दकषाय रक्खे, ब्रह्मचर्य से रहे; खाने को अनाज ना मिले, उस समय तीव्र आकुलता ना करे, किन्तु कषाय मन्द रक्खे; किसी को जेल हो जावे, वहाँ तीव्र आकुलता न करे, किन्तु कषाय मन्द रक्खे, इत्यादि यह सब अकामनिर्जरा है। इससे पाप की निर्जरा होती है और देवादि पुण्य का बन्ध होता है।

प्रश्न 20– सविपाकनिर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर – संसारी जीवों को कर्म के उदयकाल में समय-समय अपनी स्थिति पूर्ण होने पर जो कर्म के परमाणु खिर जाते हैं, उसे सविपाकनिर्जरा कहते हैं।

प्रश्न 21– अविपाकनिर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर – सच्ची दृष्टि होने पर, आत्मा के पुरुषार्थ द्वारा उदयकाल

प्राप्त होने के पहले कर्मों का खिर जाना, अविपाकनिर्जरा है।

प्रश्न 22- अज्ञानी को कौन-कौन सी निर्जरा हो सकती है ?

उत्तर - अज्ञानी को चाहे वह द्रव्यलिङ्गी मुनि हो, उसे सविपाक -निर्जरा और अकामनिर्जरा ही हो सकती है।

प्रश्न 23- ज्ञानी को कितने प्रकार की निर्जरा हो सकती है ?

उत्तर - ज्ञानी को चारों प्रकार की निर्जरा हो सकती है।

प्रश्न 24- मिथ्यादृष्टि को कुछ नहीं करना हो, तब वह अपने को और दूसरों को धोखा देने के लिए श्रद्धान-ज्ञान और चारित्र की अपेक्षा किस-किस को याद करता है ?

उत्तर - (1) तत्त्वश्रद्धान की बात आवे, तब तिर्यञ्चों को याद करता है।

(2) ज्ञान की बात आवे, तब शिवभूति मुनि को याद करता है,

(3) चारित्र की बात आवे, तब भरतजी को याद करता है - यह सब स्वच्छन्दता की बातें हैं।

प्रश्न 25- श्रद्धा किसको स्वीकार करती है और किसको स्वीकार नहीं करती ?

उत्तर - श्रद्धा, एकमात्र त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव को ही स्वीकारती है; परको, द्रव्यकर्मों को, विकारीभावों को, अपूर्ण और पूर्ण शुद्धपर्याय को तथा गुणभेद को स्वीकार नहीं करती है, अर्थात् इनका आश्रय नहीं लेती है। साधक ज्ञानी को राग-द्वेष है ही नहीं; ऐसा जो कहा जाता है, वह श्रद्धा की अपेक्षा जानना चाहिए।

प्रश्न 26- सम्यग्दर्शन होने पर सम्यग्ज्ञान क्या जानता है ?

उत्तर - जैसे - दौज का चन्द्रमा, दौज के प्रकाश को बताता है, जितना प्रकाश बाकी है, उसे बताता है; पूर्ण प्रकाश कितना है,

उसको बताता है, और त्रिकाल पूर्ण प्रकाशमय चन्द्रमा कैसा होना चाहिए, उसे भी बताता है; उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि का ज्ञान, जितनी शुद्धि प्रगटी है, उसे जानता है; जितनी अशुद्धि बाकी है, उसे जानता है; शुद्धि की पूर्णता किस प्रकार की होती है, उसे जानता है, और त्रिकाली शुद्ध आत्मा जिसके आश्रय से शुद्धि आती है, उसे भी जानता है।

प्रश्न 27- चारित्र की अपेक्षा सम्यग्दृष्टि क्या जानता है ?

उत्तर - जितनी शुद्धि प्रगटी है, वह मोक्षमार्गरूप है और जितनी अशुद्धि है, वह सब बन्धरूप है; अल्पबन्ध का कारण है; ज्ञान का ज्ञेय है; हेय है।

प्रश्न 28- चारों अनुयोगों का तात्पर्य क्या है, इसका दृष्टान्त देकर समझाओ ?

उत्तर - अरे भाई! चारों अनुयोगों की कथनशैली में फेर होने पर भी, सबका आशय एक है, अर्थात् वीतरागता की प्राप्ति कराना है।

(1) प्रथमानुयोग कहता है -'ऐसा था';

(2) चरणानुयोग कहता है - 'उसे छोड़ो';

(3) करणानुयोग कहता है - 'ऐसा है तो ऐसा है';

(4) द्रव्यानुयोग कहता है - 'ऐसा ही है।' दृष्टान्त के रूप में उपवास को चारों अनुयोगों पर घटाना है और उसका फल, वीतरागता है। विचारिये - (1) द्रव्यानुयोग, उपवास किसे कहता है? उप=नजदीक; वास=रहना; अर्थात् ज्ञायकस्वभावी आत्मा के नजदीक में रहना, वह उपवास है।

(2) करणानुयोग उपवास किसे कहता है? खाने का राग छोड़ा, उसे उपवास कहता है? जो अपने में वास करेगा, क्या उस समय उसे खाने का राग होगा? कभी नहीं।

(3) चरणानुयोग उपवास किसे कहता है? आहार के त्याग को उपवास कहता है। जब आत्मा में लीन होगा, तो क्या रोटी खाता हुआ दीखेगा? कभी भी नहीं। चरणानुयोग में कहा जाता है कि आहार का त्याग किया।

(4) इतना शुभभाव किया तो ऐसा पुण्यबन्ध हुआ और उसका फल अच्छा संयोग है, यह प्रथमानुयोग बताता है।

प्रश्न 29- सुभाषितरत्न-सन्दोह में उपवास किसे कहा है?

उत्तर - 'कषायविषयाहारो त्यागो तत्र विधीयते।
उपवासः सः विज्ञेयः शेषं लंघनकं विदुः।'

अर्थात्, जहाँ कषाय, विषय और आहार का त्याग किया जाता है, उसे उपवास जानना। शेष को श्रीगुरु लंघन कहते हैं।

प्रश्न 30- उपयोग शब्द कितने अर्थों में किस-किस प्रकार प्रयुक्त होता है?

उत्तर - (1) चैतन्यानुविधायी आत्मपरिणाम, अर्थात् चैतन्य-गुण के साथ सम्बन्ध रखनेवाले जीव के परिणाम को उपयोग कहते हैं;

(2) ज्ञान-दर्शनगुण को भी उपयोग कहते हैं;

(3) ज्ञान-दर्शनगुण की पर्याय को भी उपयोग कहते हैं;

(4) आत्मा के चारित्रगुण के अशुभ-शुभ और शुद्धभाव को भी उपयोग कहते हैं।

प्रश्न 31- क्या-क्या जाने तो अनन्त संसार का परिभ्रमण क्षण भर में अभाव हो जाये?

उत्तर - (1) वस्तु के स्वभाव की व्यवस्था।

(2) सर्वज्ञ का स्वीकार।

(3) प्रत्येक कार्य का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 32- आकुलता की उत्पत्ति क्यों होती है और क्या माने तो अतीन्द्रिय आनन्द की प्राप्ति हो ?

उत्तर - अपनी इच्छानुसार पर पदार्थों का परिणमन हो जाये तो हर्ष होता है, वह तो राग है और उससे आकुलता की वृद्धि होती है। ज्ञान के अनुसार सब पदार्थों का परिणमन बने तो अतीन्द्रिय आनन्द की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 33- सिद्धान्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - तीन काल और तीन लोक में जिसमें जरा भी हेर-फेर ना हो सके, उसे सिद्धान्त कहते हैं। जैसे, एक और एक दो होते हैं। आप रूस जाओ, अमेरिका जाओ, चीन जाओ, सब जगह पर एक और एक दो ही होंगे।

प्रश्न 34- जिनेन्द्रभगवान के सिद्धान्त क्या-क्या हैं, जिसमें कभी भी जरा भी हेर-फेर नहीं हो सकता है ?

उत्तर - (1) एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य से कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध किसी भी अपेक्षा नहीं है।

(2) आत्मा का सर्व पदार्थों के साथ व्यवहार से ज्ञेय-ज्ञायक-सम्बन्ध है।

(3) एकमात्र अपने भूतार्थस्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन से लेकर सिद्धदशा तक की प्राप्ति होती है; पर के, विकार के और एक समय की पर्याय के आश्रय से नहीं।

(4) कार्य हमेशा उपादान से ही होता है; निमित्त से नहीं होता। परन्तु जब-जब उपादान में कार्य होता है, वहाँ उचित निमित्त की सन्निधि होती है - ऐसा वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न 35- छह द्रव्यों का स्वभाव क्या है, इनको यथार्थ -स्वरूप समझने से हमें क्या बोधपाठ मिलता है और शान्ति की प्राप्ति कैसे हो सकती है ?

उत्तर - जाति अपेक्षा छह द्रव्यों में तीन जोड़े बनते हैं -

(1) जीव का स्वभाव जानने का है, पुद्गल का स्वभाव नहीं जानने का है; दोनों का स्वभाव एक-दूसरे के विरुद्ध है।

(2) धर्मद्रव्य, जीव-पुद्गल को चलने में निमित्त है; अधर्मद्रव्य, उनको ठहरने में निमित्त है; दोनों का स्वभाव एक-दूसरे के विरुद्ध है।

(3) आकाश का स्वभाव, तिर्यक प्रचय है; काल का स्वभाव, ऊर्ध्व प्रचय है; दोनों का स्वभाव एक-दूसरे से विरुद्ध है।

इन छह द्रव्यों का अनादि-अनन्त विरुद्ध स्वभाव होते हुए भी, एक साथ रह सकते हैं। अपने घर में यदि छह आदमी हैं, परमार्थ से सब ज्ञानस्वभावी हैं; व्यवहार से रागी हैं। अल्प काल के लिए कभी उनके साथ विरोध भी हो और यदि तू उनके साथ सुमेल से रहना नहीं जानता, तो वीतरागी कैसे बन सकेगा? विचार करो - कि अनादि-अनन्त विरुद्धस्वभावी द्रव्य, एक साथ रह सकते हैं, सो समान स्वभावी हमें रहने में क्या आपत्ति हो सकती है ? ऐसा समझे तो जीवन में शान्ति आवे।

प्रश्न 36- 'कारणशुद्धपर्याय' का विषय कैसा है ?

उत्तर - कारणशुद्धपर्याय का विषय बहुत सूक्ष्म और सरल है, परन्तु प्रत्यक्षज्ञानियों के सत्समागम से समझने योग्य है।

प्रश्न 37- अपेक्षितभाव कौन-कौन से हैं और क्या ये भाव, सम्यग्दर्शन के कारण नहीं हैं ?

उत्तर - औदयिकभाव, औपशमिकभाव, क्षायोपशमिकभाव,

क्षायिकभाव - सापेक्ष हैं; उत्पाद-व्ययवाली पर्यायरूप हैं। जैसे - समुद्र में तरङ्गें उठती हैं; उसी प्रकार आत्मा में रागादि विकारीभाव हैं अथवा उनके अभाव से प्रगट होनेवाली निर्मलपर्यायें हैं। ये सब अपेक्षितभाव हैं; क्षणिक उत्पाद-व्ययरूप हैं; इसलिए ये चारों भाव, सम्यग्दर्शन के आश्रयभूत नहीं हैं।

प्रश्न 38- कारणशुद्धपर्याय क्या है ?

उत्तर - कारणशुद्धपर्याय, अर्थात् विशेष पारिणामिकभाव, वह निरपेक्ष है। इसमें औदयिक आदि चार भावों की अपेक्षा नहीं है। अतः इसे निरपेक्षपर्याय, अर्थात् ध्रुवपर्याय भी कहते हैं। जैसे - समुद्र में पानी के दल की सपाटी एक स्वभाव है; उसी प्रकार आत्मा में 'कारणशुद्धपर्याय' है। वह सदा एक समान है। उसको औदयिक आदि चार भावों की अपेक्षा नहीं लगती है। यह आत्मा में हमेशा सदृशपने वर्तती है। यह कारणशुद्धपर्याय, प्रत्येक गुण में भी है।

प्रश्न 39- पारिणामिकभाव की पूर्णता किससे है और सम्यग्दर्शन का कारण कौन है ?

उत्तर - सामान्य पारिणामिकभाव और विशेष पारिणामिकभाव, दोनों मिलकर पारिणामिकभाव की पूर्णता है। इसे निरपेक्ष-स्वभाव, अर्थात् शुद्ध निरञ्जन एक स्वभाव, अनादिनिधनभाव भी कहते हैं। जैसे-समुद्र में पानी का दल, पानी का शीतल स्वभाव और पानी की सपाटी ये तीनों अभेदरूप वह समुद्र हैं। ये तीनों हमेशा 'ऐसे के ऐसे' ही रहते हैं; उसी प्रकार आत्मा में आत्मद्रव्य, उसके ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि गुण और उसका सदृशरूप-ध्रुव-वर्तमान, अर्थात् कारणशुद्धपर्याय ये तीनों मिलकर वस्तुस्वरूप की पूर्णता है। यही परमपारिणामिकभाव है और यही सम्यग्दर्शन का आश्रयभूत है।

प्रश्न 40- क्या द्रव्य, गुण और कारणशुद्धपर्याय भिन्न -भिन्न हैं ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; परन्तु जैसे - 'समुद्र की सपाटी' - ऐसा बोलने में आता है। फिर भी समुद्र का पानी, उसकी शीतलता और उसकी वर्तमान एकरूप सपाटी, ये तीनों भिन्न-भिन्न नहीं हैं; उसी प्रकार आत्मा में द्रव्य, गुण जो कि सामान्य पारिणामिकभाव है और उसकी कारणशुद्धपर्याय वह विशेष पारिणामिकभाव है, फिर भी द्रव्य, गुण और उसका ध्रुवरूप वर्तमान, ये तीनों, अर्थात् सामान्य पारिणामिकभाव और विशेष पारिणामिकभाव वास्तव में भिन्न-भिन्न नहीं हैं; अभेद ही है, यही वस्तुस्वभाव की पूर्णता है। इसी के आश्रय से सम्यग्दर्शन, श्रावकपना, मुनिपना, श्रेणीपना, अरहन्तपना और सिद्धपने की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 41- द्रव्य-गुण, अर्थात् सामान्य पारिणामिकभाव और कारणशुद्धपर्याय, अर्थात् विशेष पारिणामिकभाव का स्पष्टीकरण करिये ?

उत्तर - (1) द्रव्य-गुण-पर्याय में संज्ञा, लक्षणादि भेद दिखते हैं परन्तु वस्तुस्वरूप से भिन्न नहीं हैं।

(2) जो द्रव्य-गुण तथा निरपेक्ष कारणशुद्धपर्याय है, वह त्रिकाल एकरूप है। उसमें हमेशा सदृश परिणमन है। अपेक्षित-पर्यायों में उत्पाद-व्ययरूप विसदृश परिणमन है। याद रहे, संसार और मोक्ष, दोनों पर्यायों को अपेक्षितपर्यायों में गिना है।

(3) जब अपेक्षितपर्याय का झुकाव ध्रुववस्तु की तरफ-परम पारिणामिकभाव की तरफ जाता है, तब वह ध्रुववस्तु एकरूप सम्पूर्ण होने से, वहाँ उस पर्याय का उपयोग स्थिर रह सकता है, वही

धर्म की प्राप्ति है और फिर जैसे-जैसे स्थिरता बढ़ती जाती है, वैसे -वैसे उस पर्याय की निर्मलता बढ़ती जाती है।

(4) परमपारिणामिक के स्वरूप को श्रद्धा में लेना, वही सम्यग्दर्शन है।

(5) सम्यग्दर्शन के ध्येयरूप परमपारिणामिकभाव ध्रुव है और उसके साथ त्रिकाल अभेदरूप रही हुई कारणशुद्धपर्याय है, उसको 'पूजित पञ्चमभावपरिणति' कहने में आता है।

(6) द्रव्यदृष्टि में जो पर्याय गौण करने की बात आती है, वह तो औदयिक आदि चार भावों की पर्याय समझना चाहिए। पञ्चमभाव-परिणति, अर्थात् कारणशुद्धपर्याय गौण हो नहीं सकती है, क्योंकि वह तो वस्तु के साथ में त्रिकाल अभेद है। सम्यग्दर्शनादि निर्मल-पर्यायों को, द्रव्य-गुण और कारणशुद्धपर्याय - तीनों की अभेदता का ही अवलम्बन है। तीनों का भिन्न-भिन्न अवलम्बन नहीं है।

(7) धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्यों की पर्याय सदा एकरूप पारिणामिकभाव से ही वर्तती है। उसका ज्ञाता, जीव है। जीव की प्रगट पर्याय में तो संसार, मोक्ष आदि विसदृशता है परन्तु उसके अलावा एकरूप, एक सदृश निरपेक्ष 'कारण शुद्धपर्याय' हमेशा पारिणामिकभाव से वर्तती है। वह सब प्रकार की उपाधि से रहित है और सभी निर्मलपर्याय प्रगट होने का कारण है। द्रव्य के साथ में सदैव अभेदरूप वर्तती है। इस कारणशुद्धपर्याय को 'परमपारिणामिक भाव की परिणति' कह करके, ऐसा बताया है कि जैसी त्रिकाल सामान्यवस्तु है, वैसी ही विशेष भी सदृशपने वर्तती है।

(8) इस कारणशुद्धपर्याय का व्यक्तपने का भोगना होता नहीं है क्योंकि भोगना कार्य तो पर्याय में होता है। संसार-मोक्ष दोनों पर्यायें हैं।

(9) जगत में संसारपर्याय, साधकपर्याय और सिद्धपर्याय,

सामान्यरूप से अनादि-अनन्त हैं। वैसे यह कारणशुद्धपर्याय एक -एक जीव में अनादि-अनन्त सदृशरूप से है, उसका विरह नहीं है। कारणशुद्धपर्याय नयी प्रगट नहीं होती है परन्तु कारणशुद्धपर्याय की समझ करनेवाले जीव को सम्यग्दर्शनादिक कार्य, नया प्रगट होता है।

प्रश्न 42- प्रवचनसार में वर्णित 47 नयों का सच्चा ज्ञान किसको होता है और किसको नहीं होता है ?

उत्तर - ज्ञानियों को ही होता है; अज्ञानियों को नहीं होता है। क्योंकि नय, श्रुतज्ञानप्रमाण का अंश है। प्रमाणज्ञान को प्रमाणता तभी प्राप्त होती है, जब अन्तरदृष्टि में विभाव तथा पर्यायभेदों से रहित अपने शुद्धात्मरूप ध्रुवज्ञायक की श्रद्धा के अवलम्बन का जोर सतत वर्तता हो। ध्रुवज्ञायकस्वभाव के अवलम्बन का बल, ज्ञानी को सदैव वर्तता होने के कारण उसका ज्ञान, सम्यक्प्रमाण है और ज्ञानी को ही क्रियानय, ज्ञाननय, व्यवहारनय तथा निश्चयनयादि नयों द्वारा वर्णित धर्मों का सच्चा ज्ञान होता है। अज्ञानी मिथ्यादृष्टियों को नहीं होता है क्योंकि अज्ञानी को निज शुद्धात्मरूप ध्रुवज्ञायक-स्वभाव की प्रतीति ना होने से, उसका ज्ञान अप्रमाण है, मिथ्या है।

प्रश्न 43- ज्ञानी की दशा कैसी होती है ?

उत्तर - (1) ज्ञानी की परिणति सहजरूप होती है। समय -समय भेदज्ञान को याद करना नहीं पड़ता। परन्तु ज्ञानी को तो सहजरूप परिणमन हो गया है, जिससे आत्मा में एक धारा परिणमन हुआ ही करता है।

(2) जिसको अपना अनुभव हो जाता है, वह सब जीवों को चैतन्यमयी भगवान ही देखता है।

(3) ज्ञानी की दृष्टि अपने स्वभाव पर ही होती है। स्वानुभूति के समय या सविकल्पदशा के समय उपयोग बाहर हो तो भी दृष्टि, स्वभाव से छूटती नहीं है।

(4) जैसे - वृक्ष का मूल पकड़ने से सब हाथों में आ जाता है; वैसे ही ज्ञायक पर दृष्टि जाते ही सब हाथ में आ जाता है। जिसने मूलस्वभाव को दृष्टि में ले लिया, उसे हर प्रसङ्ग में ही शान्ति वर्तेगी और ज्ञाता-दृष्टारूप ही रहेगा।

(5) जैसे - आकाश में पतङ्ग उड़ती है, परन्तु डोरा हाथ में ही रहता है; उसी प्रकार विकल्प आते हैं, परन्तु ज्ञानी की दृष्टि अपने एक चैतन्यस्वभाव पर ही रहती है।

(6) ज्ञानियों को अस्थिरता सम्बन्धी राग, काले सर्प जैसा लगता है क्योंकि ज्ञानी, विभावभावों में होने पर भी विभावभावों को अपने से पृथक जानता है।

(7) वर्तमान काल में कोई सम्यक्त्व प्राप्त करता है, यह 'अचम्भा है' क्योंकि वर्तमान में कोई बलवान योग देखने में नहीं आता है। एकमात्र कहीं-कहीं ही सम्यक्दृष्टि का योग है।

[परमात्मप्रकाश, अध्याय दूसरा, श्लोक 139]

(8) सम्यग्दृष्टि को ज्ञान-वैराग्य की शक्ति प्रगट हुई है। वह गृहस्थाश्रम में होने पर भी संसार के कार्यों में खड़ा हुआ दिखे, परन्तु उसमें लिप्त नहीं होता है, निर्लेप रहता है क्योंकि ज्ञानधारा और उदयधारा का परिणमन पृथक्-पृथक् है। अस्थिरता के राग का ज्ञानी, ज्ञाता रहता है।

(9) जैसे-मुसाफिर एक नगर से, दूसरे नगर जाता है। बीच के नगर छोड़ता जाता है, उनमें रुकता नहीं है। उसी प्रकार साधकदशा

में शुभाशुभभाव बीच में आते हैं, ज्ञानी उन्हें छोड़ता जाता है, उनमें रुकता नहीं है।

(10) ज्ञानी की दृष्टि एक समय भी स्वभाव से हटती नहीं है। यदि एक समयमात्र भी स्वभाव से दृष्टि हट जावे तो अज्ञानी हो जाता है।

प्रश्न 44- अरि-रज-रहस का क्या अर्थ है और किस शास्त्र में यह अर्थ किया है ?

उत्तर - अरि=मोहनीयकर्म। रज=ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीय। रहस=अन्तराय। यह अर्थ वृहद् द्रव्यसंग्रह, गाथा 50 की टीका में तथा चारित्र पाहुड़, गाथा 1-2 की टीका में किया है।

प्रश्न 45- परमात्मप्रकाश, प्रथम अधिकार, गाथा 7 में किसको उपादेय और किसको त्यागनेयोग्य कहा है ?

उत्तर - (1) पाँच अस्तिकायों में निजशुद्ध जीवास्तिकाय को;

(2) षट्द्रव्यों में, निज शुद्धद्रव्य को;

(3) सप्त तत्त्वों में, निज शुद्धजीवतत्त्व को;

(4) नव पदार्थों में, निज शुद्धजीवपदार्थ को उपादेय कहा है; अन्य सब त्यागने योग्य है - ऐसा कहा है।

प्रश्न 46- परमात्मप्रकाश, 12वीं गाथा की टीका में क्या बताया है ?

उत्तर - स्व-संवेदनज्ञान, प्रथम अवस्था में चौथे-पाँचवें गुणस्थानवाले गृहस्थ को भी होता है।

प्रश्न 47- परमात्मप्रकाश, 23 वें श्लोक में क्या बताया है ?

उत्तर - केवली की दिव्यध्वनि, महामुनियों के वचनों तथा इन्द्रिय-मन से भी शुद्धात्मा जाना नहीं जाता है।

प्रश्न 48- परमात्मप्रकाश, 34 वें श्लोक में क्या बताया है ?

उत्तर - इस देह में रहता हुआ भी, देह को स्पर्श नहीं करता, उसी को तू परमात्मा जान।

प्रश्न 49- परमात्म प्रकाश, 68 वें श्लोक में क्या बताया है ?

उत्तर - प्रत्येक भगवान आत्मा, उत्पाद-व्ययरहित, बन्ध -मोक्ष की पर्याय से रहित और बन्ध-मोक्ष के कारण से रहित है। शुद्ध निश्चयनय से नित्यानन्द ध्रुव आत्मा है। वह भगवान आत्मा, उत्पन्न नहीं होता, अर्थात् उत्पाद की पर्याय में नहीं आता; मरता नहीं, अर्थात् व्यय में भी नहीं आता। एकेन्द्रिय की पर्याय हो या सिद्ध की पर्याय हो, ध्रुव भगवान तो सदा ज्ञानानन्दरूप ही रहता है।

प्रश्न 50- परमात्मप्रकाश, अध्याय दो, गाथा 63 में क्या बताया है ?

उत्तर - यह जीव, पाप के उदय से नरकगति और तिर्यञ्चगति पाता है; पुण्य से देव होता है, पुण्य और पाप दोनों के मेल से मनुष्यगति को पाता है और पुण्य-पाप दोनों के ही नाश होने से मोक्ष पाता है - ऐसा जानो।

प्रश्न 51- मुमुक्षु को क्या जानना आवश्यक है ?

उत्तर - (1) मुझ जीवतत्त्व का, दूसरे द्रव्यों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

(2) मुझ जीवतत्त्व से विकार अत्यन्त भिन्न है।

(3) मुझ जीवतत्त्व से निर्मलपर्याय भी भिन्न है क्योंकि द्रव्य, पर्याय को स्पर्शता नहीं है और पर्याय, मुझ जीवतत्त्व को स्पर्शती नहीं है।

(4) द्रव्य का वेदन नहीं होता है; वेदन तो पर्याय का है।

प्रश्न 52- ज्ञानियों को पर की महिमा कैसे उड़ जाती है ?

उत्तर - जैसे-गाय-भैंस आदि जानवरों का गोबर मिलने पर, गरीब स्त्रियाँ प्रसन्न हो जाती हैं और धन-वैभव मिलने पर सेठ प्रसन्न हो जाता है, परन्तु निश्चय से गोबर और धनादि में जरा भी अन्तर नहीं है; उसी प्रकार ज्ञानी को अपने चैतन्यनिधान को देखते ही, बाहर के कहे जानेवाले निधानों की और विकारीभावों की महिमा उड़ जाती है।

प्रश्न 53- ज्ञानी, दूसरे को अपना नाथ क्यों नहीं बनाता है ?

उत्तर - जिसे अपने चैतन्यस्वभाव के साथ प्रेम है, ऐसा सम्यग्दृष्टि पञ्च परमेष्ठी के साथ भी प्रेमगाँठ बाँधता नहीं है, क्योंकि अपनी आत्मा में अनन्त सिद्धदशा विराज रही हैं, अर्थात् अनन्त परमात्मादशा जिसके ध्रुवपद में पड़ी हैं, ऐसा ज्ञानी आत्मा, दूसरे को अपना नाथ क्यों बनावें ? कभी भी न बनावे।

प्रश्न 54- देव-गुरु-शास्त्र क्या बताते हैं ?

उत्तर - जिसे अपनी आत्मा की महिमा आयी, उसी में देव -शास्त्र-गुरु की महिमा आ जाती है और जिसे निज आत्मा की महिमा नहीं आयी, उसे देव-शास्त्र-गुरु की महिमा भी नहीं आ सकती है।

प्रश्न 55- जैन का सच्चा संस्कार क्या है ?

उत्तर - राग से भिन्न चैतन्य को मानना, वह ही जैन का सच्चा संस्कार है।

प्रश्न 56- नियमसार में आश्रय करनेयोग्य द्रव्य कैसा बताया है ?

उत्तर - (1) केवलज्ञानादि पूर्ण निर्मलपर्याय,

(2) मति-श्रुतज्ञानादि अपूर्णपर्याय,

(3) अगुरुलघुत्व की पर्याय,

(4) नर-नारकादि पर्यायसहित होने पर भी, इन चारों प्रकार की पर्यायों से रहित, ऐसे शुद्धजीवतत्त्व को - ज्ञायकतत्त्व को सकल अर्थ की सिद्धि के लिए, अर्थात् मोक्ष की सिद्धि के लिए नमस्कार करता हूँ-भजता हूँ, अर्थात् शुद्धजीवतत्त्व में एकाग्र होता हूँ।

प्रश्न 57- परमात्मप्रकाश, प्रथम अध्याय के श्लोक 43 में कैसा द्रव्य आश्रय करने योग्य बताया है ?

उत्तर - 'यद्यपि पर्यायार्थिकनयकर उत्पाद-व्यय सहित है, तो भी द्रव्यार्थिकनयकर उत्पाद-व्यय रहित है; सदा ध्रुव (अविनाशी) ही है। वही परमात्मा, निर्विकल्प समाधि के बल से तीर्थङ्करदेवों ने देह में भी देख लिया है।'

प्रश्न 58- परमात्मप्रकाश, प्रथम अध्याय के सातवें श्लोक की टीका में कैसा द्रव्य आश्रय करने योग्य बताया है ?

उत्तर - 'अनुपचरित, अर्थात् जो उपचरित नहीं है, इसी से अनादि सम्बन्ध है परन्तु असद्भूत (मिथ्या) है, ऐसा व्यवहारनयकर द्रव्यकर्म, नोकर्म का सम्बन्ध होता है, उससे रहित और अशुद्ध निश्चयकर रागादि का सम्बन्ध है, उससे तथा मतिज्ञानादि विभावगुण के सम्बन्ध से रहित और नर-नारकादि चतुर्गतिरूप विभावपर्यायों से रहित, ऐसा जो चिदानन्दचिद्रूप एक अखण्डस्वभाव शुद्धात्मतत्त्व है, वही सत्य है। उसी को परमार्थरूप समयसार कहना चाहिए। वही सर्व प्रकार से आराधनेयोग्य है।'

प्रश्न 59- परमात्मप्रकाश, अध्याय एक के श्लोक 65 वें में कैसा द्रव्य आश्रय करने योग्य बताया है ?

उत्तर - 'यहाँ जो शुद्ध निश्चयकर बन्ध-मोक्ष का कर्ता नहीं है, वही शुद्धात्मा आराधनेयोग्य है।'

प्रश्न 60- शास्त्रों में श्रुतज्ञान को परोक्ष कहा है, आप प्रत्यक्ष कैसे कहते हो ?

उत्तर - (1) श्रुतज्ञानप्रमाण परोक्ष है, नय भी परोक्ष है। स्वानुभूति में मन की, राग की अथवा पर की अपेक्षा नहीं होती है; इसलिए स्वानुभूतिप्रत्यक्ष है।

(2) असंख्य प्रदेशी सम्पूर्ण आत्मा जानने में नहीं आता; इसलिए मति-श्रुतज्ञान को परोक्ष कहा है। अनुभव तो स्वयं स्वत: ही भोगता है, इस अपेक्षा प्रत्यक्ष ही है।

(3) केवलज्ञानी की तरह असंख्यात प्रदेशोंसहित सम्पूर्ण आत्मा को सीधा नहीं जानता होने की अपेक्षा, मति-श्रुतज्ञान को परोक्ष कहा है।

प्रश्न 61- शुद्धपर्याय को असत् क्यों कहा जाता है ?

उत्तर - (1) जैसे अपनी आत्मा की अपेक्षा, परद्रव्य अनात्मा है; वैसे ही त्रिकालीद्रव्य की अपेक्षा, पर्याय असत् है, क्योंकि त्रिकाली ध्रुवद्रव्य से क्षणिक प्रगट शुद्धपर्याय भिन्न है; इसलिए असत् है।

प्रश्न 62- शुद्धपर्याय असत् है, ऐसा कोई शास्त्र का प्रमाण है ?

उत्तर - (1) समयसार, गाथा 49 की टीका में लिखा है कि व्यक्तता (शुद्धपर्याय), अव्यक्तता (त्रिकाली द्रव्य) एकमेक मिश्रितरूप से प्रतिभासित होने पर भी, वह (द्रव्य) व्यक्तता को (शुद्धपर्याय को) स्पर्श नहीं करता है तथा प्रवचनसार, गाथा 172 में अलिङ्गग्रहण के 19 वें बोल में कहा है - 'पर्याय को, द्रव्य स्पर्शता नहीं है' यह प्रमाण है।

प्रश्न 63- ज्ञायकभाव तो स्वभाव की अपेक्षा अनादि से ऐसा का ऐसा ही है परन्तु 'विकल्प, वह मैं' ऐसे मिथ्याभाव की

आड़ में वह सहजस्वभाव दृष्टि में नहीं आता; इसलिए ज्ञायकभाव तिरोभूत हो गया है। इस बात को दृष्टान्त द्वारा समझाइये ?

उत्तर – जैसे – नजर के आगे टेढ़ी अंगुली करने पर, सम्पूर्ण समुद्र दिखता नहीं; इसलिए देखनेवाले के लिए समुद्र तिरोभूत हो गया है, ऐसा कहा जाता है। दृष्टि में नहीं आता; इसलिए तिरोभाव कहा, परन्तु समुद्र तो ऐसा का ऐसा ही पड़ा है; उसी प्रकार ज्ञायकभाव तो स्वभाव से पूर्णानन्द का नाथ त्रिकाली नित्यानन्दप्रभु अनन्त गुण का पिण्ड, अनादि का ऐसा का ऐसा ही है; वह कोई तिरोभूत नहीं हुआ है परन्तु जाननेवाले की दृष्टि में 'रागादि, वह मैं' – ऐसे मिथ्याभाव की एकत्वबुद्धि होने से ज्ञायकभाव दृष्टि में नहीं आने की अपेक्षा, तिरोभूत हुआ कहा जाता है।

प्रश्न 64– द्रव्यसंग्रह, गाथा 47 में क्या बताया है ?

उत्तर – निश्चयमोक्षमार्ग और व्यवहारमोक्षमार्ग, दोनों एक साथ त्रैकालिक आत्मा में एकाग्रतारूप निश्चयधर्मध्यान से प्रगट होते हैं।

प्रश्न 65– अज्ञानी को ज्ञेयों के साथ मैत्री क्यों वर्तती है ?

उत्तर – त्रैकालिक आत्मा, ज्ञानस्वरूप है; जानना–देखना उसका त्रिकाल स्वभाव है लेकिन अज्ञानी को अपने ज्ञानस्वरूप का पता नहीं है। ज्ञान की अनेक प्रकार की भिन्न–भिन्न जानने की पर्यायें होती हैं, उसमें ज्ञेयपदार्थ निमित्तमात्र हैं परन्तु अज्ञानी को ऐसा लगता है कि निमित्त के कारण, ज्ञान की भिन्न–भिन्न पर्यायें होती हैं, जबकि ज्ञान की भिन्न–भिन्न पर्यायें, अपने कारण से हुई हैं; ज्ञेय से नहीं हुई हैं। ऐसा न मानने से अज्ञानियों के ज्ञेय के (निमित्त पर पदार्थों के) साथ मैत्री वर्तती है।

प्रश्न 66– सम्यग्दर्शन को मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी क्यों कहा है ?

उत्तर - (1) सम्यग्दर्शन होने पर एक चैतन्यचमत्कारमात्र प्रकाश प्रगटरूप है, वह स्पष्ट प्रतीति में आता है।

(2) सम्यग्दर्शन होने पर, जन्म-मरण के दु:खों का अन्त आ जाता है।

(3) अतीन्द्रियसुख की प्राप्ति होती है; इसलिए सम्यग्दर्शन को मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी कहा है।

प्रश्न 67- संसारचक्र का मूलकारण कौन है और क्यों है ?

उत्तर - संसारचक्र का मूलकारण एकमात्र मिथ्यात्व और राग -द्वेष ही है, क्योंकि मिथ्यात्व, राग-द्वेष के निमित्त से कर्मबन्ध होता है। कर्मबन्ध से गतियों की प्राप्ति होती है। गतियों की प्राप्ति से शरीर का सम्बन्ध होता है। शरीर के सम्बन्ध से इन्द्रियों का सम्बन्ध होता है। इन्द्रियों के सम्बन्ध से विषयग्रहण की इच्छा होती है। विषयग्रहण की इच्छा से राग-द्वेष होता है और फिर राग-द्वेष से कर्मबन्ध होता है। इस प्रकार संसारचक्र चलता ही रहता है।

प्रश्न 68- संसारचक्र का अभाव कैसे हो ?

उत्तर - राग-द्वेष रहित अपने ज्ञायकस्वभाव का आश्रय करे तो कर्मबन्ध नहीं होगा। कर्मबन्ध न होने से गति की प्राप्ति नहीं होगी। गति की प्राप्ति न होने से शरीर का संयोग नहीं होगा। शरीर का संयोग न होने से इन्द्रियों का संयोग नहीं बनेगा। इन्द्रियों का संयोग न होने से विषयग्रहण की इच्छा न रहेगी। जब विषयग्रहण की इच्छा नहीं रहेगी तो संसारचक्र का अभाव हो जावेगा।

जिन-जिनवर और जिनवर वृषभों से कहा हुआ मोक्षमार्ग सम्बन्धी प्रकरण समाप्त हुआ।

॥ जय महावीर-जय महावीर॥

10

जीव के असाधारण पाँच भाव

नहिं स्थान क्षायिक भाव के, क्षायोपशमिक तथा नहीं
नहिं स्थान उपशम भाव के, होते उदय के स्थान नहीं ॥41॥

प्रश्न 1- अपने आत्मा का हित चाहनेवालों को क्या करना चाहिए ?

उत्तर - अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों से, औदारिक-तैजस-कार्माण-शरीरों से, भाषा से और मन से तो मुझ आत्मा का किसी भी प्रकार का किसी भी अपेक्षा कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानकर पात्र जीवों को अपने निजभावों की पहचान करनी चाहिए।

प्रश्न 2- अपने निजभावों की पहिचान क्यों करनी चाहिए ?

उत्तर - (1) कौन सा निजभाव, आश्रय करने योग्य है।

(2) कौन सा भाव, छोड़ने योग्य है।

(3) कौन सा भाव, प्रगट करने योग्य है - इन प्रयोजनभूत बातों का निर्णय करने के लिए पाँच असाधारण भावों का स्वरूप जानना आवश्यक है।

प्रश्न 3- पण्डित टोडरमलजी ने इस विषय में क्या कहा है ?

उत्तर - जीव को तत्त्वादिक का निश्चय करने का उद्यम करना चाहिए, क्योंकि इससे औपशमिकादि सम्यक्त्व स्वयमेव होता है। द्रव्यकर्म के उपशमादि, पुद्गल की पर्यायें हैं। जीव उसका कर्ता -हर्ता नहीं है।

प्रश्न 4- जीव के असाधारणभावों के लिए आचार्यों ने कोई सूत्र कहा है ?

उत्तर - 'औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्व मौदयिक पारिणामिकौ च' [तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय दूसरा, सूत्र प्रथम]

प्रश्न 5- जीव के असाधारणभाव कितने हैं ?

उत्तर - पाँच हैं; (1) औपशमिक, (2) क्षायिक, (3) क्षायोपशमिक, (4) औदयिक, और (5) पारिणामिक - ये पाँच भाव, जीवों के निजभाव है। जीव के अतिरिक्त अन्य किसी में नहीं होते हैं।

प्रश्न 6- इन पाँचों भावों का यह क्रम होने का क्या कारण है ?

उत्तर - (1) सबसे कम संख्या औपशमिकभाववाले जीवों की है।

(2) औपशमिकभाववालों से अधिक संख्या, क्षायिकभाव वाले जीवों की है।

(3) क्षायिकभाव वालों से अधिक संख्या, क्षायोपशमिकभाव वाले जीवों की है।

(4) क्षायोपशमिकभाव वालों से भी अधिक संख्या औदयिकभाव वाले जीवों की है।

(5) सबसे अधिक संख्या पारिणामिकभाववाले जीवों की है। इसी क्रम को लक्ष्य में रखकर भावों का क्रम रखा गया है।

प्रश्न 7- कौन-कौन से भाव में, कौन-कौन से जीव आये और कौन-कौन से निकल गये ?

उत्तर - (1) पारिणामिकभाव में निगोद से लगाकर सिद्ध तक सब जीव आ गये।

(2) औदयिकभाव में सिद्ध निकल गये।

(3) क्षायोपशमिकभाव में अरहन्त और निकल गये।

(4) क्षायिकभाव में छदमस्थ निकल गये, मात्र अरहन्त – सिद्ध रह गये। (क्षायिकसम्यक्त्वी और क्षायिकचारित्र वाले जीव गौण हैं।)

(5) औपशमिकभाव में मात्र औपशमिक सम्यग्दृष्टि तथा औपशमिकचारित्र वाले जीव रहे।

प्रश्न 8– औपशमिकभाव को प्रथम लेने का क्या कारण है?

उत्तर – तत्त्वार्थसूत्र में भगवान उमास्वामी ने प्रथम अध्याय में प्रथम सम्यग्दर्शन की बात की है क्योंकि इसके बिना, धर्म की शुरुआत नहीं होती है। उसी प्रकार दूसरे अध्याय के प्रथम सूत्र में औपशमिकभाव की बात की है क्योंकि औपशमिकभाव के बिना सम्यग्दर्शन नहीं होता है। इसलिए प्रथम औपशमिकभाव को लिया है।

प्रश्न 9– इन पाँचों भावों से क्या सिद्ध हुआ?

उत्तर – (1) पारिणामिकभाव के बिना, कोई जीव नहीं है।

(2) औदयिकभाव के बिना, कोई संसारी नहीं।

(3) क्षायोपशमिकभाव के बिना, कोई छदमस्थ नहीं।

(4) क्षायिकभाव के बिना अरहंत ओर सिद्ध नहीं, अर्थात् क्षायिकभाव के बिना, केवलज्ञान और मोक्ष नहीं।

(5) औपशमिकभाव के बिना, धर्म की शुरुआत नहीं।

प्रश्न 10– असाधारणभाव किसे कहते हैं?

उत्तर – (1) असाधारण का अर्थ तो यह है कि ये भाव, आत्मा में ही पाये जाते हैं; अन्य पाँच द्रव्यों में नहीं पाये जाते हैं।

(2) आत्मा में किस-किस जाति के भाव (परिणाम) पाये जाते हैं और इनके द्वारा जीव को स्वयं का स्पष्ट ज्ञान, सम्पूर्ण द्रव्य -गुण-पर्याय सहित हो जाता है।

प्रश्न 11- इन भावों के जानने से ज्ञान में स्पष्टता कैसे हो जाती है ?

उत्तर - हानिकारक-लाभदायक परिणामों का ज्ञान हो जाता है जैसे - (1) औदयिकभाव हानिकारक और दुःखरूप है।

(2) औपशमिकभाव और धर्म का क्षायोपशमिकभाव, मोक्षमार्गरूप है।

(3) क्षायिकभाव, मोक्ष स्वरूप है।

(4) पारिणामिकभाव आश्रय करने योग्य ध्येयरूप है।

(5) क्षायिक ज्ञान-दर्शन, वीर्य जीव का पूर्ण स्वभाव, पर्याय में है और क्षायोपशमिक एकदेश स्वभाव भी पर्याय में है। मिथ्यादृष्टि का ज्ञान, मिथ्याज्ञान है; इस प्रकार अच्छे-बुरे परिणामों का ज्ञान हो सकता है।

प्रश्न 12- औपशमिकभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर - कर्मों के उपशम के साथ सम्बन्धवाला आत्मा का जो भाव होता है, उसे औपशमिकभाव कहते हैं।

प्रश्न 13- कर्म का उपशम क्या है ?

उत्तर - आत्मा के पुरुषार्थ का निमित्त पाकर, जड़कर्म का प्रगटरूप फल, जड़कर्मरूप में न आना, वह कर्म का उपशम है।

प्रश्न 14- औपशमिकभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद है - औपशमिकसम्यक्त्व, औपशमिकचारित्र।

प्रश्न 15- औपशमिकसम्यक्त्व और औपशमिकचारित्र क्या है ?

उत्तर - औपशमिकसम्यक्त्व, श्रद्धागुण की क्षणिक स्वभाव-अर्थपर्याय है और औपशमिकचारित्र, चारित्रगुण की क्षणिक स्वभावअर्थपर्याय है। यह दोनों भाव, सादिसान्त हैं।

प्रश्न 16- औपशमिकसम्यक्त्व और औपशमिकचारित्र कौन-कौन से गुणस्थान में होता है ?

उत्तर - औपशमिकसम्यक्त्व, चौथे से सातवें गुणस्थान तक हो सकता है। और औपशमिकचारित्र, मात्र ग्यारहवें गुणस्थान में होता है।

प्रश्न 17- क्षायिकभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर - कर्मों के सर्वथा नाश के साथ सम्बन्धवाला आत्मा के जो अत्यन्त शुद्धभाव होता है, उसे क्षायिकभाव कहते हैं।

प्रश्न 18- कर्म का क्षय क्या है ?

उत्तर - आत्मा के पुरुषार्थ का निमित्त पाकर, कर्म आवरण का नाश होना, वह कर्म का क्षय है।

प्रश्न 19- क्षायिकभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर - नौ भेद हैं :- (1) क्षायिकसम्यक्त्व, (2) क्षायिकचारित्र, (3) क्षायिकज्ञान, (4) क्षायिकदर्शन, (5) क्षायिकदान, (6) क्षायिकलाभ, (7) क्षायिकउपभोग, (8) क्षायिकभोग, (9) क्षायिकवीर्य। इनको क्षायिकलब्धि भी कहते हैं।

प्रश्न 20- ये नौ क्षायिकभाव क्या हैं ?

उत्तर - आत्मा के भिन्न-भिन्न अनुजीवी गुणों की क्षायिक स्वभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 21- ये नौ क्षायिकभाव कब प्रगट होते हैं और कब तक रहते हैं ?

उत्तर - यह भाव तेरहवें गुणस्थान में प्रगट होकर, सिद्धदशा में अनन्त काल तक धाराप्रवाहरूप में सादि-अनन्त रहते हैं। क्षायिकसम्यक्त्व किसी-किसी को चौथे गुणस्थान में, किसी-किसी को पाँचवें में, किसी-किसी को छठवें में, किसी-किसी को सातवें गुणस्थान में हो जाता है। क्षायिकचारित्र बारहवें गुणस्थान में प्रकट हो जाता है और प्रगट होने पर सादि-अनन्त रहता है।

प्रश्न 22- क्षायोपशमिकभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर - कर्मों के क्षयोपशम के साथ सम्बन्धवाला आत्मा का जो भाव होता है, उसे क्षायोपशमिकभाव कहते हैं।

प्रश्न 23- कर्म का क्षयोपशम क्या है ?

उत्तर - आत्मा के पुरुषार्थ का निमित्त पाकर, कर्म का स्वयं अंशत: क्षय और अशत: उपशमरूप हो जाना, यह कर्म का क्षयोपशम है।

प्रश्न 24- क्षायोपशमिकभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर - 18 भेद हैं - चार ज्ञान [मति, श्रुत अवधि, मन:पर्यय],

तीन अज्ञान [कुमति, कुश्रुत, कुअवधि], तीन दर्शन [चक्षु, अचक्षु, अवधि], पाँच क्षायोपशमिक [दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य], एक क्षायोपशमिकसम्यक्त्व, एक क्षायोपशमिकचारित्र, एक संयमासंयम। ये सब भाव, सादि-सान्त हैं।

प्रश्न 25- 18 क्षायोपशमिकभाव किस-किस गुण की कौन-कौन सी पर्यायें हैं ?

उत्तर - चार ज्ञान = यह ज्ञानगुण की एकदेश स्वभाव अर्थपर्यायें हैं। तीन अज्ञान = यह ज्ञानगुण की विभाव अर्थपर्यायें हैं। तीन दर्शन

= यह दर्शनगुण की अर्थपर्यायें हैं। दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य, यह आत्मा में पाँच स्वतन्त्र गुण हैं। ये पाँच स्वतन्त्र गुण, एक देश स्वभावअर्थपर्यायें हैं और अज्ञानी की विभावअर्थपर्यायें हैं। (1) क्षायोपशमिकसम्यक्त्व = श्रद्धागुण की क्षायोपशमिक स्वभाव अर्थपर्याय है। (2) क्षायोपशमिकसंयम और संयमासंयम=चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 26- यह क्षायोपशमिकभाव कौन-कौन से गुणस्थान में पाये जाते हैं ?

उत्तर - (1) चार ज्ञान=चौथे से बारहवें गुणस्थानों तक पाये जाते हैं। (2) तीन अज्ञान=पहले तीन गुणस्थानों में पाये जाते हैं। (3) तीन दर्शन और पाँच दानादिक=पहले से बारहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं। (4) क्षायोपशमिक सम्यक्त्व=चौथे से सातवें गुणस्थान तक पाया जाता है। (5) संयमासंयम=पाँचवें गुणस्थान में पाया जाता है। (6) क्षायोपशमिकसंयम (चारित्र) छठे से दसवें गुणस्थान तक पाया जाता है।

प्रश्न 27- औदयिकभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर - कर्मों के उदय के साथ सम्बन्ध रखनेवाला आत्मा का जो विकारीभाव होता है, उसे औदयिकभाव कहते हैं।

प्रश्न 28- औदयिकभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर - 21 भेद हैं ; चार गतिभाव; चार कषायभाव; तीन लिंगभाव; एक मिथ्यादर्शनभाव; एक अज्ञानभाव; एक असंयमभाव; एक असिद्धभाव; छह लेश्याभाव।

प्रश्न 29- गति नाम का औदयिकभाव कितने प्रकार का है ?

उत्तर - दो प्रकार का है। (1) जीव के गति विषयक मोहभाव जो बन्ध का कारण है, वह औदयिकभाव है।

(2) जीव में सूक्ष्मत्व प्रतिजीवीगुण है उसका अशुद्धपरिणमन चौदहवें गुणस्थान तक है, वह नैमित्तिक है और अघातिकर्मों में नामकर्म और नामकर्म के अन्तर्गत गतिकर्म तथा अङ्गोपाङ्ग नामकर्म निमित्त है। यह गतिरूप औदयिकभाव जीव का उपादानपरिणाम है, जो बन्ध का कारण नहीं है।

गतिनामकर्म के सामने जीव की मनुष्य आकारादि विभाव-अर्थपर्याय और विभावव्यञ्जनपर्याय में स्थूलपने का व्यवहार संसारदशा तक चालू रहता है, यह गति औदयिकभाव जीव में है, जो चौदहवें गुणस्थान तक रहता है। याद रहे-अघाति के उदयवाला गति औदयिकभाव तो बन्ध का कारण नहीं है परन्तु मोहरूप गति औदयिकभाव, बन्ध का कारण होने से हानिकारक है।

प्रश्न 30- मोहरूप गति औदयिकभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - मिथ्यात्व-राग-द्वेषरूप गतिसम्बन्धी औदयिकभाव, नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 31- अघाति गति औदयिकभाव में, मोहज गति सम्बन्धी राग-द्वेष-मिथ्यात्व को क्यों मिला दिया ?

उत्तर - मोह के उदय को गति के उदय पर आरोप करके निरूपण करने की आगम की पद्धति है; इसलिए चारों गतियों में जो उस-उस गति के अनुसार मिथ्यात्व - राग-द्वेषरूप भाव हैं - वे ही उस गति के औदयिकभाव हैं।

प्रश्न 32- मोह-राग-द्वेष सम्बन्धी गति औदयिकभाव को जरा दृष्टान्त से समझाओ ?

उत्तर - जैसे - बिल्ली को चूहा पकड़ने का मोहज भाव है, वह उस तिर्यञ्चगति का गति औदयिकभाव के नाम से लोक तथा

आगम में प्रसिद्ध है। इसी प्रकार चारों गतियों में उस-उस प्रकार के गति औदयिकभाव हैं। जैसे - (1) स्त्री में स्त्री जैसा राग; पुरुष में पुरुष जैसा राग; देव में देव जैसा राग; बन्दर में बन्दर जैसा राग; कुत्तों में कुत्तों जैसा राग; यह गति औदयिकभावों का सार है।

प्रश्न 33- गति के अनुसार ऐसा औदयिकभाव क्यों है?

उत्तर - 'जैसी गति, वैसी मति' ऐसा निमित्त-नैमित्तिक -सम्बन्ध है।

प्रश्न 34- गति औदयिकभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है?

उत्तर - (1) सूक्ष्मत्व प्रतिजीवीगुण की विकारीदशा, नैमित्तिक है और नामकर्म का उदय, निमित्त है परन्तु यह बन्ध का कारण नहीं है।

प्रश्न 35- मोहज गति औदयिकभाव में निमित्त-नैमित्तिक कौन है?

उत्तर - गतिसम्बन्धी मोह-राग-द्वेषभाव, नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय, चारित्रमोहनीय का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 36- कषाय, लिंग, असंयम में निमित्त-नैमित्तिक क्या है?

उत्तर - चारित्रगुण की विकारीदशा, नैमित्तिक है और चारित्र -मोहनीय का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 37- अज्ञान औदयिकभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है?

उत्तर - आत्मा में जितना ज्ञान, सुज्ञानरूप से या कुमति आदि रूप से विद्यमान है, वह सब तो क्षायोपशमिक ज्ञानभाव है और जीव का पूर्ण स्वभाव, केवलज्ञान है।

जितना ज्ञान का प्रगटपना है, उतना क्षायोपशमिक ज्ञानभाव है और जितना ज्ञान का अप्रगटपना है, उसको अज्ञान औदयिकभाव कहते है; अत: अज्ञानभाव, नैमित्तिक है और ज्ञानावरणीय का उदय, निमित्त है। यह संक्लेशरूप तो नहीं है, क्योंकि संक्लेशरूप तो राग -द्वेष-मोहभाव है; इसीलिए यह बन्ध का कारण नहीं है किन्तु दु:खरूप अवश्य है क्योंकि इसके कारण स्वभाविकज्ञान और सुख का अभाव हो रहा है।

प्रश्न 38- मिथ्यादर्शन में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - मिथ्यादर्शन, नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 39- असिद्धत्वभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जैसे, सिद्धदशा को सिद्धत्वभाव कहते हैं; सिद्धत्वभाव, नैमित्तिक है और कर्मों का सर्वथा अभाव, निमित्त है; उसी प्रकार पहिले गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक असिद्धत्वभाव रहता है, वह नैमित्तिक है और आठों कर्मों का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 40- आपने असिद्धत्वभाव को नैमित्तिक कहा और आठों कर्मों को निमित्त कहा, परन्तु असिद्धत्वभाव चौदहवें गुणस्थान तक होता है, वहाँ आठों कर्मों का निमित्त कहाँ है ?

उत्तर - जितनी मात्रा में भी आत्मा में संसारतत्त्व है, वह असिद्धत्वभाव है; किसी भी प्रकार हो, चाहे वह केवल योगजनित हो या प्रतिजीवीगुणों का ही विपरीत परिणमन हो, सब असिद्धत्वभाव है, वह नैमित्तिक है; जहाँ पर जैसा-जैसा कर्म का उदय हो, उतना निमित्त समझना। जैसे अरहन्तदशा में प्रतिजीवीगुणों का विकार, नैमित्तिक है और चार अघातियाकर्म, निमित्त हैं।

प्रश्न 41- लेश्या के भावों में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - कषाय से अनुरञ्जित योग को लेश्या कहते हैं। अत: लेश्या का भाव, नैमित्तिक है जो योग सहचर है और मोहनीयकर्म का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 42- औदयिकभावों से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - अज्ञान और असिद्धत्वभाव को छोड़कर, 19 औदयिकभाव तो मोहभाव के अवान्तर भेद हैं; बन्धसाधक हैं; जीव के लिए महा अनिष्टकारक हैं; अनन्त संसार का कारण हैं। वैसे वास्तव में तो मिथ्यात्व (मोह) ही अनन्त संसार है परन्तु मोह निमित्त होने से गति आदि को दु:ख का कारण कहा जाता है; है नहीं। अज्ञान औदयिकभाव, अभावरूप है, इसमें सीधा पुरुषार्थ नहीं चल सकता है किन्तु मोहभावों का अभाव होने पर, वह स्वयं ही नष्ट हो जाता है; इसलिए एक परमपारिणामिकभाव का आश्रय लेकर औदयिकभावों का अभाव करके, पात्र जीवों को स्वभाविक सिद्धत्वपना पर्याय में प्रगट कर लेना चाहिए - यह औदयिकभावों के जानने का सार है।

प्रश्न 43- क्या सर्व औदयिकभाव बन्ध के कारण हैं ?

उत्तर - ऐसा नहीं समझना चाहिए कि सर्व औदायिकभाव बन्ध के कारण हैं; मात्र मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग - ये चार, बन्ध के कारण हैं। *(धवला, पुस्तक 7, पृष्ठ 9)*

प्रश्न 44- क्या कर्म का उदय, बन्ध का कारण है ?

उत्तर - (1) यदि जीव, मोह के उदय में युक्त हो तो बन्ध होता है; द्रव्यमोह का उदय होने पर भी, यदि जीव शुद्धात्मभावना (एकाग्रता) के बल द्वारा, मोहभावरूप परिणमित न हो तो बन्ध नहीं होता।

(2) यदि जीव को कर्मोदय के कारण बन्ध होता हो तो संसारी को सर्वदा कर्म का उदय विद्यमान है; इसलिए उसे सर्वदा बन्ध ही होगा, कभी मोक्ष होगा ही नहीं।

(3) इसलिए ऐसा समझना कि कर्म का उदय, बन्ध का कारण नहीं है किन्तु जीव को मोहभावरूप परिणमन ही बन्ध का कारण है। *(श्री प्रवचनसार, हिन्दी, जयसेनाचार्य गाथा 45 की टीका से)*

प्रश्न 45- औदयिकभावों में जो अज्ञानभाव है और क्षायोपशमिकभावों में अज्ञानभाव है, उसमें क्या अन्तर है ?

उत्तर - 'औदयिकभावों में जो अज्ञानभाव है, वह अज्ञानरूप है और क्षायोपशमिकभाव में जो अज्ञानभाव है, वह मिथ्यादर्शन के कारण दूषित होता है।'

[मोक्षशास्त्र, हिन्दी, पण्डित फूलचन्दजी सम्पादित पृष्ठ 31 का फुटनोट]

प्रश्न 46- पारिणामिकभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर - (1) कर्मों का उपशम, क्षय, क्षयोपशम अथवा उदय की अपेक्षा रखे बिना, जीव का जो स्वभावमात्र हो, उसे पारिणामिक -भाव कहते हैं।

(2) जिनका निरन्तर सद्भाव रहे, उसे पारिणामिकभाव कहते हैं। सर्व भेद जिसमें गर्भित हैं, ऐसा चैतन्यभाव ही जीव का पारिणामिक -भाव है। *[श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 194]*

प्रश्न 47- पाँच भावों का कोई दृष्टान्त देकर समझाइये ?

उत्तर - (1) जैसे - एक काँच के गिलास में पानी और मिट्टी एकमेक दिखती है; उसी प्रकार जीव के जिस भाव के साथ कर्म के उदय का सम्बन्ध है, वह औदयिकभाव है।

(2) कीचड़सहित पानी के गिलास में कतकफल डालने से कीचड़ नीचे बैठ गया, निर्मल पानी ऊपर आ गया; उसी प्रकार कर्म

के उपशम के साथ सम्बन्धवाले जीव के भाव को औपशमिकभाव कहते हैं।

(3) कीचड़ बैठे हुए पानी के गिलास में कंकड़ डाली तो कोई कोई मैल ऊपर आ गया; उसी प्रकार कर्म के क्षयोपशम के साथ सम्बन्धवाले जीव के भाव को क्षायोपशमिकभाव कहते हैं।

(4) कीचड़ अलग, पानी अलग किया; उसी प्रकार कर्म के क्षय के साथ सम्बन्धवाला भाव, क्षायिकभाव है।

(5) जिसमें कीचड़ आदि किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है; उसी प्रकार जिसमें कर्म के उदय, क्षय, क्षयोपशम और उपशम की कोई भी अपेक्षा नहीं है, ऐसा अनादि-अनन्त एकरूप चैतन्यभाव, वह पारिणामिकभाव है।

प्रश्न 48- पारिणामिकभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर - (1) जीवत्व, (2) भव्यत्व, (3) अभव्यत्व।

प्रश्न 49- जीवत्वभाव के पर्यायवाची शब्द क्या -क्या हैं ?

उत्तर - ज्ञायकभाव, पारिणामिकभाव, परमपारिणामिकभाव, परमपूज्य पञ्चम भाव, कारणशुद्धपर्याय आदि अनेक नाम हैं।

प्रश्न 50- पारिणामिकभाव क्या बताता है ?

उत्तर - जीव का अनादिअनन्त शुद्ध चैतन्यस्वभाव है, अर्थात् भगवान बनने की शक्ति है, यह पारिणामिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न 51- औदयिकभाव क्या बताता है ?

उत्तर - (1) जीव में भगवान बनने की शक्ति होने पर भी, उसकी अवस्था में विकार है, ऐसा औदयिकभाव सिद्ध करता है।

(2) जड़कर्म के साथ जीव का अनादिकाल से एक-एक

समय का सम्बन्ध है, जीव उसके वश होता है; इसलिए विकार होता है किन्तु कर्म के कारण विकारभाव नहीं होता, ऐसा भी औदयिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न 52- क्षायोपशमिकभाव क्या बताता है ?

उत्तर - (1) जीव, अनादि से विकार करता आ रहा है तथापि वह सर्वथा विकाररूप होकर जड़ नहीं हो जाता क्योंकि उसके ज्ञान, दर्शन तथा वीर्य का अंशत: विकास तो सदैव रहता है, ऐसा क्षायोपशमिकभाव सिद्ध करता है।

(2) सच्ची समझ के पश्चात् जीव ज्यों-ज्यों सत्य पुरुषार्थ बढ़ाता है, त्यों-त्यों मोह अंशत: दूर होता जाता है, ऐसा भी क्षायोपशमिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न 53- औपशमिकभाव क्या बताता है ?

उत्तर - (1) आत्मा का स्वरूप यथार्थता समझकर जब जीव अपने पारिणामिकभाव का आश्रय करता है, तब औदयिकभाव दूर होता है, ऐसा औपशमिकभाव सिद्ध करता है।

(2) यदि जीव, प्रतिहतभाव से पुरुषार्थ में आगे बढ़े तो चारित्र -मोह स्वयं दब जाता है और औपशमिकचारित्र प्रगट होता है, ऐसा भी औपशमिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न 54- क्षायिकभाव क्या सिद्ध करता है ?

उत्तर - (1) अप्रतिहत पुरुषार्थ द्वारा पारिणामिकभाव का आश्रय बढ़ने पर, विकार का नाश हो सकता है, ऐसा क्षायिकभाव सिद्ध करता है।

(2) यद्यपि कर्म के साथ का सम्बन्ध प्रवाहरूप से अनादिकालीन है, तथापि प्रति समय पुराने कर्म जाते हैं और नये

कर्मों का सम्बन्ध होता रहता है। इस अपेक्षा से उसमें प्रारम्भिकता रहने से (सादि होने से) कर्मों के साथ का सम्बन्ध सर्वथा दूर हो जाता है, ऐसा क्षायिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न 55- औपशमिकभाव, साधकदशा का क्षायोपशमिक -भाव और क्षायिकभाव क्या सिद्ध करते हैं ?

उत्तर - (1) कोई निमित्त, विकार नहीं कराता, किन्तु जीव स्वयं निमित्ताधीन होकर विकार करता है।

(2) जीव जब पारिणामिकभावरूप अपने स्वभाव की ओर लक्ष्य करके स्वाधीनता प्रगट करता है, तब निमित्त की आधीनता दूर होकर शुद्धता प्रगट होती है, ऐसा औपशमिकभाव, साधकदशा का क्षयोपशमभाव और क्षायिकभाव सिद्ध करता है।

प्रश्न 56- पाँच भावों में से किस भाव की ओर सन्मुखता से धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है ?

उत्तर - (1) पारिणामिकभाव के अतिरिक्त चारों भाव क्षणिक हैं।

(2) क्षायिकभाव तो वर्तमान में है ही नहीं।

(3) औपशमिकभाव हो तो वह अल्पकाल टिकता है।

(4) औदयिकभाव और क्षायोपशमिकभाव भी प्रति समय बदलते रहते हैं।

(5) इसलिए इन चारों भावों पर लक्ष्य करे तो एकाग्रता नहीं हो सकती है और ना ही धर्म प्रगट हो सकता है।

(6) त्रिकाल स्वभावी पारिणामिकभाव का माहात्म्य जानकर, उस ओर जीव अपनी वृत्ति करे (झुकाव करे) तो धर्म का प्रारम्भ होता है और उस भाव की, एकाग्रता के बल से वृद्धि होकर धर्म की पूर्णता होती है।

प्रश्न 57- ज्ञान-दर्शन-वीर्यगुण में औपशमिकभाव क्यों नहीं होता है ?

उत्तर - इनका औपशमिक हो जावे तो केवलज्ञान, केवलदर्शन आदि प्रगट हो जावे और कर्म सत्ता में पड़ा रहे, लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है; इसलिए ज्ञान-दर्शन-वीर्यगुण में औपशमिकभाव नहीं होता है।

प्रश्न 58- क्या मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान, पारिणामिकभाव हैं ?

उत्तर - नहीं; ये तो ज्ञानगुण की पाँच पर्यायें हैं; पारिणामिकभाव नहीं है।

प्रश्न 59- जीव में विकार है, यह कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर - औदयिकभाव बताता है।

प्रश्न 60- विकार में कर्म का उदय निमित्त होने पर भी, कर्म विकार नहीं कराता है, यह कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर - औदयिकभाव बताता है।

प्रश्न 61- विकार होने पर भी ज्ञान, दर्शन, वीर्य का सर्वथा अभाव नहीं होता है, यह कौन सा भाव बताता है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव बताता है

प्रश्न 62- पात्रजीव अपने मानसिकज्ञान में (1) मैं आत्मा हूँ और मेरे में भगवान बनने की शक्ति है; (2) विकार एक समय का औदयिकभाव है; और (3) मैं अपने स्वभाव का आश्रय लूँ, तो कल्याण हो-ऐसा निर्णय कर सकता है, यह कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर - अज्ञानदशा में पात्र जीवों को ऐसा क्षायोपशमिकभाव बताता है।

प्रश्न 63- धर्म की शुरुआत कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर - औपशमिकभाव, धर्म का क्षायोपशमिकभाव और श्रद्धा का क्षायिकभाव बताता है।

प्रश्न 64- ग्यारहवें गुणस्थान में जो चारित्र है, वह कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर - चारित्र का औपशमिकभाव बताता है।

प्रश्न 65- परिपूर्णशुद्धि का प्रगट होना, कौनसा भाव बताता है ?

उत्तर - क्षायिकभाव बताता है।

प्रश्न 66- किस भाव के आश्रय से धर्म की शुरुआत होती है ?

उत्तर - एक मात्र पारिणामिकभाव के आश्रय से ही होती है।

प्रश्न 67- अज्ञानी का कुमति आदि ज्ञान, दु:खरूप है या सुखरूप है ?

उत्तर - अज्ञानी का ज्ञान, दु:खरूप नहीं है; उसके साथ मोह का जुड़ान होने के कारण, दु:ख का कारण कहा जाता है क्योंकि वह अपने ज्ञान को प्रयोजनभूत कार्य में ना लगाकर, अप्रयोजनभूत कार्य में लगाता है।

प्रश्न 68- सिद्ध अवस्था में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - दो भाव होते हैं - पारिणामिकभाव और क्षायिकभाव।

प्रश्न 69- चौदहवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - तीन भाव होते हैं - पारिणामिक, क्षायिक और औदयिकभाव।

प्रश्न 70- तेरहवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - तीन भाव होते हैं - पारिणामिक, क्षायिक, और औदयिकभाव।

प्रश्न 71- बारहवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - चार भाव होते हैं - पारिणामिकभाव, श्रद्धा व चारित्र का क्षायिकभाव, औदायिकभाव और क्षायोपशमिकभाव।

प्रश्न 72- ग्यारहवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - (1) यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव, उपशम श्रेणी माँडता है तो ग्यारहवें गुणस्थान में पाँचों भाव होते हैं।

(2) यदि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि, श्रेणी माँडता है तो ग्यारहवें गुणस्थान में क्षायिकभाव को छोड़कर, चार भाव होते हैं।

प्रश्न 73- दशवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - (1) क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव हैं तो औपशमिकभाव को छोड़कर, चार भाव हैं।

(2) यदि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव है तो क्षायिकभाव को छोड़कर, चार भाव होते हैं।

प्रश्न 74- आठवें और नवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - (1) यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव है तो औपशमिकभाव को छोड़कर, चार भाव हैं।

(2) यदि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव है तो क्षायिकभाव को छोड़कर, चार भाव हैं।

प्रश्न 75- सातवें गुणस्थान में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - (1) क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो तो औपशमिकभाव को छोड़कर, चार होते हैं।

(2) औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिकभाव को छोड़कर, चार भाव होते हैं।

(3) क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिक और औपशमिक को छोड़कर, तीन भाव होते हैं।

प्रश्न 76- छठे, पाँचवें, चौथे गुणस्थान में कितने भाव होते हैं?

उत्तर - (1) क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो तो औपशमिकभाव को छोड़कर, चार होते हैं।

(2) औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिकभाव को छोड़कर, चार होते हैं।

(3) क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि हो तो क्षायिकभाव और औपशमिक-भाव को छोड़कर, तीन भाव होते हैं।

प्रश्न 77- तीसरे गुणस्थान में कितने भाव होते हैं?

उत्तर - पारिणामिक, औदयिक और क्षायोपशमिकभाव तथा दर्शनमोहनीय की अपेक्षा से पारिणामिकभाव, इस प्रकार चार होते हैं।

प्रश्न 78- दूसरे गुणस्थान में कितने भाव होते हैं?

उत्तर - पारिणामिकभाव, औदयिकभाव, क्षायोपशमिकभाव, तथा दर्शनमोहनीय की अपेक्षा से पारिणामिकभाव, इस प्रकार चार होते हैं।

प्रश्न 79- पहले गुणस्थान में कितने भाव होते हैं?

उत्तर - पारिणामिकभाव, औदयिकभाव, और क्षायोपशमिकभाव - ये तीन भाव होते हैं।

प्रश्न 80- चौथे से चोदहवें गुणस्थान तक कौन-सा भाव हो सकता है?

उत्तर - क्षायिकभाव हो सकता है।

प्रश्न 81- चौथे से ग्यारहवें तक कौन-सा भाव हो सकता है ?

उत्तर - औपशमिकभाव हो सकता है।

प्रश्न 82- पहले गुणस्थान से चोदहवें गुणस्थान तक कौन-सा भाव होता है ?

उत्तर - औदयिकभाव होता है।

प्रश्न 83- पहले गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक कौन-सा भाव होता है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव हो सकता है।

प्रश्न 84- सिद्ध और सब संसारियों में भी होवे, ऐसा कौन-सा भाव है ?

उत्तर - पारिणामिकभाव, सिद्ध और संसारी दोनों में है।

प्रश्न 85- सिद्धों में ना होवे, ऐसे कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर - औदयिकभाव, क्षायोपशमिकभाव और औपशमिकभाव सिद्धों में नहीं है।

प्रश्न 86- संसारी में ना होवे, ऐसे कौन-कौन से भाव है ?

उत्तर - ऐसा कोई भी भाव नहीं है क्योंकि समुच्चयरूप से संसारियों में पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न 87- सब संसारी जीवों में पाया जाये, वह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औदयिकभाव है, जो निगोद से लेकर चोदहवें गुणस्थान तक सब जीवों में है।

प्रश्न 88- निगोद से लगाकर सिद्ध तक के ज्यादा जीवों में होवे, वह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औदयिकभाव है।

प्रश्न 89- संसार में सबसे थोड़े जीवों में होवे, वह कौन -सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिकभाव है।

प्रश्न 90- सम्पूर्ण छद्मस्थ जीवों को होवे, वह कौन सा भाव है ?

उत्तर - औदयिकभाव और क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 91- ज्ञानगुण, दर्शनगुण और वीर्यगुण की पर्याय के साथ कौन से भाव का सम्बन्ध नहीं है ?

उत्तर - औपशमिकभाव का सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 92- जब जीव के प्रथम धर्म की शुरुआत होती है, तब कौन-कौन से भाव होते हैं ?

उत्तर - औपशमिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक-भाव।

प्रश्न 93- देवगति में कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - देवगति में पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न 94- मनुष्यगति में कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - मनुष्यगति में पाँचों भाव हो सकते हैं

प्रश्न 95- नरकगति में कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - नरकगति में पाँचों भाव हो सकते हैं

प्रश्न 96- तिर्यञ्चगति में कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - तिर्यञ्चगति में पाँचों भाव हो सकते हैं

प्रश्न 97- श्रद्धा का क्षायिकभाव कौन-से गुणस्थान में और कहाँ तक हो सकता है ?

उत्तर – चौथे से चोदहवें गुणस्थान तक तथा सिद्धदशा में होता है।

प्रश्न 98– ज्ञानगुण का क्षायिकभाव, कौन-से गुणस्थान में होता है ?

उत्तर – तेरहवें गुणस्थान से लेकर, सिद्धदशा तक ज्ञान का क्षायिकभाव होता है।

प्रश्न 99– चारित्र का क्षायिकभाव, कौन-से गुणस्थान में होता है ?

उत्तर – बारहवें गुणस्थान से लेकर, सिद्धदशा तक होता है।

प्रश्न 100– पाँच भावों में से सबसे कम भाव, किस जीव में होते हैं ?

उत्तर – सिद्ध जीवों में पारिणामिक और क्षायिकभाव ही होते हैं।

प्रश्न 101– एक साथ पाँच भाव किस जीव में होते हैं ?

उत्तर – यदि क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणी माँडे तो ग्यारहवें गुणस्थान में पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न 102– पंदरहवाँ गुणस्थान कौन-सा है ?

उत्तर – पंदरहवाँ गुणस्थान नहीं होता है परन्तु चोदहवें गुणस्थान से पार सिद्धदशा है, उसे किसी अपेक्षा पंदरहवाँ गुणस्थान कह देते हैं; है नहीं।

प्रश्न 103– औपशमिक सम्यक्त्वी जीव, क्षपकश्रेणी माँड सकता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं।

प्रश्न 104– क्या क्षायिकसम्यक्त्वी को उपशमश्रेणी हो सकती है ?

उत्तर – हाँ, हो सकती है।

प्रश्न 105- क्या क्षपकश्रेणीवाला जीव, स्वर्ग में जावे ?

उत्तर - कभी भी नहीं, क्योंकि वह नियम से मोक्ष ही जाता है।

प्रश्न 106- औपशमिकसम्यक्त्वी जीव, स्वर्ग में जावे ?

उत्तर - हाँ जावे।

प्रश्न 107- मनःपर्ययज्ञान, कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 108- केवलज्ञान, कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायिकभाव है।

प्रश्न 109- सम्यग्दर्शन, कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव तीनों हो सकते हैं, परन्तु एक समय में एक ही होगा; तीन या दो नहीं।

प्रश्न 110- पूर्ण वीतरागता कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिक और क्षायिकभाव है।

प्रश्न 111- वर्तमान समय में भरतक्षेत्र में उत्पन्न जीवों को कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - औपशमिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक-भाव हो सकते हैं परन्तु क्षायिकभाव नहीं हो सकता है।

प्रश्न 112- आठ कर्मों में से उदय, कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - उदय आठों में होता है।

प्रश्न 113- आठ कर्मों में से क्षय, कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - क्षय भी आठों में होता है।

प्रश्न 114- आठ कर्मों में से उपशम, कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - मात्र मोहनीयकर्म में ही होता है।

प्रश्न 115- आठों कर्मों में से क्षयोपशम, कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - क्षयोपशम, चार घातीकर्मों में होता है।

प्रश्न 116- अनादिअनन्त कौन-सा भाव है ?

उत्तर - पारिणामिकभाव है।

प्रश्न 117- सादिअनन्त कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायिकभाव है।

प्रश्न 118- अनादिसान्त कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औदयिकभाव और क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 119- सादिसान्त कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिकभाव है।

प्रश्न 120- द्रव्यलिङ्गी मुनि में कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर - औदयिक, पारिणामिक और क्षायोपशमिकभाव हैं।

प्रश्न 121- धर्मात्मा को कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - धर्मात्मा को पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न 122- कुन्दकुन्द भगवान को वर्तमान में कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर - क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिकभाव है।

प्रश्न 123- विदेहक्षेत्र के धर्मात्माओं को कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर - पाँचों भाव हो सकते हैं।

प्रश्न 124- पहले गुणस्थान में होवे और तेरहवें-चोदहवें गुणस्थान में ना होवे, ऐसा कौन सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 125- पहले गुणस्थान में भी होवे और तेरहवें-चोदहवें गुणस्थान में भी होवे, परन्तु सिद्ध में ना होवे, वह कौन सा भाव है ?

उत्तर - औदयिकभाव है।

प्रश्न 126- पहले गुणस्थान में भी ना हो और बारहवें, तेरहवें तथा चोदहवें गुणस्थान में भी न हो, ऐसा कौन सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिकभाव है।

प्रश्न 127- संसारदशा में बराबर रहनेवाला कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औदयिकभाव है।

प्रश्न 128- एक बार प्राप्त होने पर, कभी भी अभाव न होवे, ऐसा कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायिकभाव है।

प्रश्न 129- ज्ञान का क्षायिकभाव कौनसी गति में हो सकता है ?

उत्तर - मात्र मनुष्यगति में हो सकता है, दूसरी गतियों में नहीं हो सकता है।

प्रश्न 130- श्रद्धा का क्षायिकभाव कौन-सी गति में हो सकता है ?

उत्तर - चारों गतियों में हो सकता है।

प्रश्न 131- चारित्र का क्षायिकभाव कौन-सी गति में हो सकता है ?

उत्तर - मात्र मनुष्यगति में हो सकता है, दूसरी गतियों में नहीं हो सकता है।

प्रश्न 132- श्रद्धा का क्षायोपशमिकभाव कौन-कौनसी गति में हो सकता है ?

उत्तर - चारों गतियों में हो सकता है।

प्रश्न 133- जो चारित्र नाम पावे, ऐसा चारित्र का क्षायोपशमिकभाव कौन-सी गति में हो सकता है ?

उत्तर - मनुष्य और तिर्यञ्च में ही हो सकता है।

प्रश्न 134- ज्ञान का क्षायोपशमिकभाव ना हो, तब क्या होता है ?

उत्तर - ज्ञान का क्षायिकभाव, अर्थात् केवलज्ञान होता है।

प्रश्न 135- दर्शन का क्षायोपशमिकभाव ना हो, तब क्या होता है ?

उत्तर - दर्शन का क्षायिकभाव, अर्थात् केवलदर्शन होता है।

प्रश्न 136- एक बार नाश होने पर, फिर न आ सके, ऐसा कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिकभाव है।

प्रश्न 137- क्षायोपशमिकभाव का नाश होने पर, कौन -सा गुणस्थान होता है ?

उत्तर - तेरहवाँ और चोदहवाँ गुणस्थान होता है।

प्रश्न 138- एक बार नाश हो जावे, फिर कभी भी उत्पन्न ना हो, ऐसे भाव का क्या नाम है ?

उत्तर - औदयिकभाव है।

प्रश्न 139- राग, कौन-से भाव को बताता है ?

उत्तर - औदयिकभाव को बताता है।

प्रश्न 140- मतिज्ञान और श्रुतज्ञान, कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 141- मोक्ष, कौन-सा भाव है ?

उत्तर - पूर्ण क्षायिकभाव है।

प्रश्न 142- ज्ञानावरणीय द्रव्यकर्म का सम्पूर्ण नाश होने पर, कौन-सा भाव प्रगट होता है ?

उत्तर - ज्ञान का क्षायिकभाव, अर्थात् केवलज्ञान प्रगट होता है।

प्रश्न 143- औदयिकभाव के साथ सदा ही रहे, उस भाव का क्या नाम है ?

उत्तर - पारिणामिकभाव है।

प्रश्न 144- चौथे गुणस्थान से पहले न होवे, ऐसे कौन -कौन से भाव हैं ?

उत्तर - औपशमिकभाव, धर्म का क्षायोपशमिकभाव और क्षायिकभाव है।

प्रश्न 145- ग्यारहवें गुणस्थान के बाद ना होवे, ऐसा कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिकभाव है।

प्रश्न 146- बारहवें गुणस्थान के बाद में ना होवे ऐसा कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 147- सबसे कम समय रहनेवाला कौन-सा भाव है ?

उत्तर - औपशमिकभाव है।

प्रश्न 148- साधकभाव के कारणरूप, कौन-कौन से भाव होते हैं ?

उत्तर – औपशमिकभाव, श्रद्धा और चारित्र का क्षायिकभाव और धर्म का क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 149– साधकदशा की शुरुआत कौन से भाव से होती है ?

उत्तर – औपशमिकभाव से होती है।

प्रश्न 150– साधकदशा की पूर्णतावाला कौन-सा भाव है ?

उत्तर – क्षायिकभाव है।

प्रश्न 151– सीमन्धरभगवान को इस समय कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर – औदयिकभाव, क्षायिकभाव और पारिणामिकभाव हैं।

प्रश्न 152– महावीरभगवान को इस समय कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर – क्षायिकभाव और पारिणामिकभाव हैं।

प्रश्न 153– सीमन्धरभगवान के गणधर को इस समय कौन-कौन से भाव हो सकते हैं ?

उत्तर – औदयिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिकभाव हो सकते हैं।

प्रश्न 154– क्या भगवान के गणधर को उपशमश्रेणी नहीं होती है ?

उत्तर – नहीं होती है; क्योंकि वह उत्कृष्ट ऋद्धियों का स्वामी है।

प्रश्न 155– पाँच भावों में से बन्ध का कारण कौन-सा भाव है ?

उत्तर – औदयिकभाव है।

प्रश्न 156- पाँच भावों में से मोक्ष का कारण कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर - औपशमिक, क्षायिक और धर्म का क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 157- बन्ध-मोक्ष से रहित, भाव का क्या नाम है ?

उत्तर - पारिणामिकभाव है।

प्रश्न 158- औदयिकभाव कौन-कौन से गुणस्थानों में होता है ?

उत्तर - सभी गुणस्थानों में होता है।

प्रश्न 159- औपशमिकभाव के कौन-कौन से गुणस्थान हैं ?

उत्तर - चौथे गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थान तक हैं।

प्रश्न 160- क्षायोपशमिकभाव के कौन-कौन से गुणस्थान हैं ?

उत्तर - पहले गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक हैं।

प्रश्न 161- क्षायिकभाव कौन-कौन से गुणस्थान में हो सकता है ?

उत्तर - क्षायिकभाव चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान में हो सकता है।

प्रश्न 162- औपशमिकभाव वाले कितने जीव होते हैं ?

उत्तर - असंख्यात् होते हैं।

प्रश्न 163- संसार में औपशमिक करता, क्षायिक सम्यग्दृष्टिवाले कितने जीव हैं ?

उत्तर - असंख्यात् गुणा हैं।

प्रश्न 164- जगत में औपशमिक करता, क्षायिकभाववाले कितने जीव हैं ?

उत्तर - अनन्तगुणा अधिक हैं।

प्रश्न 165- वर्तमान में सीमन्धरभगवान में ना हो और हमारे में हो, ऐसा कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव है।

प्रश्न 166- वर्तमान में सीमन्धरभगवान में हो और हमारे में अभी न हो, वह कौन सा भाव है ?

उत्तर - क्षायिकभाव है।

प्रश्न 167- सीमन्धरभगवान में भी हो और हमारे में भी हो, ऐसे कौन-कौन से भाव हैं ?

उत्तर - औदयिकभाव और पारिणामिकभाव हैं।

प्रश्न 168- केवलज्ञान होने पर, आत्मा में से कौन-सा भाव निकल जाता है ?

उत्तर - क्षायोपशमिकभाव निकल जाता है।

प्रश्न 169- एक जीव, अरहन्त से सिद्ध हुआ तो कौन सा भाव पृथक हुआ ?

उत्तर - औदयिकभाव पृथक् हुआ।

प्रश्न 170- भाव होने पर भी बन्ध ना हो, क्या ऐसा हो सकता है ?

उत्तर - (1) क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन होने पर अभी कमी है परन्तु सम्यक्त्वमोहनीय का उदय होने पर भी, सम्यक्त्वसम्बन्धी बन्ध नहीं होता है।

(2) दसवें गुणस्थान में संज्वलन लोभकषाय होने पर भी और

चारित्रमोहनीय संज्वलन के लोभ का उदय होने पर भी, चारित्र –सम्बन्धी बन्ध नहीं होता है।

(3) बारहवें गुणस्थान में ज्ञान, दर्शन, वीर्य का क्षायोपशमिकभाव होने पर भी और ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय का क्षयोपशम होने पर भी, बन्ध नहीं होता है।

(4) तेरहवें और चोदहवें गुणस्थान में असिद्धत्व औदयिकभाव होने पर भी और अघातिकर्मों का उदय होने पर भी, बन्ध नहीं होता है।

यहाँ पर भाव होने पर भी, इस–इस प्रकार का बन्ध नहीं होता है; क्योंकि जघन्य अंश, बन्ध का कारण नहीं होता है – ऐसा भगवान उमास्वामी ने कहा है।

प्रश्न 171– कर्म किसे कहते है और वे कितने हैं ?

उत्तर – आत्मस्वभाव के प्रतिपक्षी स्वभाव को धारण करनेवाले निमित्तरूप कार्माणवर्गणा स्कन्धरूप परिणमन को द्रव्यकर्म कहते हैं। वे आठ हैं; ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अन्तराय।

प्रश्न 172– द्रव्यकर्म के मूलभेद कितने हैं ?

उत्तर – दो हैं – (1) घातिकर्म, और (2) अघातिकर्म।

प्रश्न 173– घातिकर्म किसे कहते हैं, वे कितने हैं ?

उत्तर – जो जीव के अनुजीवीगुणों के घात में निमित्तमात्र कारण हैं, उन्हें घातियाकर्म कहते हैं। घातिकर्म चार हैं – ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, और अन्तराय।

प्रश्न 174– अघातिकर्म किसे कहते हैं और कितने हैं ?

उत्तर – (1) जो आत्मा के अनुजीवीगुणों के घात में निमित्त नहीं है, उन्हें अघातिकर्म कहते हैं।

(2) जो आत्मा को पर वस्तु के संयोग में निमित्तमात्र कारण हों, उन्हें अघातिकर्म कहते हैं।

(3) जो आत्मा के प्रतिजीवीगुणों के घात में निमित्तमात्र हो, उन्हें अघातिकर्म कहते हैं। अघातिकर्म चार है - वेदनीय, आयु, नाम, और गोत्र।

प्रश्न 175- द्रव्यकर्म की पुण्य और पापरूप प्रकृति कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर - घातिकर्म प्रकृति सब पापरूप ही हैं और अघातिकर्मों में पुण्य-पाप का भेद पड़ता है।

प्रश्न 176- घाति पापप्रकृति होने पर भी, जीव पुण्यरूप परिणमन करे क्या ऐसा होता है ?

उत्तर - मोहनीयकर्मप्रकृति पापरूप ही है परन्तु मोहनीय-पापप्रकृति के उदय होने पर जीव, पुण्यभाव करे तो उस मोहनीय की पापरूप प्रकृति पर, पुण्यप्रकृति का आरोप आता है। वैसे मोहनीय, पापप्रकृति ही है; पुण्यप्रकृति नहीं है।

प्रश्न 177- अघातिकर्मों में कौन-कौन सी अवस्था होती है ?

उत्तर - उदय और क्षय, ये दो अवस्थाएँ होती हैं।

प्रश्न 178- अघातिकर्मों का उदय कब से कब तक रहता है और क्षय कब होता है ?

उत्तर - पहले गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक उदय रहता है और चौदहवें गुणस्थान के अन्त में अत्यन्त अभाव (क्षय) होता है।

प्रश्न 179- ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्म में कितनी-कितनी अवस्थाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन-तीन अवस्थाएँ होती हैं - उदय, क्षयोपशम, और क्षय।

प्रश्न 180- ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तरायकर्म में उदय, क्षयोपशम, और क्षय, कब से कब तक रहता है ?

उत्तर - (1) बारहवें गुणस्थान तक इनका क्षयोपशम है।

(2) बारहवें गुणस्थान तक जिस-जिस गुणस्थान में, जितनी-जितनी कमी है, वह उदय है।

(3) बारहवें गुणस्थान के अन्त में इन तीनों की क्षयअवस्था होती है।

प्रश्न 181- मोहनीयकर्म में कितनी अवस्था होती हैं ?

उत्तर - चार होती हैं - उदय, उपशम, क्षयोपशम, और क्षय।

प्रश्न 182- मोहनीयकर्म का उदय-उपशम-क्षयोपशम और क्षय, कौन-कौन से गुणस्थान में होता है ?

उत्तर - मोहनीयकर्म में - (1) चौथे से ग्यारहवें गुणस्थान तक उपशम हो सकता है।

(2) चौथे से दशवें गुणस्थान तक क्षयोपशम हो सकता है।

(3) चौथे से प्रारम्भ होकर बारहवें गुणस्थान तक क्षय हो सकता है।

(4) पहले से तीसरे गुणस्थान तक उदय रहता है।

प्रश्न 183- जीव के चारित्रगुण के परिणमन में औदयिक, क्षायोपशमिक, औपशमिक और क्षायिकपना, किस-किस प्रकार है ?

उत्तर - (1) चौथे गुणस्थान में अनन्तानुबन्धीकषाय के

अभावरूप क्षायोपशमिकभाव हुआ है, वह तो क्षायोपशमिकचारित्र है, बाकी औदयिकभावरूप है।

(2) पाँचवें गुणस्थान में अप्रत्याख्यानकषाय के अभावरूप क्षायोपशमिकभाव है, वह तो क्षायोपशमिकरूप देशचारित्र है, बाकी औदयिकभावरूप है।

(3) छठे गुणस्थान में तीन चौकड़ी कषाय के अभावरूप क्षायोपशमिकचारित्र है, वह तो सकलचारित्र है, बाकी औदयिक-भावरूप है।

(4) सातवें गुणस्थान में संज्वलन का मन्द उदय है, वह औदयिकभाव है और जो शुद्ध है, वह क्षायोपशमिकचारित्र है।

(5) दशवें गुणस्थान में संज्वलन के लोभ को छोड़कर, बाकी की क्षयोपशमदशा है, वह क्षायोपशमिकचारित्र है और लोभ का औदयिकभाव है।

(6) ग्यारहवें गुणस्थान में औपशमिकचारित्र है और बारहवें गुणस्थान में क्षायिकचारित्र है। चारित्र में क्षायिकपना होने पर, सादिअनन्त रहता है।

प्रश्न 184- ज्ञानगुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - (1) ज्ञानगुण की औदयिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक, तीन प्रकार की अवस्थाएँ, नैमित्तिक है और ज्ञानावरणीयकर्म का उदय, क्षयोपशम और क्षय - ये तीन प्रकार की अवस्थाएँ, निमित्त हैं।

(2) क्षयोपशम पहले गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक होता है, वह ज्ञान का क्षायोपशमिकभाव है और जितना-जितना उदयरूप है, वह औदयिकभाव है।

(3) तेरहवें गुणस्थान से सिद्धदशा तक क्षायिक केवलज्ञान-दशा है।

प्रश्न 185- ज्ञान की आठ पर्यायों में से क्षायोपशमिक-दशा कितनी पर्यायों में है ?

उत्तर - ज्ञान की सात पर्यायों में क्षायोपशमिकदशा है।

प्रश्न 186- ज्ञान की आठ पर्यायों में से क्षायिकदशा किस पर्याय में है ?

उत्तर - मात्र एक पर्याय में होती है और वह केवलज्ञान है।

प्रश्न 187- दर्शनगुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - दर्शनगुण की क्षायोपशमिक, औदयिक और क्षायिक तीन दशाएँ, नैमित्तिक हैं और दर्शनावरणीयकर्म की क्षयोपशम, उदय और क्षय, तीन दशाएँ निमित्त हैं।

प्रश्न 188- दर्शनगुण की चार पर्यायों में से क्षायोपशमिक और औदयिकपना कितनों में है ?

उत्तर - दर्शनगुण की तीन पर्यायों में क्षायोपशमिकपना है और क्षयोपशम के साथ जितना-जितना दर्शनावरणीयकर्म का उदय है, उतना-उतना औदयिकपना है।

प्रश्न 189- दर्शनगुण की चार पर्यायों में से क्षायिकदशा किस पर्याय में है ?

उत्तर - मात्र एक में और वह केवलदर्शन है।

प्रश्न 190- दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य की पर्यायों में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य, आत्मा के स्वतन्त्र

गुण हैं। इन सब गुणों की क्षायोपशमिक, औदयिक और क्षायिकदशा, नैमित्तिक है और अन्तरायकर्म की क्षयोपशम, उदय और क्षयदशा निमित्त है।

प्रश्न 191- दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य में क्षायोपशमिक और औदयिकदशा कहाँ से कहाँ तक है ?

उत्तर - पहले गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तब सबकी क्षायोपशमिकदशा है और जितना-जितना उदय है, उतना-उतना औदयिकभाव है।

प्रश्न 192- दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य में क्षायिकदशा कहाँ से कहाँ तक है ?

उत्तर - तेरहवें गुणस्थान से सिद्धदशा तक सबकी क्षायिकदशा है।

प्रश्न 193- श्रद्धागुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - श्रद्धागुण में औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक, और क्षायिक, चार प्रकार की दशा, नैमित्तिक है और दर्शनमोहनीय की उदय, उपशम, क्षयोपशम और क्षयदशा, निमित्त है।

प्रश्न 194- श्रद्धागुण की चार दशा का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर - (1) श्रद्धागुण की पहले से तीसरे गुणस्थान तक मिथ्यात्वस्वरूप औदयिकदशा है।

(2) चौथे से सातवें गुणस्थान तक प्रथम औपशमिक अवस्था है।

(3) आठवें से ग्यारहवें गुणस्थान तक द्वितीयोपशम अवस्था है।

(4) चौथे से सातवें गुणस्थान तक क्षायोपशमिकदशा है।

(5) चौथे गुणस्थान से सिद्धदशा तक क्षायिकदशा है। ये सब नैमित्तिक दशाएँ हैं।

प्रश्न 195- दर्शनमोहनीय की चार दशा का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर - (1) पहले से तीसरे गुणस्थान तक उदयरूप अवस्था है।

(2) चौथे से सातवें गुणस्थान तक प्रथम उपशमदशा है।

(3) आठवें से ग्यारहवें गुणस्थान तक द्वितीयोपशमदशा है।

(4) चौथे से सातवें गुणस्थान तक क्षयोपशमदशा है।

(5) चौथे गुणस्थान से सिद्धदशा तक क्षयरूपदशा है। ये सब निमित्त हैं।

प्रश्न 196- चारित्रगुण की पर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - चारित्रगुण में क्षायोपशमिक, औदयिक, औपशमिक और क्षायिकदशा, नैमित्तिक हैं और चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम, उदय, उपशम और क्षयदशा, निमित्त हैं।

प्रश्न 197- चारित्रगुण की पर्याय में पूर्ण विभावरूप परिणमन, कौन से गुणस्थान से कहाँ तक है तथा उसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - पहले से तीसरे गुणस्थान तक पूर्ण विभावरूप परिणमन है, ये औदयिकभाव नैमित्तिक है और चारित्रमोहनीय का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 198- चारित्रगुण के परिणमन में क्षायोपशमिक -चारित्र कौन से गुणस्थान से कौन से गुणस्थान तक है ?

उत्तर - चौथे से दशवें गुणस्थान तक क्षायोपशमिकचारित्र है, यह नैमित्तिक है और चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम, निमित्त है।

प्रश्न 199- औपशमिकचारित्र में निमित्त-नैमित्तिक क्या है और कौन से गुणस्थान में होता है ?

उत्तर - ग्यारहवें गुणस्थान में औपशमिकचारित्र प्रगट होता है, यह नैमित्तिक है और चारित्रमोहनीयकर्म का उपशम, निमित्त है।

प्रश्न 200- चारित्रगुण में क्षायिक परिणमन कब से कहाँ तक होता है तथा इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - बारहवें गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक का क्षायिक-परिणमन, नैमित्तिक है और चारित्रमोहनीयकर्म का क्षय, निमित्त है।

प्रश्न 201- चौथे गुणस्थान में तो शास्त्रों में असंयमभाव बताया, फिर क्षायोपशमिकचारित्र कैसे ?

उत्तर - जैसे, पाँचवें गुणस्थान में देशचारित्र और छठे गुणस्थान में सकलचारित्र नाम पाता है, वैसा चारित्र न होने की अपेक्षा असंयम कहा है परन्तु चौथे गुणस्थान में अनन्तानुबन्धी के अभावरूप, स्वरूपाचरणचारित्र होता है।

प्रश्न 202- चौथे गुणस्थान में क्षायोपशमिकचारित्र में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - स्वरूपाचरणचारित्र, नैमित्तिक और अनन्तानुबन्धी क्रोधादि का क्षयोपशम, निमित्त है।

प्रश्न 203- कर्मों के साथ 'सम्बन्धवाला' से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - 'सम्बन्धवाला' यह जीव का भाव है और द्रव्यकर्म, यह कार्माणवर्गणा का कार्य है। दोनों में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध होने से 'सम्बन्धवाला' शब्द जोड़ा है।

प्रश्न 204- कर्म, जीव को दुःख देता है, क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर – (1) बिल्कुल झूठ है; क्योंकि जड़कर्म स्पर्श-रस -गन्ध-वर्ण वाला है और आत्मा, स्पर्शादिक से रहित है; दोनों में अत्यन्ताभाव है।

(2) कर्म, दु:ख का कारण नहीं है, औदयिकभाव दु:ख का कारण है।

(3) कर्म में ज्ञान नहीं है, जीव में ज्ञान है। जड़कर्म, ज्ञानवन्त को दु:खी करे-क्या कभी ऐसा हो सकता है? कभी नहीं।

(4) श्री चन्द्रप्रभुभगवान की पूजा में आया है।

कर्म विचारे कौन, भूल मेरी अधिकाई,
अग्नि सहे घनघात, लोहे की सङ्गत पाई॥

अर्थ – कर्म बेचारा कौन? भूल तो मेरी ही बड़ी है। जिस प्रकार अग्नि, लोहे की सङ्गति करती है तो उसे घनों के आघात सहना पड़ते हैं; उसी प्रकार यदि जीव, कर्मोदय से युक्त हो तो उसे राग-द्वेषादि विकार होते हैं। (5) देव-गुरु-शास्त्र की पूजा में भी आया है कि 'जड़कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी'।

प्रश्न 205- क्या जीव को कर्म का उपशम, क्षयोपशम और उदय करना पड़ता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि कर्म की अवस्था का कर्ता, कार्माणवर्गणा है; जीव तथा दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 206- छद्मस्थ का क्या अर्थ है?

उत्तर – छद्म = आवरण। स्थ=स्थिति। अर्थात्, आवरणवाली स्थिति हो, उसे छद्मस्थ कहते हैं।

प्रश्न 207- छद्मस्थ के कितने भेद हैं?

उत्तर – दो भेद हैं – साधक और बाधक। तीसरे गुणस्थान तक बाधक हैं और चौथे से बारहवें गुणस्थान तक साधक हैं।

प्रश्न 208- पारिणामिकभाव को 320 गाथा जयसेनाचार्य की टीका में किस नाम से कहा है ?

उत्तर - 'सकलनिरावरण-अखण्ड-एक-प्रत्यक्ष-प्रतिभासमय अविनश्वर, शुद्ध-पारिणामिक-परमभाव लक्षण-निज परमात्मद्रव्य, वही मैं हूँ।' इस नाम से सम्बोधन किया है।

प्रश्न 209- मोक्ष का कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - शुद्ध पारिणामिकभाव का अवलम्बन लेने से जो शुद्धदशारूप औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव प्रगट होते हैं, जो व्यवहार रत्नत्रयादि से रहित हैं, वे शुद्ध उपादानकारण (क्षणिक उपादान) होने से मोक्ष के कारण हैं। यह प्रगटरूप मोक्ष की बात है।

प्रश्न 210- शुद्ध पारिणामिकभाव क्या है ?

उत्तर - ध्येयरूप है; ध्यानरूप नहीं है।

प्रश्न 211- शुद्ध पारिणामिकभाव ध्यानरूप क्यों नहीं है ?

उत्तर - ध्यान, विनश्वर है और शुद्ध पारिणामिकभाव तो अविनाशी है।

प्रश्न 212- ज्ञानी स्वयं ध्यानरूप परिणमित है तो वह किसका ध्यान करता है ?

उत्तर - एकमात्र त्रिकाली परम पारिणामिकभाव निज परमात्मा का ध्यान करता है।

प्रश्न 213- ज्ञानी की दृष्टि किस भाव पर होती है ?

उत्तर - ज्ञानी की दृष्टि, मात्र अपने अखण्डस्वभाव पर ही होती है। ज्ञानी की दृष्टि, शुद्धपर्याय पर भी नहीं होती, तब विकार और परद्रव्यों की तो बात ही नहीं है।

प्रश्न 214- हम तो ज्ञानी को संसार के कार्यों में प्रवर्तते हुए देखते हैं ?

उत्तर - जैसे - लड़की की दृष्टि, शादी के बाद माँ-बाप के घर आने पर भी, घर का सारा काम-काज करते हुए भी, अपने पति पर ही रहती है; उसी प्रकार ज्ञानी चाहे संसार के कार्यों में हों और कहीं युद्ध में हों, उनकी दृष्टि, एकमात्र अपने स्वभाव पर ही होती है।

प्रश्न 215- हमारा कल्याण कैसे हो ?

उत्तर - अनादिअनन्त त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव की दृष्टि करे तो धर्म की शुरुआत होकर, क्रम से वृद्धि होकर, सिद्ध परमात्मा बन जाता है।

प्रश्न 216- शुद्धोपयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - 'शुद्धात्माभिमुख परिणाम' को शुद्धोपयोग कहा है।

प्रश्न 217- आगमभाषा में शुद्धोपयोग किसे कहा जाता है ?

उत्तर - औपशमिकभाव, धर्म का क्षायोपशमिकभाव और क्षायिकभाव; इन भावों को शुद्धोपयोग कहा है।

प्रश्न 218- पाँच भावों का स्वरूप, पञ्चास्तिकाय में क्या बताया है ?

उत्तर - पञ्चास्तिकाय, गाथा ५६ में बताया गया है कि ''कर्मों का फलदान सामर्थ्यरूप से उदभव, सो 'उदय' है; अनुदभव 'उपशम' है; उदभव तथा अनुदभव सो 'क्षयोपशम' है; अत्यन्त विश्लेष (वियोग) सो क्षय है। द्रव्य का आत्मलाभ (अस्तित्व) जिसका हेतु है, वह 'परिणाम' है। वहाँ उदय से युक्त, वह 'औदयिक' है; उपशम से युक्त वह 'औपशमिक' है; क्षयोपशम से युक्त 'क्षायोपशमिक' है; क्षय से मुक्त, वह 'क्षायिक' है; परिणाम से युक्त, वह 'पारिणामिक'

है। कर्मोपाधिकी चार प्रकार की दशा (उदय, उपशम, क्षयोपशम और क्षय) जिनका निमित्त है, ऐसे चार भाव हैं और जिसमें कर्मोपाधिरूप निमित्त बिल्कुल नहीं है, मात्र द्रव्यस्वभाव ही का कारण है, ऐसा एक पारिणामिकभाव है।

जिन, जिनवर और जिनवरवृषभों द्वारा कथित पाँच असाधारण भावों का वर्णन पूरा हुआ।

— — — —

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

जन्म : सन् 1913
देह परिवर्तन : 19 दिसम्बर 2012
जन्मस्थान : ग्राम टिकरी, जिला मेरठ, उत्तरप्रदेश
पिता – श्री मिट्ठनलाल जैन
माता – श्रीमती भरतोदेवी जैन

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा, मथुरा-चौरासी एवं तत्पश्चात् जम्बू-विद्यालय, सहारनपुर में हुई। लघुवय में लाहौर में स्वतन्त्र व्यवसाय किया। देश के स्वाधीन होने के पश्चात्, स्वदेश वापिसी और बुलन्दशहर (उ०प्र०) में आजाद ट्रेडिंग कम्पनी के नाम से, पुस्तकों एवं स्टेशनरी का व्यवसाय किया। अपनी सहधर्मिणी श्रीमती विमलादेवी, चार पुत्रियों तथा एक पुत्र के साथ, पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वहन करते हुए, धर्ममार्ग पर गतिशील रहे।

सिद्धक्षेत्र श्री गिरनारजी की यात्रा के समय, सोनगढ़ में विराजित दिव्यविभूति पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के मंगल साक्षात्कार के उपरान्त, आपके जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हुआ। फलस्वरूप, निरन्तर तत्त्वाराधना एवं तत्त्वप्रचार ही आपके जीवन के अभिन्न अंग बन गये और सम्पूर्ण देश में तत्त्वज्ञान की पताका फहराने के लिये, आप एकाकी निकल पड़े।

पूज्य गुरुदेवश्री के मंगल प्रवचनों एवं माननीय श्री रामजीभाई दोशी एवं खेमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं में जो कुछ सीखा, उसे 'जैन-सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के, आठ भाग के रूप में संकलन का कार्य कर, जन-जन को जिनधर्म के गूढ़ रहस्य को साधारण भाषा में प्रस्तुत करने का अपूर्व कार्य किया।

आपकी तत्त्वज्ञान की प्रचार-प्रसार की उत्कृष्ट भावनाओं के फलस्वरूप, उन्हें क्रियान्वित करने हेतु, **तीर्थधाम मङ्गलायतन** के रूप में आपके स्वप्न को आपके परिवार व समग्र मुमुक्षु-समाज ने साकार किया। यहाँ से प्रकाशित मासिक-पत्रिका, **मङ्गलायतन** के आप आजीवन प्रधान सम्पादक रहे।

स्वाभिमानीवृत्ति के साथ ही, निर्भीकता, निस्पृहता, सिद्धान्तों पर अडिगता आदि आपके व्यक्तित्व की उल्लेखनीय विशेषताएँ रही हैं।

आपके उपकारों के प्रति नतमस्तक होते हुए, आपके श्रीचरणों में वन्दन समर्पित करते हैं, और आपकी इस अनुपम कृति को समाज के लाभार्थ प्रस्तुत कर रहे हैं।

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला